CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

10·6

पाइय-पज्ज-संगहो बीयो भागो

Selection in Prakrit Poetry Book II

(Prescribed by the Magadh University)

5053

Edited by :

Dr. N. C. Shastri

B. P. T. C. PUBLICATIONS
1962.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाइय-पज्ज-संगहो बीओ भागो

(प्राकृत-पद्य-संग्रह द्वितीय भाग)

मगध विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत पाठ्यग्रन्थ

WITH INTRODUCTION, GLOSSORY AND CRITICAL & GRAMMATICAL NOTES.

Edited by :

Prof. Dr. Nemichandra Shastri

M. A. (Sanskrit, Hindi & Prakrit) Gold Medallist, Ph. D.

Dept. of Sanskrit & Prakrit

H. D. JAIN COLLEGE, ARRAH

(Magadh University)

Published by :

Shri Subodh Kumar Jain

Hon. Sec., Bihar Prantiya Tirth Kshetra Committee,

Devashram, Arrah.

1962

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राप्ति स्थान :—

प्राकृत - साहित्य - परिषद्

एच० डी० जैन कालेज, आरा (शाहाबाद)

दि० जैन कोठी राजगिर (पटना)

प्रथम संस्करण १९६२

मूल्य २-५० रुपये

मुद्रक :

गया प्रिंटर्स, गया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

5053

विषय-सूची

१	भूमिका	१
२	भावना	८
३	अणहिलपुर वण्णणं	१२
४	दव्वं	१३
५	कसाय	१५
६	लेस्सा	१६
७	पेम्मवज्जा	१७
८	छइल्लवज्जा	१९
९	विनयसुत्तं	२०
१०	सीलवयं	२२
११	जूयदोसा	२४
१२	मज्जदोसा	२५
१३	मील-परिक्खणं	२६
१४	अगडदत्तकहा	३०
१५	शब्दकोष	५६
१६	परिशिष्ट	
	अगडदत्तकहा-कथावस्तु	६१
	शब्दार्थ और टिप्पणियाँ	१०८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भूमिका

कविता सदा से मानव के हृदय को प्रभावित एवं आन्दोलित करती आ रही है। नेत्रोन्मीलन से लेकर नेत्र संकोचन तक मनुष्य अपने हृदय की मधुर और मसृण भावनाओं की अभिव्यक्ति कविता द्वारा ही करता आ रहा है। यद्यपि बोल-चाल की भाषा गद्य है और यह भी सत्य है कि तर्क पूर्ण गम्भीर विचार गद्य में ही व्यक्त किये जाते हैं, पर हृदय को द्रवित करनेवाली भावनाएँ कविता में ही अभिव्यञ्जित रहती हैं। यही कारण है कि प्रत्येक भाषा में आचार, दर्शन और सिद्धान्त सम्बन्धी गूढ़ विचार भी कविता में ही व्यक्त किये गये हैं। काव्य का चरम लक्ष्य हृदय की भावुक-वृत्तियों को उद्बुद्ध करना है एवं व्यक्ति के राग-द्वेषों का परिमार्जन कर उसे स्वस्थ जीवन यापन की प्रेरणा देना है। यही कारण है कि प्राकृत में दर्शन, आचार और सिद्धान्त सम्बन्धी विचार भी कविता में व्यक्त किये गये हैं। यह बात नहीं कि इस कोटि की कविताओं में काव्यतत्त्वों का अभाव है, या मानव-हृदय को कोमल बनाने की क्षमता नहीं है; बल्कि काव्य के समस्त उपकरण विद्यमान हैं और मानव को शाश्वत सुख प्राप्त करने की बातें मधुर रूप में कही गयी हैं। इस संग्रह में वर्णनात्मक और भावात्मक दोनों ही प्रकार की कविताओं का संकलन किया गया है।

पहली कविता 'भावना' है। यह दार्शनिक है। इस कविता का लक्ष्य है कि इस प्रकार की विशुद्ध भावनाओं का चिन्तन किया जाय, जिससे प्राणी को आत्मस्वरूप समझ में आ जावे। संसार सुख से विरक्त होने के लिए एवं शरीर और इन्द्रिय भोगों की आसक्ति को छोड़ने के लिए द्वादश भावनाओं का चिन्तन परम आवश्यक है। समता भाव की जागृति इन भावनाओं के चिन्तन से होती है। अतः आत्मोत्थान और आत्मानुभूति प्राप्त करने के लिए भावनाओं का चिन्तन करना परम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आवश्यक है इन भावनाओं का दूसरा नाम अनुप्रेक्षा भी है। रागबुद्धि को घटाने में अनुप्रेक्षा या भावनाएँ अत्यधिक सहायक हैं।

दूसरी कविता में अणहिलपुर का साहित्यिक वर्णन निहित है। यह महाराष्ट्री की उत्कृष्ट कविता है। भाषा प्रौढ़ और समस्यन्त पदावली से युक्त है। धन-धान्य, नदी, सरोवर, गाँव-नगर आदि से युक्त अणहिलपुर राजधानी के रूप में सुशोभित है। कवि ने बड़ा सरस वर्णन किया है।

'दव्वं' शीर्षक कवितांश में द्रव्य के भेद-प्रभेदों का वर्णन किया गया है। द्रव्य के मूलतः दो भेद हैं, जीव और अजीव। अजीव द्रव्य के पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये पाँच भेद हैं। इस कवितांश में पाँच अजीव द्रव्य और जीव, इन छः द्रव्यों का विवेचन निहित है। द्रव्यों के स्वरूप, प्रदेश, कार्य आदि का निरूपण भी इसमें किया गया है।

'कसाय' कवितांश में कषाय की परिभाषा, उसके भेद एवं कार्यों का निर्देश किया है। जो जीव के कर्म रूपी क्षेत्र का कर्षण करती है, जिससे सुख-दुःख रूपी नाना प्रकार के धान्य उत्पन्न होते हैं, कषाय है। अथवा सम्यक्त्व, देशचारित्र, सकलचारित्र एवं यथाख्यातचारित्र रूपी परिणामों का जो घात करे, वह कषाय है। तथ्य यह है कि कषाय जीव की वह विकरमयी प्रवृत्ति है, जिससे आत्मा को कष्ट उत्पन्न होता है। क्रोध, मान, माया और लोभ ये चार कषाएँ हैं तथा इनके अवान्तर सोलह भेद होते हैं। जो व्यक्ति अपने उक्त विकारों को जीत लेता है, वही वास्तविक सुख प्राप्त करता है।

'लेस्सा' शीर्षक कविता दार्शनिक होते हुए भी आचार मूलक है। जिस प्रकार शरीर का वर्ण होता है, उसी प्रकार विकारमय रहने से आत्मा का भी। यद्यपि आत्मा मूलतः रूप, रस, गन्ध और स्पर्श से रहित है, तो भी क्रोधादि विकारों के कारण हिंसामयी प्रवृत्ति होने से विकारी आत्मा का वर्ण माना जाता है। आत्मा की हिंसामयी प्रवृत्ति के स्पष्टीकरण के लिए एक उदाहरण आया है। बताया है कि छः व्यक्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
5053

यात्रा के लिए गये। वे मार्ग भूलकर किसी वन में पहुँचे और वहाँ फलों से लदे एक वृक्ष को देख कर मन में सोचने लगे तथा बोले—पहला घोर स्वार्थी व्यक्ति कहता है कि मैं इस वृक्ष को मूल से उखाड़ कर इसके फलों का भक्षण करूँगा। इस नितान्त स्वार्थमयी प्रवृत्ति के कारण उस व्यक्ति की आत्म प्रवृत्ति को कृष्ण लेश्या कहा जायगा। दूसरा व्यक्ति विचारता है और कहता है कि मैं इस वृक्ष को स्कन्ध से काट कर इसके फल खाऊँगा। इस स्वार्थमयी हिंसक प्रवृत्ति के कारण उसे नील लेश्यावाला कहा जायगा। तीसरा व्यक्ति कहता है कि मैं इस वृक्ष की बड़ी-बड़ी शाखाओं को काट कर इसके फल खाऊँगा। उसकी इस हिंसक प्रवृत्ति के कारण उसे कापोत लेश्यावाला माना जायगा। चौथा व्यक्ति विचार करता है और कहता है कि इस वृक्ष की छोटी-छोटी शाखाओं को तोड़कर फल खाऊँगा। दूसरे व्यक्तियों की सुविधा का थोड़ा-सा ध्यान और अपने स्वार्थ की प्रवृत्ति के कारण इसे पीत लेश्यावाला कहा जायगा। पाँचवाँ व्यक्ति अन्य लोगों को कम से कम क्षति पहुँचे इस दृष्टि से केवल वृक्ष के फलों को तोड़कर खाने की इच्छा व्यक्त करता है, अतः वह पद्म लेश्यावाला है। छठा व्यक्ति समस्त प्राणियों की रक्षा का ध्यान रखते हुए वृक्ष से स्वयं टूट कर पड़े हुए फलों को खाने की इच्छा प्रकट करता है। कम से कम स्वार्थ और हिंसक प्रवृत्ति रहने से इसे शुक्ल लेश्यावाला माना जाता है। अभिप्राय यह है कि कषायोदय से अनुरंजित योग प्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं। लेश्या के कारण ही व्यक्ति पुण्य और पाप से अनुरक्त होता है। यह लेश्या ही कर्मबन्ध का कारण है। कृष्ण, नील, कापोत, पीत, पद्म और शुक्ल ये छः लेश्याएँ होती हैं।

इस कवितांश में विभिन्न लेश्याओं वाले व्यक्तियों की प्रवृत्तियों का सुन्दर विश्लेषण किया गया है। कृष्ण-लेश्या वाले व्यक्ति तीव्र क्रोधी लड़ाकू, निर्दय, क्रूर, शत्रुता को न छोड़नेवाले और हठी होते हैं। अविवेकी, लम्पटी, धोखेबाज और अत्यधिक विषयासक्त नील लेश्यावाले होते हैं। परनिन्दक, असहिष्णु, आत्मश्लाघा करनेवाले और दूसरों को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुःख देने की प्रवृत्ति रखनेवाले कापोत लेश्यावाले होते हैं। कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य, सेव्य-असेव्य के भेद को जानने वाले, दयालु और कोमल परिणामी पीत लेश्यावाले होते हैं। मन्दपरिणामी, दूसरों के उपद्रवों को सहन करनेवाले गुरुजनों से प्रेम और भक्ति करनेवाले पद्म लेश्यावाले होते हैं। पक्षपात से रहित, निष्काम कर्म करनेवाले, समदर्शी और जितेन्द्रिय व्यक्ति शुक्ल लेश्यावाले होते हैं।

'पेम्मवज्जा' में प्रेम की विशेषता पर प्रकाश डाला गया है। प्रेम का रंग विचित्र होता है, प्रेमी अपने प्रिय की प्राप्ति के लिए अपना सर्वस्व त्याग देता है। एकाङ्गी प्रेम कच्चे दाडिम फल—अनार के समान कषायला होता है, पर जिस प्रकार बीज उत्पन्न हो जाने से दाडिम मधुर हो जाता है, उसी प्रकार दोनों ओर प्रेम होने से प्रेम भी मधुर हो जाता है। जिस प्रकार सोपान पंक्ति पर क्रमशः आरोहण किया जाता है, उसी प्रकार आलाप, उल्लाप, संगम और कौतूहल द्वारा प्रेम को प्राप्त किया जाता है। व्यक्ति तभी तक सुखी रहता है, जब तक वह किसीसे प्रेम नहीं करता। जब व्यक्ति दूसरों से प्रेम करना आरम्भ करता है, उसी समय से उसके जीवन में दुःख आरम्भ हो जाते हैं। अदर्शन, अतिदर्शन, दर्शन होने पर भी वार्तालाप न करना, मान और प्रवास इन पाँच कारणों से प्रेम क्षीण हो जाता है। इस प्रकार प्रेम का सुन्दर विश्लेषण किया है।

'छइल्लवज्ज' में विदग्ध व्यक्तियों के निवास का महत्त्व बतलाया गया है। जिस गाँव में विदग्ध—चतुर व्यक्ति निवास करते हैं, वह ग्राम भी नगर बन जाता है। विदग्ध व्यक्ति ललित और मधुर काव्य कृतियों के द्वारा रस का संचार कर अपूर्व आनन्द प्रवाहित करता है। उसकी वक्रोक्तियों के द्वारा ग्राम भी नगर बन जाता है। नाना प्रकार की आपत्ति और विघ्नों के आने पर भी चतुर व्यक्ति अपने कार्य में शिथिल नहीं होते हैं। उनकी लग्न और दृढ़ता सभी कार्यों में सफलता प्रदान करती हैं। विदग्ध व्यक्ति संसार की समस्त बातों को जानते हैं, त्रिभुवन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं है, जिसे विदग्ध व्यक्ति न समझें। विदग्ध व्यक्तियों का स्नेह सदा एकसा रहता है। उनका जैसा व्यवहार पहले दिन होता है, वैसा ही उनका मधुर व्यवहार अन्तिम क्षण तक रहता है। कठोर भाषण और अप्रिय व्यवहार करना वह नहीं जानते हैं।

'विनय सुत्तम्' में विनय का वर्णन किया है। शिष्य के लिए गुरु के प्रति विनय रखना अत्यावश्यक है। जो गुरुओं की आज्ञा का पालन करनेवाला है, गुरुओं के समीप बैठनेवाला है, उनके कार्य को करने तथा उनके संकेत और आधार को भली भाँति जाननेवाला है, वही विनयवान कहा जाता है। गुरुजनों की आज्ञा को न माननेवाला, उनकी संगति न करनेवाला, उनके प्रतिकूल आचरण करनेवाला तथा तत्त्वार्थ के बोध से रहित अविनीत शिष्य कहलाता है। जिस प्रकार सड़े हुए कानोंवाली कुतिया घर आदि निवास योग्य स्थानों से निकाल दी जाती है, उसी प्रकार स्वेच्छाचारी, चारित्रभ्रष्ट अविनीत शिष्य भी गुरु के पास से निकाल दिया जाता है। जिस तरह चावलों के भाजन को छोड़कर शूकर विष्ठा का भक्षण करता है, उसी प्रकार पशु की भाँति अज्ञानी व्यक्ति सदाचार का परित्याग कर दुराचार का सेवन करता है। अतः हित चाहनेवाले व्यक्ति को गुरुओं के आदेशानुसार अपना व्यवहार करना चाहिए। विनयशील शिष्य को सदा शान्त और सहिष्णु होना चाहिए। गुरुजनों के पास में स्वार्थ और अज्ञानता को छोड़ विद्यार्जन करना और प्रमाद का त्याग करना व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

'सीलवयं' में सात शीलव्रतों का विवेचन है। तीन गुण व्रत और चार शिक्षाव्रत ये सात शीलव्रत कहलाते हैं। जो अणुव्रतों का उपकार करते हैं, उन्हें गुणव्रत और जिनके पालन से मुनिव्रत पालन करने की शिक्षा मिलती है, वे शिक्षाव्रत कहलाते हैं। दशों दिशाओं में आने-जाने का जीवन-पर्यन्त के लिए नियम और उस मर्यादा का उल्लंघन नहीं करना दिग्व्रत है। दिग्व्रत की सीमा के भीतर ही समय की मर्यादा के साथ ग्राम, गली, गृह, बाग, बाजार आदि के आश्रय में आने-जाने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

का प्रमाण करना देशव्रत है। जिन कार्यों के करने से आत्मिक लाभ न हो, ऐसे व्यर्थ के पापों के त्याग करने को अनर्थदण्डव्रत कहते हैं।

हृदय में समता भाव धारण करके तीनों कालों में सामायिक करना सामायिक शिक्षाव्रत है। प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशी को पाप-आरम्भ छोड़कर उपवास करना प्रोषधोपवास है। उत्तम प्रोषधोपवास में उपवास के पहले और पिछले दिन एक-एक एकाशन करना पड़ता है। भोग और उपभोग की वस्तुओं का आवश्यकतानुसार नियम करके शेष में ममता भाव को दूर करना भोगोपभोग परिमाण शिक्षाव्रत है। मुनि आदि अतिथि के लिए आहार, औषधि आदि के दान देने को अतिथि संविभाग शिक्षाव्रत कहते हैं। इन सात शीलव्रतों का पालन करना गृहस्थ के लिए आवश्यक है।

'जूयदोसा' में द्यूत—जुआ खेलने के दोषों का वर्णन है। जुआ खेलने वाले के क्रोध, मान, माया और लोभ आदि कषाएँ उत्पन्न होती हैं। यह इस लोक और परलोक में नाना प्रकार के कष्ट उठाता है। जुआरी संसार के हिंसा, झूठ, चोरी और कुशील सेवन प्रभृति सभी पापों को करता है, अतः जुआ को समस्त पापों में सब से बड़ा पाप माना गया है।

जुआ के समान ही मदिरापान भी अनेक दोषों की खान है। मद्य पीनेवाला व्यक्ति बेहोश हो नालिओं में पड़ा रहता है, कुत्ते उसका मुँह चाटते रहते हैं। अतः दुर्गति के कारण मदिरापान का त्याग करना चाहिए।

'सीलपरिक्खणं' में मन्दोदरी सीता को समझाकर अपने पति रावण में आसक्त करना चाहती है, पर सीता शीलव्रत की महत्ता बतलाती है और नारी के लिए शील के समान अन्यव्रत के न होने की बात कहती है। वास्तव में जीवन के लिए शील ही आभूषण है। जिस पुरुष या नारी ने शील का पालन किया है, वह अद्भुत शक्ति को प्राप्त करता है। ब्रह्मचर्य आत्मिक शक्ति का विकास करता है और मनुष्य की छुपी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुई समस्त शक्तियों को उद्बुद्ध कर देता है। अतः शील रक्षा व्यक्तित्व के विकास के लिए अत्यावश्यक है।

अगडदत्त कथा की कथावस्तु और संक्षिप्त आलोचना परिशिष्ट में दी जा रही है।

इस प्रकार इस संग्रह में कुल बारह कवितांश संग्रहीत हैं। ये सभी कवितांश सदाचार को उन्नत करनेवाले हैं, जीवन को परिष्कृत और सुरुचिपूर्ण बनाने की इनमें क्षमता है।

इस संग्रह को प्रकाशित करने का श्रेय बिहार प्रान्तीय तीर्थक्षेत्र कमेटि के मन्त्री श्री सुबोध कुमार जी जैन को है। मैं इनका हृदय से आभारी हूँ। आपका प्राकृत विषय के अध्ययन में निरन्तर सहयोग प्राप्त होता रहा है, अतः मैं पुनः आपको साधुवाद देता हूँ।

श्रुत पञ्चमी
आरा

—नेमिचन्द्र शास्त्री

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावना

तिहुवणतिलयं देवं वंदित्ता तिहुअणिंदपरिपुज्जं।
वोच्छं अणुपेहाओ भवियजणाणंदजणणीओ ॥१॥
अद्धुव असरण भणिया संसारामेगमण्णमसुइत्तं।
आसव संवर णामा णिज्जर लोयाणुपेहाओ ॥२॥
इय जाणिऊण भावह दुल्लह धम्माणुभावणा णिच्चं।
मण-वयण-कायसुद्धी एदा उद्देसदो भणिया ॥३॥

१ अध्रुव

जं किं पि वि उप्पण्णं तस्स विणासो हवेइ णियमेण।
परिणामसरूवेण वि ण य किं पि वि सासयं अत्थि ॥४॥
जम्मं मरणेण समं संपज्जइ जुव्वणं जरासहियं।
लच्छी विणाससहिया इय सव्वं भंगुरं मुणह ॥५॥
अथिरं परियण-सयणं पुत्तकलत्तं सुमित्त लावण्णं।
गिह-गोहणाइ सव्वं णवघणविंदेण सारिच्छं ॥६॥
सुरधणुतडि व्व चवला इंदियविसया सुभिच्चवग्गाय।
दिट्ठपणट्ठा सव्वे तुरय—गय—रहवरादीया ॥७॥
चइऊण महामोहं विसये सुणिऊण भंगुरे सव्वे।
णिव्विसयं कुणह मणं जेण सुहं उत्तमं लहइ ॥८॥

२ अशरण

तत्थ भवे किं सरणं जत्थ सुरिंदाण दीसए विलओ।
हरि-हर-बंभादीया कालेण कवलिया जत्थ ॥९॥
सीहस्स कमे पडिदं सारंगं जह ण रक्खदे को वि।
तह मिच्चुणा य गहियं जीवं पि ण रक्खदे को वि ॥१०॥
अप्पाणं पि य सरणं खमादि-भावेहि परिणदं होदि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिव्वकसायाविट्ठो अप्पाणं हणदि अप्पेण ॥११॥

३ संसार

एक्कं चजति सरीरं अण्णं गिण्हेदि णवणवं जीवो।
पुणु पुणु अण्णं अण्णं गिण्हदि मुंचेदि वहुवारं ॥१२॥
एक्कं जं संसरणं णाणादेहेसु हवदि जीवस्स।
सो संसारो भण्णदि मिच्छकसायेहिं जुत्तस्स ॥१३॥
इय संसारं जाणिय मोहं सव्वायरेण चइऊण।
तं झायह ससहावं संसरणं जेण णासेइ ॥१४॥

४ एकत्व

इक्को जीवो जायदि इक्को गब्भम्मि गिण्हदे देहं।
इक्को बाल-जुवाणो इक्को बुड्ढो जरागहिओ ॥१५॥
इक्को रोई सोई इक्को तप्पेइ माणसे दुक्खे।
इक्को मरदि वराओ णरयदुहं सहदि इक्कोवि ॥१६॥
सव्वायरेण जाणह इक्कं जीवं सरीरदो भिण्णं।
जम्हि दु मुणिदे जीवे होइ असेसं खणे हेयं ॥१७॥

५ अन्यत्व

अण्णं देहं गिण्हदि जणणी अण्णा य होदि कम्मादो।
अण्णं होदि कलत्तं अण्णो वि य जायदे पुत्तो ॥१८॥
एवं बाहिरदव्वं जाणदि रूवा हु अप्पणो भिण्णं।
जाणंतो विहु जीवो तत्थेव य रच्चदे मूढो ॥१९॥
जो जाणिऊण देहं जीवसरूपादु तच्चदो भिण्णं।
अप्पाणं पि य सेवदि कज्जकरं तस्स अण्णत्तं ॥२०॥

६ अशुचित्व

सयलकुहियाण पिंडं किमिकुलकलियं अउव्वदुग्गंधं।
मलमुत्ताणं गेहं देहं जाणेह असुइमयं ॥२१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुट्ठु पवित्तं दव्वं सरससुगंधं मणोहरं जं पि।
देहणिहित्तं जायदि घिणावणं सुट्ठु दुग्गंधं ॥२२॥
जो परदेहविरत्तो णियदेहे ण य करेदि अणुरायं।
अप्पसरूवि सुरत्तो असुइत्ते भावणा तस्स ॥२३॥

७ आस्रव

मण वयण-कायजोया जीवपयेसाण फंदणविसेसा।
मोहोदएण जुत्ता विजुदा विय आसवा होंति ॥२४॥
कम्मं पुण्णं पावं हेउं तेसिं च होंति सच्छिदरा।
मंदकसाया सच्छा तिव्वकसाया असच्छा हु ॥२५॥
सव्वत्थ वि पियवयणं दुव्वयणे दुज्जणे वि खमकरणं।
सव्वेसिं गुणगहणं मंदकसायाण दिट्ठंता ॥२६॥
अप्पपसंसणकरणं पुज्जेसु वि दोसगहणसीलत्तं।
वेरधरणं च सुइरं तिव्वकसायाण लिंगाणि ॥२७॥
एदे मोहजभावा जो परिवज्जेइ उवसमे लीणो।
हेयमिदि मण्णमाणो आसव-अणुपेहण तस्स ॥२८॥

८ संवर

सम्मत्तं देसवयं महव्वयं तह जओ कसायाणं।
एदे संवरणामा जोगाभावो तह च्चेव ॥२९॥
गुत्ती समिदी धम्मो अणुवेक्खा तह परीसजओ।
उक्किट्ठं चारित्तं संवरहेदू विसेसेण ॥३०॥
एदे संवरहेदू वियारमाणो वि जो ण आयरइ।
सो भमइ चिरं कालं संसारे दुक्ख-संतत्तो ॥३१॥
जो पुण विसयविरत्तो अप्पाणं सव्वदा वि संवरइ।
मणहरविसयेहिंतो तस्स फुडं संवरो होदि ॥३२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

९ निर्जरा

वारसविहेण तवसा णियाणरहियस्स णिज्जरा होदि।
वेरग्गभावणादो णिरहंकारस्स णाणिस्स ॥३३॥
सव्वेसिं कम्माणं सत्तिविवाओ हवेइ अणुभाओ।
तदणंतरं तु सडणं कम्माणं णिज्जरा जाण ॥३४॥
सा पुण दुविहा णेया सकालपत्ता तवेण कयमाणा।
चादुगदीणं पढमा वयजुत्ताणं हवे विदिया ॥३५॥
जो समसुक्खणिलीणो वारं वारं सरेइ अप्पाणं।
इंदिय-कसायविजई तस्स हवे णिज्जरा परमा ॥३६॥

१० लोक

सव्वायासमणंतं तस्स य बहुमज्झि संठियो लोओ।
सो केण वि णेय कओ ण य धरिओ हरिहरादीहिं ॥३७॥
दंसंति तत्थ अत्था जीवादीया स भण्णदे लोओ।
तस्स सिहरम्मि सिद्धा अंतविहीणा विरायंति ॥३८॥
परिणाम सहावादो पडिसमयं परिणमंति दव्वाणि।
तेसिं परिणामादो लोयस्स वि मुणह परिणामं ॥३९॥
एवं लोयसहावं जो झायदि उवसमेक्कसब्भावो।
सो खविय कम्मपुजं तस्सेव सिहामणि होदि ॥४०॥

११ बोधदुर्लभ

जीवो अणंतकालं वसइ णिगोएसु आइपरिहीणो।
तत्तो णीसरीऊणं पुढवीकायावियो होदि ॥४१॥
रयणु व्व जलहिपडियं मणुयत्तं तं पि होइ अइदुलहं।
मणुअगईए झाणं मणुअगईए वि णिव्वाणं ॥४२॥
इय सव्वदुलहदुलहं दंसण-णाणं तहा चरित्तं च।
मुणिऊण य संसारे महायरं कुणह तिण्हं वि ॥४३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१२ धर्म

जो जाणदि पच्चक्खं तियालगुण-पज्जएहिं संजुत्तं
लोयालोयं सयलं सो सव्वण्हू हवे देओ ॥४४॥
तेणुवइट्ठो धम्मो संगासत्ताण तह असंगाणं ।
पढमो बारहभेओ दसभेओ भासिओ विदिओ ॥४५॥
जिणवयणभावणट्ठं सामिकुमारेण परमसद्धाए ।
रइया अणुपेक्खाओ चंचलमणरुंभणट्ठं च ॥४६॥
बारस अणुपेक्खाओ भणिया हु जिणागमाणुसारेण ।
जो पठइ सुणइ भावइ सो पावइ उत्तमं सोक्खं ॥४७॥

२

अणहिलपुर वण्णणं

अत्थि मही-महिलाए मुहं महंतं मयंक-पडिविम्बं ।
जंवुद्दीव-छलेणं नहलच्छि दट्ठु सुन्नमियं ॥१॥
तुंगो नासा-वंसो व्व सोहए तियस-पव्वओ जत्थ ।
सीया-सीओयाओ दीहा दिट्ठीओ व सहंति ॥२॥
तत्थारोविय-गुण-धणु-निभं-नलाडं व भारहं अत्थि ।
जत्थ विरायइ विउलो वेयड्ढो रंयय-पट्टो व्व ॥३॥
जं गंग-सिन्धु सरिया मुत्तिय-सरियाहि संगयं सहइ ।
तीर-वण-पंति—कुन्तल—कलाव—रेहंत—पेरंतं ॥४॥
तत्थत्थि तिलय-तुल्लं अणहिलवाडय-पुरं घणसुवण्णं ।
पेरंत-मुत्तियावलि-समो सहइ जत्थ सिय-सालो ॥५॥
गरुओ गुज्जर-देसो नगरागर-गाम गोउइलाइन्नो ।
सुर-लोय-रिद्धि-मह-विजय-पंडियो मंडियो जेण ॥६॥
जंमि निरंतर-सुर-भवण-पडिम-ण्हवणंवु-पूर-सित्त व्व ।
सहला मणोरह-दुमा धम्मिय-लोयस्स जायंति ॥७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
5053

जत्थ संहति सुवन्ना कंचणा-कलसा य सुर-घर-सिरेसु।
गयण-ब्भम-खिन्न निसण्ण-खयरतरूणीण पीणथणा ॥८॥
अब्भंलिह-सुर-मंदिर-सिर-विलसिर-कणय-केयण-भुएहिं।
नच्चइ व जत्थलच्छी सुट्ठाण-निवेस-हरिस-वसा ॥९॥
जत्थ मणि-भवण-भित्तीसु पेच्छिउं अत्तणों वि पडिबिंबं।
पडिजुवइ-संकिरीओ कुप्पंति पिएसु मुद्धाओ ॥१०॥
जम्मि महा-पुरिसाणं धण-दाणं निरुवमं निएऊण।
अजहत्थ-नामओ लज्जिओ व्व दूरं गओ धणओ ॥११॥
जस्सिं समच्छ रमणा जलासया न उण धम्मिय समूहा।
कमलोवकारया सूर रस्सिणो न उण सप्पुरिसा ॥१२॥
जत्थ रमणीण रूवं रमणिज्जं पेच्छिऊण अमरीओ।
लज्जंतीओ चिंताइ कह वि निद्दं न पावंति ॥१३॥

—कुमारपाल प्रतिबोध

३

दव्वं

दव्वं जीवमजीवं जीवो पुण चेदणोवओगमओ।
पोग्गलदव्वप्पमुहं अचेदणं हवदि य अज्जीवं ॥१॥
पोग्गलजीवणिवद्धो धम्माधम्मत्थिकायकालड्ढो।
वट्टदि आगासे जो लोगो सो सव्वकाले दु ॥२॥
उप्पादट्ठिदिभंगा पोग्गलजीवप्पगस्स लोगस्स।
परिणामादो जायंते संघादादो व भेदादो ॥३॥
लिंगेहिं जेहिं दव्वं जीवमजीवं च हवदि विण्णादं।
तेअतब्भावविसिट्ठा मुत्तामुत्ता गुणा णेया ॥४॥
मुत्ता इंदियगेज्झा पोग्गलदव्वप्पगा अणेगविधा।
दव्वाणममुत्ताणं गुणा अमुत्ता मुणेदव्वा ॥५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वण्णरसगंधफासा विज्जंते पुग्गलस्स सुहुमादो ।
पुढवीपरियत्तस्स य सद्दो सो पोग्गलो चित्तो ॥६॥
आगासस्सवगाहो धम्मद्दव्वस्स गमणहेदुत्तं ।
धम्मेदरदव्वस्स दु गुणो पुणो ठाणकारणदा ॥७॥
लोगालोगेसु णभो धम्माधम्मेहि आददो लोगो ।
से से पडुच्च कालो जीवा पुण पोग्गला सेसा ॥८॥
जध ते णभप्पदेसा तधप्पदेसा हवंति सेसाणं ।
अपदेसो परमाणु तेण पदेसुब्भवो भणिदो ॥९॥
समओ दु अप्पदेसो पदेसमेत्तस्स दव्वजादस्स ।
वदिवददो सो वट्टदि पदेसमागासदव्वस्स ॥१०॥
वदिवददो तं देसं तस्सम समओ तदो परो पुव्वो ।
जो अत्थो सो कालो समओ उप्पण्णपद्धंसी ॥११॥
आगासमणुणिविट्ठं आगासपदेससण्णया भणिदं ।
सव्वेसिं च अणूणं सक्कदि तं देदुमवगासं ॥१२॥
एक्को व दुगे बहुगा संखातीदा तदो अणंता य ।
दव्वाणं च पदेसा संति हि समयत्ति कालस्स ॥१३॥
उप्पादो पद्धंसो विज्जदि जदि जस्स एकसमयम्हि ।
समयस्स सो वि समओ सभावसमवट्ठिदो हवदि ॥१४॥
इंदियपाणो य तधा बलपाणो तह य आउपाणो य ।
आणप्पाणप्पाणो जीवाणं होंति पाणा ते ॥१५॥
पाणेहिं चदुहिं जीवदि जीविस्सदि जो हि जीविदो पुव्वं ।
सो जीवो पाणा पुण पोग्गलदव्वेहिं णिव्वत्ता ॥१६॥
जीवो पाणणिबद्धो बद्धो मोहादिएहिं कम्मेहिं ।
उवभुंजं कम्मफलं बज्झदि अण्णेहिं कम्मेहिं ॥१७॥
पाणाबाधं जीवो मोहपदेसेहिं कुणदि जीवाणं ।
जदि सो हवदि हि बंधो णाणावरणादिकम्मेहिं ॥१८॥
आदाकम्ममलिमसो धरेदि पाणे पुणोपुणो अण्णे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ण चयदि जाव ममत्तं देहपधाणेसु विसयेसु ॥१९॥
जो इंदियादिविजई भवीय उवओगमप्पगं झादि।
कम्मेहिं सो ण रंजदि किह तं पाणा अणुचरंति ॥२०॥

—पवयणसार

४

कसाय

सुहदुक्खसुबहुसस्सं कम्मक्खेत्तं कसेदि जीवस्स।
संसारदूरमेरं तेण कसाओत्ति णं बेंति ॥१॥
सम्मत्तदेससयलचरित्त जहक्खादचरणपरिणामे।
घादंति वा कसाया चउसोलअसंखलोगमिदा ॥२॥
सिलपुढविभेदधुलिजलराइसमाणओ हवे कोहो।
णारयतिरियणरामरगईसु उप्पायओ कमसो ॥३॥
सेलट्ठिकट्ठवेत्ते णियभेएणणुहरंतओ माणो।
णारयतिरियणरामरगईसु उप्पायओ कमसो ॥४॥
वेणुवमूलोरब्भयसिंगे गोमुत्तए य खोरप्पे।
सरिसी माया णारयतिरियणरामरगईसु खिवदि जियं ॥५॥
किमिरायचक्कतणुमलहरिद्दाएण सरिसओ लोहो।
णारयतिरिक्खमाणुसदेवेसुप्पायओ कमसो ॥६॥
णारयतिरिक्खणरसुरगईसु उप्पण्णपढमकालम्हि।
कोहो माया माणो लोहुदओ अणियमो वापि ॥७॥
अप्पपरोभयबाधणबंधासंजमणिमित्तकोहादी।
जेसिं णत्थि कसाया अमला अकसाइणो जीवा ॥८॥

—गोम्मटसार जीवकाण्ड—कषायमार्गणा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

५

लेस्सा

लिंपइ अप्पीकीरइ एदीए णियअपुण्णपुण्णं च।
जीवोत्ति होदि लेस्सा लेस्सागुणजाणयक्खादा ॥१॥
जोगपउत्ती लेस्सा कसाय उदयाणुरंजिया होई।
तत्तो दोण्णं कज्जं बंधचउक्कं समुद्दिट्ठं ॥२॥
किण्हा णीला काऊ तेऊ पम्मा य सुक्कलेस्सा य।
लेस्साणं णिद्देसा छच्चेव हवंति णियमेण ॥३॥
वण्णोदयेण जणिदो सरीरवण्णो दु दव्वदो लेस्सा।
सा सोढा किण्हादी अणेयभेया सभयेण ॥४॥
छप्पयणीलकवोदसुहेमंवुजसंखसण्णिहा वण्णे।
संखेज्जासंखेज्जाणंतवियप्पा य पत्तेयं ॥५॥
पहिया जे छप्पुरिस्सा परिभट्ठारण्णमज्झदेसम्हि।
फलभरियरुक्खमेगं पेक्खित्ता ते विचिंतंति ॥६॥
णिम्मूलखंधसाहुवसाहं छित्तुं चिणित्तुपडिदाइं।
खाऊं फलाइं इदि जं मणेण वयणं हवे कम्मं ॥७॥
चंडो ण मुचइ वेरं भंडण सीलो य धम्मदयरहिओ।
दुट्ठो ण य एदि वसं लक्खणमेयं तु किण्हस्सा ॥८॥
मंदो बुद्धिविहीणो णिव्विण्णाणी य विसयलोलो य।
माणी मायी य तहा आलस्सो चेव भेज्जो य ॥९॥
णिद्दावंचणवहुलो धणधण्णे होदि तिव्वसण्णा य।
लक्खणमेयं भणियं समासदो णीललेस्सस्स ॥१०॥
रूसइ णिंदइ अण्णे दूसइ वहुसो य सोयभयवहुलो।
असुयइ परिभवइ परं पसंसये अप्पयं वहुसो ॥११॥
ण य पत्तियइ परं सो अप्पाणं यिव परं पि मण्णंतो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थूसइ अभित्थुवंतो ण य जाणइ हाणिवड्ढि वा ॥१२॥
मरणं पत्थेइ रणे देइ सुबहुगं वि थुव्वमाणो दु ।
ण गणइ कज्जाकज्जं लक्खणमेयं तु काउस्स ॥१३॥
जाणइ कज्जाकज्जं सेयमसेयं च सव्वसमपासी ।
दयदाणरदो य मिदू लक्खणमेयं तु तेउस्स ॥१४॥
चागी भद्दो चोक्खो उज्जवकम्मो य खमदि बहुगंपि ।
साहुगुरुपूजणरदो लक्खणमेयं तु पम्मस्स ॥१५॥
ण य कुणइ पक्खवायं णवि य णिदाणं समो य सव्वेसिं ।
णत्थि य रायद्दोसा णेहोवि य सुक्कलेस्सस्स ॥१६॥

—गोम्मटसारजीवकाण्ड लेश्या मार्गणा

६

पेम्मवज्जा

पेम्मं अणाइपरमत्थपयडणं महुमहो व्व बहुभेयं ।
मोहाणुरायजणयं अव्वो किं वन्दिओ निच्चं ॥१॥
आलावणेण उल्लावणेण सङ्गेण कोउहल्लेण ।
सोवाणपएहि व पिय—गुणेहि पेम्मं समारुहइ ॥२॥
आरम्भो जस्स इमो आसन्नासाससोसियसरीरो ।
परिणामो कह होसइ न याणिमो तस्स पेम्मस्स ॥३॥
दाणं न देइ न करेइ चाडुयं कहइ नेय सब्भावं ।
दंसणमेत्तेण वि किं पि माणुसं अमयसारिच्छं ॥४॥
जत्थ न उज्जग्गरओ जत्थ न ईसा विसूरणं माणं ।
सब्भावचाडुयं जत्थ न त्थि नेहो ताहि न त्थि ॥५॥
दाडिमफलं व पेम्मं एक्के पक्खे य होइ सकसायं ।
जाव न बीओ रच्चइ ता किं महुरत्तणं कुणइ ॥६॥
न तहा मारेइ विसं खजन्तं पलसयं पि कवलेहिं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जह चक्खुरायरत्तं मारेइ सविब्भमं पेम्मं ॥७॥
अव्वो जणामि अहं अत्तणहियएण अन्नहिययाइं।
मा को वि कह वि रच्चउ दुक्खुव्वहणाइ पेम्माइं ॥८॥
अद्दिट्ठे रणरणओ दिट्ठे इसा विडम्बणा नाह।
होइ न उज्जु व वङ्कं पेम्मं गह चञ्चु कीरस्सा ॥९॥
अद्दिट्ठे रणरणओ दिट्ठे ईसा सुहट्ठिए माणं।
दूरट्ठिए वि दुक्खं पिए जणे भण सुहं कत्तो ॥१०॥
ताव च्चिय होइ सुहं जाव न कीरइ पिओ जणो कोवि।
पियसङ्गो जेहि कओ दुक्खाण समप्पिओ अप्पा ॥११॥
दूरं गए वि कयविप्पिए वि अन्नत्थ बद्धराए वि।
जत्थ मणं नियत्तइ तं पेम्मं परिच्चओ सेसो ॥१२॥
सो सुवइ सुहं सो दुक्खवज्जिओ सो सुहाण सयखाणी।
वाए मणेण कायेण जस्स न हु वल्लहो को वि ॥१३॥
उल्लवउ कोवि महिमण्डलम्मि जो तेण न त्थि संणडियो।
खरपवणचाडुचालिर - दवग्गिसरिसेण पेम्मेण ॥१४॥
सो को वि न दीसइ सामलङ्गि एयम्मि दड्ढहयलोए।
जस्स समप्पिवि हिययं सुहेण दियहा गमिज्जन्ति ॥१५॥
अव्वो तहिं तहि च्चिय गयणं ममिऊण वीसमन्तेण।
बोहित्यवायसेण व हमाविया दड्ढपेम्मेण ॥१६॥
जाए माणप्पसरे फिट्टे नेहे गयम्मि सब्भावे।
अब्भत्थणाए पेम्मं कीरन्तं केरिसं होइ ॥१७॥
अद्दंसणेण अइदंसणेण दिट्ठे अणालवन्तेण।
माणेण पवसणेण व पञ्चविहं झिज्जए पेम्मं ॥१८॥
अद्दंसणेण वालय सुट्ठु वि नेहाणुबद्धमणसाणं।
हत्थउडपाणियाइ व कालेण गलन्ति पेम्माणि ॥१९॥
पेम्मस्स विरोहियसंधियस्स पच्चक्ख दिट्ठविलियस्स।
उययस्स व ताविवसीयलस्स विरसो रसो होइ ॥२०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ताव य पुत्ति छइल्लो जाव न पेम्मस्स गोयरे पडइ।
नेहेण नवरि छेयत्तणस्स मूला खणिज्जन्ति ॥२१॥

—वज्जालग्गं पृष्ठ—६८

७

छइल्लवज्ज

नयरं न होइ अट्टालएहि पायारतुङ्गसिहरेहिं।
गामो वि होइ नयरं जत्थ छइल्लो जणो वसइ ॥१॥
निवसन्ति जत्थ छेया ललियक्खरकव्वबन्धणे कुसला।
जाणन्ति वङ्कभणियं सुन्दरि नयरं न सो गामो ॥२॥
जो जम्पिऊण जाणइ जम्पियमत्तं च जाणए अत्थं।
देसो तेण पवित्तो अच्छउ नयरं वसन्तेण ॥३॥
गुरुविहवलङ्घिया अवि आवइ पत्ता वि आउरमणा वि।
सिविणन्तरे वि छेया नियकज्जं नेय सिढिलन्ति ॥४॥
अन्नं धरन्ति हियए अन्नं वायाए कीरए अन्नं।
छेयाण पत्थिवाण य खलाण मग्गो चिय अउव्वो ॥५॥
छेयाण जेहि कज्जं न हु होसइ जेहि जम्मलक्खे वि।
देहिं पि तेहि सरिसं-सरिसं च्चिय हुन्ति उल्लावा ॥६॥
सब्भाववाहिरेहिं तह कह वि पियक्खरेहि जम्पन्ति।
जह बन्धव त्ति कलिउं लोए सीसेहि वुब्भन्ति ॥७॥
दिट्ठीतुलाए भुवणं तुलन्ति जे चित्तचेलए निहियं।
को ताण छेयवाणिज्जयाण भण खण्डणं कुणइ ॥८॥
तं न त्थि तं न हूयं न हु होसइ जंच तिहुयणे सयले।
तं विहिणा वि न विहियं जं न हु नायं छइल्लहिं ॥९॥
जह पढमदिणे तह पच्छिमम्मि फरुसाइ नेय जम्पन्ति।
अव्वो महाणुभावा विरज्जमाणा वि दुल्लक्खा ॥१०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वहुकूडकवडभरियाण पुत्ति छेयाण जो पिडे पडइ।
सो सुन्नो सुन्नमणो सिविणे वि न पावए सुक्खं ॥११॥
जइ कहवि ताण छप्पणयाण तणुयङ्गि गोयरे पडसि।
ता थोरवसहदाहेक्कमण्डिया दुक्करं जियसि ॥१२॥
मा पुत्ति वङ्कवङ्कं जम्पसु पुरओ छइल्ललोयाणं हियए।
जंच निहित्तं तं पि हयासा मुणन्ति सबुद्धिए ॥१३॥
लीलावलोयणेण वि मुणन्ति जे पुत्ति हिययपरमत्थं।
ते कारिमउवायारेहि कह नु छेया छलिज्जन्ति ॥१४॥
सहसत्ति जं न दिट्ठो गरलमहाविहि जं न आलत्तो।
उवयारो जं न कओ तं चियकलियं छइल्लेहिं ॥१५॥

—वज्जालग्गं, पृष्ठ— ५६

८

विनयसुत्तम्

आणानिद्देसकरे, गुरूणमुववायकारए।
इंगियागारसंपन्ने, सेविणीए त्ति वुच्चई ॥१॥
आणाऽनिद्देसकरे, गुरूणमणुववायकारए।
पडिणीए असंबुद्धे अविणीए त्ति वुच्चई ॥२॥
जहा सुणी, पूइकन्नी निक्कसीज्जई सव्वसो।
एवं दुस्सीलपडिणीए, मुहरी निक्कसिज्जई ॥३॥
कणकुण्डगं चइत्ताणं विट्ठं भुंजइ सूयरे।
एवं सीलं चइत्ताण, दुस्सीले रमई मिए ॥४॥
सुणियाभावं साणस्स सूयरस्स नरस्स य।
विणए ठवज्ज अप्पाणं इच्छन्तो हियमप्पणो ॥५॥
तम्हा विणयमेसिज्जा, सीलं पडिलभेज्जओ।
बुद्धपुत्त नियागठ्ठी, न निक्कसिज्जइ कण्हुई ॥६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निस्सन्ते सियामुहरी, बुद्धाणं अन्तिए सया ।
अट्ठजुत्ताणि सिक्खज्जा निरट्ठाणि उ वज्जए ॥७॥
अणुसासिओ न कुप्पिज्जा खांति सेविज्ज पण्डिए ।
खुड्डेहिं सह संसग्गि हासं कीडं च वज्जए ॥८॥
मा य चण्डालियं कासी, वहुयं मा य आलवे ।
कालेण य अहिज्जित्ता, तओ झाइज्ज एगगो ॥९॥
आहच्च चण्डालियं कट्टु, न निण्हविज्ज कयाइवि ।
कडे कडे त्ति भासेज्जा, अकडं नो कडे त्ति य ॥१०॥
मा गलियस्सेव कसं, वयणमिच्छे पुणो पुणो ।
कसं व दट्ठुमाइण्णे, पावगं परिवज्जए ॥११॥
अणासवा थूलवया कुसीला, मिउंपि चण्डं पकरंति सीसा ।
चित्ताणुया लहुदक्खोववेया, पसायए ते हु दुरासयंपि ॥१२॥
नापुट्ठो वागरे किंचि, पुट्ठो वा नालियं वए ।
कोहं असच्चं कुव्वेज्जा, धारेज्जा पियमप्पियं ॥१३॥
अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो ।
अप्पा दन्तो सुही होइ, अस्सिं लोए परत्थ य ॥१४॥
वरं मे अप्पादन्तो, संजमेण तवेण य ।
माहं परेहिं दम्मंतो, बंधणेहिं वहेहि य ॥१५॥
न पक्खओ नपुरओ, नेव किच्चाण पिट्ठओ ।
न जुंजे ऊरुणा ऊरुं, सयणे नो पडिस्सुणे ॥१६॥
नेव पल्हत्थियं कुज्जा, पक्खपिण्डं च संजए ।
पाए पसारिए वावि, न चिट्ठे गुरुणन्तिए ॥१७॥
आयरिएहिं वाहित्तो, तुसिणीओ न कयाइवि ।
पसायपेही नियागट्ठी, उवचिट्ठे गुरुं सया ॥१८॥
आलवन्ते लवन्ते वा, न निसीएज्ज कयाइवि ।
चइऊणमासणं धीरो, जओ जत्तं पडिस्सुणे ॥१९॥
आसणगओ न पुच्छेज्जा, नेव सेज्जागओ कयाइवि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आगम्मुक्कडुओ सन्तो, पुच्छिज्जा पंजलीउडो ॥२०॥
मुसं परिहरे भिक्खू, न य ओहारिणीं वए।
भासादोसं परिहरे, मायं च वज्जए सया ॥२१॥
न लवेज्ज पुट्ठो सावज्जं न निरट्ठं न मम्मयं।
अप्पणट्ठा परट्ठा वा, उभयस्सन्तरेण वा ॥२२॥
समरेसु अगारेसु, सन्धीसु य महापहे।
एगो एगत्थिए सद्धिं, नेव चिट्ठे न संलवे ॥२३॥
जं मे बुद्धाणुसा सन्ति, सीएण फरूसेण वा।
मम लाभो त्ति पेहाए, पयओ तं पडिस्सुणे ॥२४॥
अणुसासणमोवायं, दुक्कडस्स य चोयणं।
हियं तं मण्णइ पण्णो, वेसं होइ असाहुणो ॥२५॥

॥ उत्तराध्ययन सूत्रम्
प्रथमाध्ययनम् ॥

६

सीलवयं

जह लोहणासणट्टं, संगपमाणं हवेइ जीवस्स।
सव्वं दिसिसु पमाणं, तह लोहं णासए णियमा ॥१॥
जं परिमाणं कीरदि, दिसाण सव्वाण सुप्पसिद्धाणं।
उवओगं जाणित्ता, गुणव्वयं जाण तं पढमं ॥२॥
कज्जं किंपि ण साहदि, णिच्चं पावं करेदि जो जोत्थे।
सो खलु हवे अणत्थो, पंचपयारो वि सो विविहो ॥३॥
परदोसाणं गहणं, परलच्छीणं समीहणं जं च।
परइत्थीआलोओ परकलहालोयणं पढमं ॥४॥
जो उवएसो दिज्जइ, किसिपसुपालणवणिज्जपमुहेसु।
पुरिसित्थीसंजोए, अणत्थदंडो हवे विदिओ ॥५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विहलो जो वावारो, पुढवीतोयाण अग्गिपवणाण ।
तहवि वणप्फदिछेओ, अणत्थदंडो हवे तिदिओ ॥६॥
मज्जारपहुदिधरणं, आयुधलोहादिविक्कणं जं च ।
लक्खाखलादिगहणं, अणत्थदंडो हवे तुरिओ ॥७॥
जं सवणं सत्थाणं, भंडणवसियरणकामसत्थाणं ।
परदोसाणं च तहा, अणत्थदंडो हवे चरमो ॥८॥
एवं पंचपयारं, अणत्थदंडं दुहावहं णिच्चं ।
जो परिहरेइ णाणी गुणव्वदी सो हवे विदिओ ॥६॥
जाणित्ता संपत्ती, भोयणतंबोलवत्थुमाईणं ।
जं परिमाणं कीरदि, भोउवभोयं वयं तस्स ॥१०॥
जो परिहरेइ संतं, तस्स वयं थुव्वदे सुरिंदेहिं ।
जो मणुलडडुव भक्खदि, तस्स वयं अप्पसिद्धियरं ॥११॥
सामाइयस्स करणं, खेत्तं कालं च आसणं विलओ ।
मणवयणकायुसुद्धी, णायव्वा हुंति सत्तेव ॥१२॥
जत्थ ण कलयलसद्दं, बहुजणसंघट्टणं ण जत्थत्थि ।
जत्थ ण दंसादीया, एस पसत्थो हवे देसो ॥१३॥
पुव्वण्हे मज्झण्हे, अवरण्हे तिहि वि णालियाछक्को ।
सामाइयस्स कालो, सविणयणिस्सेसणिद्दिट्ठो ॥१४॥
ण्हाणविलेवणभूसण, इत्थीसंसग्गगंधधूपदीवादि ।
जो परिहरेदि णाणी, वेरग्गाभरणभूसणं किच्चा ॥१५॥
दोसु वि पव्वेसु सया, उववासं एयभत्तणिव्वियडी ।
जो कुणइ एवमाई, तस्स वयं पोसहं विदियं ॥१६॥
तिविहे पत्तम्मि सया, सद्धाइगुणेहिं संजुदो णाणी ।
दाणं जो देदि सयं, णवदाणविहीहिं संजुत्तो ॥१७॥
भोयणदाणेण सोक्खं, ओसहदाणेण सत्थदाणं च ।
जीवाण अभयदाणं, सुदुल्लई सव्वदाणाणं ॥१८॥

—स्वामि कार्त्तिकेय—द्वादशानुप्रेक्षा गा० ३४१–३६२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१०

जूयदोसा

जूयं खेलंतस्स हु कोहो माया य माण-लोहा य।
एए हवंति तिव्वा पावइ पावं तदो वहुगं ॥१॥
पावेण तेण जर-मरण-वीचिपउरम्मि दुक्खसलिलम्मि।
चउगइगमणावत्तम्मि हिंडइ भवसमुद्दम्मि ॥२॥
तत्थ वि दुक्खमणंतं छेयण-भेयण विकत्तणाईणं।
पावइ सरणविरहिओ जूयस्स फलेण सो जीवो ॥३॥
ग गणेइ इट्ठमित्तं ण गुरुं ण य मायरं पियरं वा।
जूवंधो वुज्जाइं कुणइ अकज्जाइं वहुयाइं ॥४॥
सजणे म परजणे वा देसे सव्वत्थ होइ णिल्लज्जो।
माया वि ण विस्सासं वच्चइ जूयं रमंतस्स ॥५॥
अग्गि-विसचोर-सप्पा दुक्खं थोवं कुणंति इहलोए।
दुक्खं जणेइ जूयं णरस्स भवसयसहस्सेसु ॥६॥
अक्खेहि णरो रहिओ ण मुणइ सेसिंदिएहिं वेएइ।
जूयंधो ण य केण वि जाणइ संपुण्णकरणो वि ॥७॥
अलियं करेइ सवहं जंपइ मोसं भणेइ अइदुट्ठं।
पासम्मि वहिणि-मायं सिसुं पि हणेइ कोहंधो ॥८॥
ण य भुंजइ आहारं णिद्दं ण लहेइ रत्ति-दिण्णंति।
कत्थ वि ण कुणेइ रइं अत्थइ चिंताउरो णिच्चं ॥९॥
इच्चेवमाइवहवो दोसे णाऊण जूयरमणम्मि।
परिहरियव्वं णिच्चं दंसण गुणमुव्वहंतेण ॥१०॥

—वसुनन्दि-श्रावकाचार गाथा ६०—६९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

११

मज्ज दोसा

भज्जेण णरो अवसो कुणेइ कम्माणि णिंदणिज्जाइं।
इहलोए परलोए अणुहवइ अणंतयं दुक्खं ॥१॥
अइलंघिओ विचिट्ठो पडेइ रत्थाययंगणे मत्तो।
पडियस्स सारमेया वयणं विलिहंति जिब्भाए ॥२॥
उच्चारं पस्सवणं तत्थेव कुणंति तो समुल्लवइ।
पडिओ वि सुरा मिट्ठो पुणो वि मे देई मूढमई ॥३॥
जं किंचि तस्स दव्वं अजाणमाणस्स हिप्पइ परेहिं।
लहिऊण किंचि सण्णं इदो तदो धावइ खलंतो ॥४॥
जेणज्ज मज्झ दव्वं गहियं दुट्ठेण से जमो कुद्धो।
कहि जाई सो जिवंतो सीसं छिंदामि खग्गेण ॥५॥
एवं सो गज्जंतो कुविओ गंतूण मंदिरं णिययं।
घित्तूण लउडि सहसा रुट्ठो भंडाइं फोडेइ ॥६॥
णिययं पि सुयं वहिणिं अणिच्छमाणं वला विधंसेइ।
जंपइ अजंपणिज्जं ण विजाणइ किं पि मयमत्तो ॥७॥
इय अवराइं वहुसो काऊण वहूणि लज्जणिज्जाणि।
अणुबंधइ वहु पावं मज्जस्स वसंगदो संतो ॥८॥
पावेण तेण वहुसो जाइ-जरा-मरणसावयाइण्णे।
पावइ अणंतदुक्खं पडिओ संसारकंतारे ॥९॥
एवं वहुप्पयारं दोसं णाऊण मज्जपाणम्मि।
मण-वयण-काय-कय-कारिदाणुमोएहिं वज्जिज्जो ॥१०॥

—वसुनन्दि श्रावकाचार गा० ७०—७९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१२

सील-परिक्खणं

मंदोयरी पविट्ठा, दइयं दट्ठूण दीह-नीसासं।
भणइ "विसायं सामिय, मा वच्चसु दूसण-वहम्मि ॥१॥
अन्ने वि तुज्झ बंधू, एत्थेव मया जे न सोइया तुम्हे।
किं पुण दूसण-सोगं, सामि अपुव्वं समुव्वहसि ॥२॥
लज्जंतो भणइ तओ, "सुण सुन्दरी एत्थ सार-सब्भावं।
जइ नो रूसेसि तुमं तो हं साहेमि ससि-वयणे ॥३॥
सम्बुक्को जेण हओ, विवाइओ दूसणो य संगामे।
सीया तस्स महिलिया, हरिऊग मए इहाणीया ॥४॥
जइ नाम सा सुरूवा, न मए इच्छइ पइं मयण-तत्तं।
तो नत्थि जीवियं मे, तुज्झ पिए साहियं एवं" ॥५॥
दइयं एयावत्थं, दट्ठुं मन्दोयरी समुल्लवइ।
"महिला सा अ कयत्था, जा देव तुमंनपत्थेइ ॥६॥
अहवा सयल-तिहुयणे, सा एक्का रूव-जोव्वण-गुणड्ढा।
अइ-माण-गव्विएणं, जोइज्जइ जा तुमे सामि ॥७॥
केऊरभूसियासु इमासु बाहासु करिकर-समासु।
किह नवगूहऽसि सामिय, तं विलयं स-वलकारेणं ॥८॥
सो भणइ "सुणसु सुन्दरि, अत्थि इहं कारणं महागरुयं।
बल-गव्विओवि सन्तो, जेण न गिण्हामि पर-महिलं ॥९॥
पुव्वं मए किसोयरी, अणन्तवीरियस्स पायमूलम्मि।
साहु-पडिचोइएणं, कहवि य एक्कं वयं गहियं ॥१०॥
जा नेच्छइ पर-महिला, अ-पसन्ना जइवि रूव गुणपुण्णा।
सावि य मए बलेणं, न पत्थियव्वा सया-कालं ॥११॥
एएण कारणेणं, बला न गिण्हामि पर-गिह-त्थि हं।
मा मे निवित्ति-भङ्गो, होही पुव्वम्मि गहियाए ॥१२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अ-चलिय-अ-खण्डियाए, एस निवित्तीए नरय-पडिओ वि ।
उत्तारिज्जामि अहं, घडोव्व कूवम्मि रज्जूए ॥१३॥
मयण-सर-भिन्न हिययं, जइ जीवन्तं मए तुमं महसि ।
सुन्दरि आणेहि लहुं तं महिला-ओसहिं गन्तुं" ॥१४॥
एयावत्थ-सरीरं, कन्तं मन्दोयरी पलोएउं ।
जुवईहिं संपरिवुडा, चलिया जत्थच्छए सीया ॥१५॥
उज्जाणं सुर-रमणं, संपत्ता तत्थ पायव-समीवे ।
मन्दोयरीए दिट्ठा, जणयसुया वण-सिरी चेव ॥१६॥
आलविऊण निविट्ठा, जंपइ मन्दोयरी "सुणसु भद्दे ।
किं नेच्छसि भत्तारं, दहवयणं खेयराहिवइं ॥१७॥
महिगोयरस्स अत्थे. किं अच्छसि दुक्खिया तुमं वाले ।
अणुहवसु देह-सोक्खं, लद्धूण दसाणणं कन्तं ॥१८॥
जे राम-लक्खणा वि हु, तुज्झ हिए नियमेव उज्जुक्त ।
तेहिं पि किं व कीरइ, विज्जा-परमेसरे रूट्ठे" ॥१९॥
मन्दोयरीए एवं जं भणिया जणय-नन्दिणी वयणं ।
जाया गग्गर-कंठा, अंसु-जला-पुण्ण-नयण-जुया ॥२०॥
पडिभणइ तओ सीया, "सईअ किं एरिसाणि वयणाणि ।
जंपन्ति सुमहिलाओ, उत्तम-कुल-जाय-पुव्वाओ ॥२१॥
जइ पि हु इमं शरीरं, छिन्नं भिन्नं हयं च पुणरुत्तं ।
रामं मोत्तूण पई, तह विय अन्नं न इच्छामि ॥२२॥
जइ विअखंडलसरिसं, परपुरिसं सणंकुमार-रूवं पि ।
तं पि य नेच्छामि अहं, किंवा वहुएहिं भणिएहिं" ॥२३॥
एत्थंतरम्मि पत्ते दहवयणो मयण-वेयणुम्हविओ ।
सीयाए समब्भासे, अवट्ठिओ भणइ वयणाइं ॥२४॥
"सुन्दरि विन्नप्पं सुण, हीणो हं केण वत्थुणा ताणं ।
जेण मए भत्तारं, नेच्छसि सुइरं पि भणन्ती ॥२५॥
भणइ तओ जणय-सुया, "अवसर मा मे छिवेहि अंगाइं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विज्जाहराहम तुमं, कह जंपसि एरिसं वयणं" ॥२६॥
"मह जुवईण किसोयरि, होहि तुमं उत्तमा महादेवी ।
माणेहि विसय-सोक्खं, जहिच्छियं मा चरावेहिं" ॥२७॥
तो भणइ जणय-तणया, "समयं रामेण रणवासो य ।
अहियं मे कुणइ धिइं, सुर-वइ-लोगं विसेसेइ ॥२८॥
भूसण-रहिया वि सई, तीए सीलं तु मण्डणं होइ ।
सील-विहूणाए पुणो, वरं खु मरणं महिलियाए" ॥२९॥
जं एव निरगरिओ, माया काउं समुज्जओ सहसा ।
अत्थमिओ दिवसयरो, तावयं जायं तमन्धारं ॥३०॥
हत्थीसु केसरीसु य, वग्घेसु य भेसिया जणय-धूया ।
न य पडिवन्ना सरणं दसाणणं नेव सा खुहिया ॥३१॥
रक्खस-वेयालेसु य, अहियं भेसाविया वि नागेसु ।
न य पडिवन्ना सरणं दसाणणं नेव सा खुहिया ॥३२॥
एवं दसाणणेणं, भेसिज्जन्तीए वरगया रयणी ।
नासेन्तो वहल-तमं, ताव च्चिय उग्गओ सूरो ॥३३॥
तत्थेव वरुज्जाणे, ठियस्स सुहडा विभीसणाईया ।
सिग्घं च समणुपत्ता, पणमन्ति कमेण दहवयणं ॥३४॥
ताव य तहिं रुयन्ती, दट्ठूण विभीसणो जणय-धूयं ।
पुच्छइ "कहेहिभद्दे, दुहिया भज्जा व कस्स तुमं" ॥३५॥
सा भणइ "वच्छ निसुणसु, दुहिया जणयस्स नखरिन्दस्स ।
भामण्डलस्स वहिणी, राघव-घरिणी अहं सीया ॥३६॥
जाव य मज्झ पिययमो, गवेसणट्ठे गओ कणिट्ठस्स ।
ताव अहं अवहरिया, इमेण पावेण रणाओ ॥३७॥
जाव न वच्चइ मरणं, मह विरहे राघवो तहिं रणे ।
ताव इमो दहवयणो, नेऊण मए समप्पेउ" ॥३८॥
सुणिऊण तीए वयणं, विभीसणो भायरं भणइ एवं ।
"दित्ताणल-सम सरिसी किंपर-नारी समाणीया ॥३९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्नं पि सुणसु सामिय, तुज्झ जसो भमइ तिहुयणे सयले।
पर-नारि-पसङ्गेण मा अ-यस-कलङ्किओ होहि ॥४०॥
उत्तमपुरिसाण पहू, न य जुत्तं एरिसं हवइ कम्मं।
बहु-जण-दुगुञ्छणीयं, दोग्गइ-गमणं च परलोए ॥४१॥
पडिभणइ खेयरिन्दो, "किं परदव्वं महं वसुमईए।
दुप्पयचउप्पयवत्थु, जस्स न सामी अहं जाओ" ॥४२॥

—पउम चरियँ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१३

अगडदत्त कहा

अत्थि जए सुपसिद्धं संखउरं पुरवरं गुणसमिद्धं ।
तम्मि य राया जणजणियतोसओ सुन्दरो नाम ॥१॥
तस्स कुलरूवसरिसी समग्ग जणजणिय लोयणाणन्दा ।
अन्तेउरस्स पढमा सुलसा नामेण वरभज्जा ॥२॥
तीए कुच्छिपसूओ पुत्तो नामेण अगडदत्तो त्ति ।
अणुदियहं सो पवरं वड्ढन्तो जोव्वणं पत्तो ॥३॥

सो य केरिसो—

धम्मत्थदयारहिओ गुरुवयणविवज्जिओ अलियवाई ।
परमणिरमणकामो निस्संको माणसोण्डीरो ॥४॥
मज्जं पिएइ जूयं रमेइ पिसियं महुं च भक्खेइ ।
नडचेडयवेसाविन्दपरिगओ भमइ पुरमज्झे ॥५॥
अन्नम्मि दिणे रन्नो पुरवरलोएण वइयरो सिट्ठो ।
जह कुमरेण नराहिव नयरे असमंजसं विहियं ॥६॥
सुणिऊण पउरवयणं राया गुरुकोवजायरत्तच्छो ।
फुडभिउडिभासुरसिरो एयं भणिउं समाढत्तो ॥७॥
रे रे भणह कुमारं "सिग्घं चिय वज्जिऊण मह विसयं ।
अन्नत्थ कुणसु गमणं मा भणसु य जं न कहियं ति" ॥८॥
नाऊण वइयरं सो कुमारो चइऊण नियपुरं रम्मं ।
खग्गसहाओ चलिओ गुरुमाणपवड्ढियामरिसो ॥९॥
लंघित्ता गिरिसरिकाणणाइँ पुरगोट्ठगामवन्दाइं ।
नियनयराओ दूरे पत्तो वाणारसिं नयरिं ॥१०॥
तियचच्चरमाईसुं असहाओ भमइ नयरमज्झम्मि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चित्ते अमरिसजुत्तो करि व्व जूहाउ परिभट्ठो ॥११॥
हिण्डन्तेणं च तया पुरीएँ मग्गेसु रायतणएण ।
बहुतरुणनरसमेओ एक्को किल जाणओ दिट्ठो ॥१२॥

सो य केरिसो—

सत्थत्थकलाकुसलो विउसो भावन्नुओ सुगम्भीरो ।
निरओ परोवयारे किवालुओ रूवगुणकलिओ ॥१३॥
नामेण पवणचण्डो वाईणं न उण सीसाणं ।
सन्दणहयगयसिक्खं साहिन्तो निवसुयाण तहिं ॥१४॥
तस्स समीवम्मि गओ चरणजुयं पणमिउं समासीणो ।
"कत्तो सि तुमं सुन्दर" अह भणिओ पवणचण्डेण ॥१५॥
एगन्ते गन्तूणं सङ्कउराओ जहा विणिक्खन्तो ।
कहिओ तह वुत्तन्तो कुमरेणं पवणचण्डस्स ॥१६॥
चण्डेण तओ भणिओ अच्छसु एत्थं कलाउ सिक्खन्तो ।
परमत्तणो य गुज्झं कस्स वि मा सुयणु पयडेसु ॥१७॥
उट्ठेउं उज्झाओ पत्तो गेहम्मि रायसुयसहिओ ।
साहेइ महिलियाए "एसो मह भाउयसुओ" त्ति" ॥१८॥
ण्हविऊणं कुमरवरं दाऊणं पवरवत्थमाभरणं ।
तो भोयणावसाणे भणियमिणं पवणचण्डेण ॥१९॥
भवणधणं परिवारो सन्दणतुरयाइ सन्तियं मज्झ ।
सव्वं तुज्झायत्तं विलससु हियइच्छियं कुमर ॥२०॥
एवं सो किर संतुट्ठमाणसो मुक्कदूरववसाओ ।
चिट्ठइ तस्सेव घरे सव्वाउ कलाउ सिक्खन्तो ॥२१॥
गुरुयणगुरुविणयपवन्नमाणसो सयलजणमणाणन्दो ।
बावत्तरिं कलाओ गेण्हइ थेवेण कालेणं ॥२२॥
एवं सो कुमरवरो नायकलो परिसमं कुणेमाणो ।
भवणुज्जाणे चिट्ठइ अणुदियहं तप्परो धणियं ॥२३॥
उज्जाणस्स समीवे महाणसेट्ठिस्स सन्तियं भवणं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वायायणरमणीयं उत्तुङ्गमईव वित्थिण्णं ॥२४॥
तत्थत्थि सेट्ठिधूया मणोहरा मयणमञ्जरी नाम ।
सा घरसिरमारूढा अणुदियहं पेच्छए कुमरं ॥२५॥
अह तम्मि साणुराया अणवरयपलोयणं कुणेमाणी ।
विक्खिवइ कुसुमफलपत्तलेट्ठुए किं पि चिन्तन्ती ॥२६॥
हिययत्थं पि हु बालं कुमारो न निरिक्खए कलारसिओ ।
आसङ्काएँ गुरुणं विज्जाए गहणलोभेण ॥२७॥
अन्नदिणम्मि तीए वम्महसरपसरविहुरियमणाए ।
गहणे कलाण सत्तो पहओ उ असोगगुच्छेणं ॥२८॥
कुमरेण तम्मि दियहे सा बाला पलोइया य सविसेसं ।
कङ्केल्लिपल्लवन्तरियतणुलया संभमुब्भन्ता ॥२९॥

चिन्तियं च—

किं एसा अमरविलासिणी उ अह होज्ज नागकन्न व्व ।
कमल व्व किं नु एसा सरस्सई किं व पच्चक्खा ॥३०॥
अहवा पुच्छामि इमं कज्जेणं केण चिट्ठाई एत्थं ।
इय चिन्तिऊण हियए कुमारो पयडं इमं भणइ ॥३१॥
"का सि तुमं वरबाले ईसिं पयडेसि कीस अप्पाणं ।
विज्जागहणासत्तं कीस ममं सुयणु खोभेसि" ॥३२॥
सुणिउं कुमारवयणं वियसियदिट्ठीएँ विहसियमुहीए ।
पयडन्तदन्तकिरणावलीएँ तीए इमं भणियं ॥३३॥
"नयरपहाणस्स अहं धूया सेट्ठिस्स वन्धुदत्तस्स ।
नामेण मयणमञ्जरी इह चेव विवाहिया नयरे" ॥३४॥
जद्दिवसाओ दिट्ठो सुन्दर तं कुसुमचावसारिच्छो ।
तद्दियहाओ मज्झं असुहतरू वड्ढिओ हियए ॥३५॥

जेण—

निद्दा वि हु नट्ठा लोयणाण देहम्मि वड्ढिओ दाहो ।
असणं पि नो य रुच्चइ गुरुवियणा उत्तमङ्गम्मि ॥३६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ताव च्चिय होइ सुहं जाव न कीरइ पिओ जणो को वि ।
पियसङ्गो जेण कओ दुक्खाण समप्पिओ अप्पा ॥३७॥
पेरिज्जन्तो उ पुराकएहि कम्मेहि केहि वि वराओ ।
सुहमिच्छन्तो दुल्लहजणाणुराए जणो पडइ ॥३८॥
ता जइ मए समाण सङ्गं न य कुणसि तरुणिमणहरणं ।
होहं तुह नियवज्झा फुडं जओ नत्थि मे जीयं" ॥३९॥
सो निसुणिऊण वयणं तीए बालाएँ चिन्तए हियए ।
मरइ फुडं च्चिय एसा मयणमहाजलणदड्ढङ्गी ॥४०॥
निसुणिज्जइ पयडमिणं भारहरामायणेसु सत्थेसु ।
जह दस कामावत्था होन्ति फुडं कामुयजणाणं ॥४१॥
पढमा जणेइ चिन्तं बीयाए महइ संगमसुहं ति ।
दीहुण्हा नीसासा हवन्ति तइयाएँ वत्थाए ॥४२॥
जरयं जणइ चउत्थी पञ्चमवत्थाएँ डज्झए अङ्गं ।
न य भोयणं च रुचइ छट्ठावत्थाएँ कामिस्स ॥४३॥
सत्तमियाए मुच्छा अट्ठमवत्थाएँ होइ उम्माओ ।
पाणाण य संदेहो नवमावत्थाएँ पत्तस्स ॥४४॥
दसमावत्थाएँ गओ कामी जीवेण मुच्चए नूणं ।
ता एसा मह विरहे पाणाण वि संसय काही ॥४५॥
परिभाविऊण हियए रायकुमारेण भावकुसलेणं ।
भणिया सिणेहसारं सा बाला महुरवयणेण ॥४६॥
"सुन्दरि सुन्दररन्नो सुन्दरचरियस्स विउलकित्तिस्स ।
नामेण अगडदत्तं पढमसुयं मं वियाणेहि ॥४७॥
कलयायरियसमीवं कलगहणत्थं समागओ एत्थ ।
पविसिस्सं जम्मि दिणे तए वि घेत्तुं गमिस्सामि" ॥४८॥
कह कह वि सा मयच्छी वम्महसरपसरसल्लियसरीरा ।
एमाइ बहुपयारं भणिऊण कया समासत्था ॥४९॥
सो रायसुओ तत्तो तीए गुणरूवरञ्जियमणो हु ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नियनिलए संपत्तो चिन्तन्तो संगमोवायं ॥५०॥
अन्नम्मि दिणे सो रायनन्दणो वाहियाएँ मग्गेणं ।
तुरयारूढो वच्चइ ता नयरे कलयलो जाओ ॥५१॥

अवि य—

किं चलिउ व्व समुद्दो किं वा जलिओ हुयासणो घोरो ।
किं पत्तं रिउसेन्नं तडिदण्डो निवडिओ किं वा ॥५२॥
एत्थन्तरम्मि सहसा दिट्ठो कुमरेण विम्हियमणेण ।
मयवारणो उ मत्तो निवाडियालाणवरखम्भो ॥५३॥
मिण्ठेण वि परिचत्तो मारेन्तो सोण्डगोयरं पत्ते ।
सवडंमुहं चलन्तो कालो व्व अकारणे कुद्धो ॥५४॥
तुट्टपयबन्धरज्जू संचुण्णियभवणहट्टदेवउलो ।
खणमेत्तेण पयण्डो सो पत्तो कुमरपुरओ त्ति ॥५५॥
तं तारिसरूवधरं कुमरं दट्ठूण नायरजणेहि ।
गहिरसरेणं भणिओ ओसर ओसर करिपहाओ ॥५६॥
कुमरेण वि नियतुरयं परिच्चइऊणं सुदक्खगइगमणं ।
हक्कारिओ गइन्दो इन्दगइन्दस्स सारिच्छो ॥५७॥
सुणिउं कुमारसद्दं दन्ती पज्झरियमयजलपवाहो ।
तुरिओ पहाविओ सो कुद्धो कालो व्व कुमरस्स ॥५८॥
कुमरेण य पाउरणं संवेल्लेऊण हिट्ठचित्तेण ।
धावन्तवारणस्सा सोण्डापुरओ उ पक्खित्तं ॥५९॥
कोवेण धमधमेन्तो दन्तच्छोभे य देइ सो तम्मि ।
कुमरो वि पिट्ठभाए पहणइ दढमुट्ठिपहरेणं ॥६०॥
ता ओधावइ धावइ चलइ खलइ परिणओ तहा होइ ।
परिभमइ चक्कभमणं रोसेणं धमधमेन्तो सो ॥६१॥
अइव महन्तं वेलं खेल्लावेऊण तं गयं पवरं ।
नियवसे काऊणं आरूढो ताव खन्धम्मि ॥६२॥
अह तं गइन्दखेड्डुं मणोहरं मयलनयरलोयस्स ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्तेउरसरिसेणं पलोइयं नरवरिन्देणं ॥६३॥
दट्ठुं कुमरं गयखन्धसंठियं सुरवइं व सो राया।
पुच्छइ नियभिच्चयणं को एसो गुणनिही बालो ॥६४॥
तेएणं अहिमयरो सोमत्तणएण तह य निसिनाहो।
सव्वकलागमकुसलो वाई सूरो सुरूवो य ॥६५॥
एक्केण तओ भणियं "कलयायरियस्स मन्दिरे एसो।
कलपरिसमं कुणन्तो दिट्ठो मे तत्थ नरनाह" ॥६६॥
तो सो कलयायरिओ नरवइणा पुच्छिओ हरिसिएणं।
को एसो वरपुरिसो गयवरसिक्खाएँ अइकुसलो ॥६७॥
अभयं परिमग्गेउं कलयायरिएण कुमरवुत्तन्तो।
सविसेसं परिकहिओ नरवइणो बहुजणजुयस्स ॥६८॥
तं निसुणिऊण राया नियहियए गरुयतोसमावन्नो।
संपेसइ पडिहारं कुमरं आणेहि मम पासं ॥६९॥
गयखन्धपरिट्ठियओ अह सो भणिओ य दारवालेणं।
"हक्कारइ नरनाहो आगच्छसु कुमार रायउलं" ॥७०॥
रायाएसेण तओ हत्थिं खम्भम्मि आगलेऊणं।
कुमरो ससङ्कहियओ पत्तो नरनाहपासम्मि ॥७१॥
जाणूकरुत्तमङ्गे महीऍ विणिहित्तु गरुयविणएणं।
जाव न कुणइ पणामं अवगूढो ताव सो रन्ना ॥७२॥
तम्बोलासणसंमाणदाणपूयाइपूइओ अहियं।
कुमरो पसन्नहियओ उवविट्ठो रायपासम्मि ॥७३॥
तओ चिन्तियं राइणा "उत्तमपुरिसो एसो। जओ—
विणओ मूलं पुरिसत्तणस्स मूलं सिरीऍ ववसाओ।
धम्मो सुहाण मूलं दप्पो मूलं विणासस्स ॥७४॥
अन्नं च—
को चित्तेइ मऊरं गइं च को कुणइ रायहंसाणं।
को कुवलयाण गन्धं विणयं च कुलप्पसूयाणं ॥७५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवि य—

सालो भरेण तोएण जलहरा फलभरेण तरुसिहरा ।
विणएण य सप्पुरिसा नमन्ति न हु कस्स वि भएण" ॥७६॥
तो विणयरञ्जिएणं कुसलपउत्तीउ पुच्छिओ कुमरो ।
रन्ना कलाण गहणं सविसेसं तह य पुट्ठं ति ॥७७॥
नियगुणगहणं पयडेइ नो य लज्जाएँ जाव सो ताव ।
उज्झाएणं भणियं "पहु, निउणो एस सव्वत्थ ॥७८॥

परं महाराय—

नियगरुयपयावपसंसणेण लज्जन्ति जे महासत्ता ।
इयरा पुण अलियपसंसणे वि अङ्गे न मायन्ति" ॥७९॥
एवं च तस्स रन्नो कुमारचरियम्मि खित्तचित्तस्स ।
ता सयलो पुरलोओ समागओ रायपासम्मि ॥८०॥
वररयणअम्बराइं सुयन्धकुसुमाइँ फलसणाहाइं ।
मुक्काइँ रायपुरओ पउरेणं परिहवगएणं ॥८१॥
तं पुरजणकोसल्लं नरवइणा अप्पियं कुमारस्स ।
अह ते कयपणिवाया विन्नत्तिं काउमारद्धा ॥८२॥

तं जहा—

"देव इमं तुह नयरं कुवेरपुरविहवअहितधणनिवहं ।
कइवयदिणाण मज्झे चोरस्स वि मन्दिरं जायं ॥८३॥
केणावि तक्करेणं दुट्ठेणं खत्तचारनिउणेणं ।
मुट्ठं नरवर नयरं एण्हिं रक्खेसु किं बहुणा" ॥८४॥
कडुयवयणेहि भणिओ रन्ना आरक्खिओ पुरवरस्स ।
"रे रे पेच्छन्तस्स वि मुट्ठं सव्वं पि तुह नयरं" ॥८५॥
अह विन्नत्तं तेणं "देव अणेगाणि अम्ह दियहाणि ।
जोयन्ताणं चोरं तह वि हु कत्थइ न सो दिट्ठो" ॥८६॥
एत्थन्तरम्मि राया विन्नत्तो अगडदत्तकुमरेणं ।
"पहु देहि ममाएसं लहेमि पुरतक्करं सिग्घं ॥८७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मज्झे सत्तदिणाणं पुरचोरं नो लहामि जइ नाह ।
तो जलियजलणजालावलीसु जालेमि नियदेहं" ॥८८॥
एयं कुमारवयणं नरवइणा निसुणिऊण सपइन्नं ।
अणुमन्निऊण भणिओ "सिज्झेउ समीहियं तुज्झ" ॥८९॥
अह सो गहियपइन्नो रायाणं पणमिउं अणुव्विग्गो ।
परिभमइ नयरमज्झे जोयन्तो तक्करनिवासे ॥९०॥

अवि य—

वेसाण मन्दिरेसुं पाणागारेसु जूयठाणेसु ।
कुल्लूरियावणेसु य उज्जाणनिवाणसालासु ॥९१॥
मढसुन्नदेउलेसुं चच्चरचउहट्टहट्टसालासु ।
तक्करगमं नियन्तो हिण्डइ एक्कल्लओ कुमरो ॥९२॥
ता जा छट्टो दियहो वोलीणो नो य तक्करो दिट्टो ।
सत्तमदिणम्मि कुमरो गहिओ चिन्ताएँ सविसेसं ॥९३॥
किं वच्चामि विदेसं किं वा तायस्स अन्तियं जामि ।
हरिऊण तं मयच्छिं किं वा रण्णम्मि गच्छामि ॥९४॥
किं तु न जुत्तं एयं निम्मलकुलसंभवाण पुरिसाण ।
जं किर नियजीहाए पडिवन्नं अन्नहा होइ ॥९५॥

जेण—

छिज्जउ सीसं अह होउ वन्धणं वयउ सव्वहा लच्छी ।
पडिवन्नपालणे सुपुरिसाण जं होई तं होउ ॥९६॥
नेयं महव्वयं खलु नरट्ठिसुद्दाएँ जं समुव्वहणं ।
पडिवन्नपालणं चिय महव्वयं धीरपुरिसाणं ॥९७॥
एवं च वहुवियप्पे नियमणे भाविऊण सो कुमरो ।
अवरण्हयवेलाए पुरस्स वाहिम्मि संपत्तो ॥९८॥
एगस्स पवरकिसलयसमूहसुविलस्स सीयछायस्स ।
उत्तुङ्गवियडसाहाउलस्स सहयाररुक्खस्स ॥९९॥
उवविट्ठो चिट्ठइ हेट्ठयम्मि चिन्ताभरेण सुढियङ्गो ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जोयन्तो दिसिचक्कं विज्जाभट्ठो व्व खयरिन्दो ॥१००॥
एत्थन्तरम्मि एगो सहसा परिवायगो समणुप्पत्तो ।
कयधाउवत्थवेसो मुण्डियसिरकुच्चसच्चूलो ॥१०१॥
दण्डत्तियकुण्डीचमरसंगओ तह गणेत्तियाहत्थो ।
किं किं पि मुणमुणिन्तो संपत्तो कुमरपुरओ त्ति ॥१०२॥
करिसोण्डाभुयदण्डो विसालवच्छत्थलो फरुसकेसी ।
नवजोव्वणो रउद्दो रत्तच्छो दीहजंघो य ॥१०३॥
निज्झाइऊण अह सो सासङ्को चिन्तए मणे कुमरो ।
एवंविहरूवेणं हविज्ज एसो फुडं चोरो ॥१०४॥
एत्थन्तरम्मि तेणं भणिओ कुमरो पिएहि वयणेहिं ।
"कत्तो सि तुमं सुपुरिस केण व कज्जेण चिट्ठे सि" ॥१०५॥
नाऊण तस्स भावं भणियं कुमरेण बुद्धिनिउणेणं ।
"दालिद्देणक्कन्तो भमामि नयरीएँ सुन्नमणो" ॥१०६॥
"मा सोयसु पुत्त तुमं अज्जं छिन्दामि तुज्झ दालिद्दं ।
देमि समीहियदव्वं" भणियं परिवायगेणं ति ॥१०७॥
कुमरेणं संलत्तं - "तुम्हाणं चेव पयपसाएणं ।
नासइ मह दालिद्दं संपज्जइ ईहियं कज्जं" ॥१०८॥
एवं जम्पन्ताणं नयणपहं वज्जिऊणं दिवसयरो ।
अद्दंसणमावन्नो दोसभएणं व सप्पुरिसो ॥१०९॥
संभुज्जोयम्मि गए पयडीहूयम्मि रयणितमनियरे ।
कड्ढेउं कोसाओ करवालं दारुणायारं ॥११०॥
तुरियगई संचलिओ सो कुमरं भणइ एहि मह पिट्ठं ।
जेण समीहियकज्जं सव्वं कारेमि किं वहुणा ॥१११॥
ताव य दोन्नि वि सिग्घं संपत्ता नयरिमज्झयारम्मि ।
परिभमिऊणं थोवं उवविट्ठा एगदेसम्मि ॥११२॥
परिवायगेण ताव य ईसरवणियस्स मन्दिरे तुङ्गे ।
सुहभेयभित्तिभाए खत्तं आलेहियं तेण ॥११३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जोएवि भित्तिसंधिं खणियं खत्तं सुतिक्खसत्थेणं ।
सिरिवच्छसच्छहं सुप्पवेसनिग्गमणमइगूढं ॥११४॥
निज्झाइऊण सुइरं निहुयपयं पविसिऊण सो धुत्तो ।
कड्ढइ महग्घभण्डं पभूयपेडाउ तत्थेव ॥११५॥
ठविउं कुमरं आणिय देवउलाओ दरिद्दिए पुरिसे ।
ते गेण्हाविय ताओ नयराओ निग्गया झत्ति ॥११६॥

तओ कुमरेण चिन्तियं—

आयड्ढिऊण खग्गं छलेण पहणामि किं इहं दुट्ठं ।
अहव न जुत्तं अम्हं छलघाओ कुलपसूयाणं ॥११७॥
एयनिवासं गन्तुं दव्वं पेच्छामि केत्तियं हरियं ।
कस्स कए अणवरयं मुसइ इमं नयरिजणनिवहं ॥११८॥
एवं ते दोन्नि वि गहियमोसया पुरवराउ निक्खन्ता ।
गुरुभारेण किलन्ता नयरुज्जाणम्मि संपत्ता ॥११९॥
परिवायगेण भणिओ कुमरो छलघायमारणनिमित्तं ।
सुपुरिस गरुया रयणी अच्छामो एत्थ उज्जाणे ॥१२०॥
पडिवन्ने कुमरेणं तत्थुज्जाणम्मि ते समासीणा ।
किल निद्दं सेवेमो चित्तेणं दो वि सासङ्का ॥१२१॥
खणमेत्तेणं दोन्नि वि दाहिणवामेसु वच्छमूलस्स ।
अन्नोन्नघायनिरया अलीयनिद्दाइ सुत्त त्ति ॥१२२॥
ते वाहित्तयपुरिसा सुत्ता वीसत्थमाणसा सव्वे ।
कुमरो वि सत्थराओ उट्ठेत्ता सणियमवकन्तो ॥१२३॥
काउं करम्मि खग्गं अन्नस्स महातरुस्स मूलम्मि ।
पेच्छन्तो संचिट्ठइ अपमत्तो तस्स चरियाइं ॥१२४॥
सुत्त त्ति मुणेऊणं तेणं विणिवाइया उ ते पुरिसा ।
सयणे तमपेच्छन्तो जा जोवइ तत्थ सो कुमरं ॥१२५॥
ता हक्किऊण दुट्ठं कुमरो आयड्ढिऊण करवालं ।
पहणइ जंघासन्नं भयरहिओ भीमबलजुत्तो ॥१२६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एगेण पहारेण पडियं जंघाण जुयलयं तस्स ।
चक्काहओ व्व रुक्खो निवाडओ झत्ति धरणीए ॥१२७॥
गन्तुं असमत्थेणं जीवियरसेण तेण सो भणिओ ।
"आसि अहं सुपसिद्धो नामेण भुयंगमो चारो ॥१२८॥
तह अत्थि इह मसाणे गेहं भूमीएँ मज्झयारम्मि ।
तत्थत्थि मज्झ भइणी वीरमई नाम जुवइ त्ति ॥१२९॥
वडपायवस्स मूले गन्तूणं कुणसु तीएँ वाहरणं ।
जेणं भूमिघरस्स दारं उग्घाडए तुरियं ॥१३०॥
तं परिणिऊण सुन्दर गेण्हसु सव्वं पि दविणजायं ति ।
चिट्ठसु तत्थ सुहेणं अहवा वसिमम्मि गच्छेसु" ॥१३१॥
एवं जम्पन्तो सो कुमरेणासासिओ खणं एक्कं ।
गहिऊण तस्स खग्गं पत्तो ता पेयभूमीए ॥१३२॥
गन्तूण कओ सद्दो वडस्स मूलम्मि तीएँ जुवईए ।
आगन्तूण य तीए घरस्स उग्घाडियं दारं ॥१३३॥
निज्झाइऊण सुइरं रूवं बालाएँ विम्हिओ सहसा ।
चिन्तइ नियहियएणं एसा मयणस्स सव्वस्सं ॥१३४॥
पुट्ठो य तीएँ "सुन्दर कत्तो कज्जेण केण वायाओ" ।
कहिया तेण पउत्ती तं सोउं दूमिया हियए ॥१३५॥
भणिऊण महुरवयणं नीओ पायालमन्दिरे कुमरो ।
गुरुगउरवेण तीए दिन्नं पवरासणं तत्थ ॥१३६॥
सप्पणयं चिय भणिओ "अहयं एयं च विउलधणनिवहं ।
तुम्हायत्तं सव्वं सुन्दर विलसेसु सच्छन्दं" ॥१३७॥
पयडेउं वासहरं भणिओ "वीसमसु एत्थ सयणिज्जे ।
अहयं पुण गन्तूणं आणेमि विलेवणं तुज्झ" ॥१३८॥
एवं भणिऊणं सा वासहराओ विणिग्गया सहसा ।
कुमरो वि नीइसत्थं चिन्तइ अह अप्पणो हियए ॥१३९॥
माया अलियं लोहो मूढत्तं साहसं असोयत्तं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निस्संसया तह च्चिय महिलाण सहावया दोसा ॥१४०॥

अन्नं च—

न घेप्पइ सुसिणेहिं न विज्जइ न गुणेहिं ।
न य लब्भइ न य माणिण न य चाडुयसयसहस्सहिं ॥१४१॥
न य खरकोमलवयणि न विहवि न जोव्वणेण ।
दुग्गेज्झं मणु महिलहं चिन्तहि आयरेण ॥१४२॥

अओ—

जो जाइ जुवइवग्गे सब्भावं मयणमोहिओ पुरिसो ।
दुत्तरदुक्खसमुद्दे निवडइ सो नत्थि संदेहो ॥१४३॥
एवं च भाविऊणं सयणतलं वज्जिऊण सो कुमरो ।
लुक्को अन्नपएसे ठविऊणं तत्थ पडिरूवं ॥१४४॥
सयणिज्जस्स य उवरिं जन्तपओगेण जा सिला ठविया ।
सा झत्ति तीएँ मुक्का पडिया पल्लङ्कउवरिम्मि ॥१४५॥
नाऊण चुण्णियं तं पहिट्ठहियया पहासई पावा ।
"मह भाउयं वहन्तो किं जाणसि अत्तणो हियए" ॥१४६॥
सुणिऊण इमं वयणं कुमरो वि पहाविओ तयाहुत्तं ।
गहिया केसकलावे भणिया सा एरिसं वयणं ॥१४७॥
"हा पावे को सक्कइ मं मारेउं सुबुद्धिविहवेण ।
जो जग्गइ परछिद्दं सो नियछिद्दीएँ किं सुयइ" । १४८॥
गहिऊण य तं वालं वसुमइभवणाउ निग्गओ कुमरो ।
रत्तो वि अइविरत्तो तीए अइकूरचरिएहिं ॥१४९॥
गन्तुं रायसमीवे रयणिपउत्ती य साहिया तेण ।
चोरो खग्गेण हओ तस्सेसा आणिया भगिणी ॥१५०॥
तं च्चिय पायालहरं वीयदिणे दंसियं नरवइस्स ।
रित्थं तं नरवइणा समप्पियं नयरलोयस्स ॥१५१॥
तुट्ठेणं नरवइणा दिन्ना कुमरस्स नियधूय त्ति ।
नामेणं कमलसेणा कमला इव सयलजणदइया ॥१५२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वरगामाण सहस्सं सयं गइन्दाण विउलभण्डारं ।
पाइक्काणं लक्खं तुरयाणं दससहस्साइं ॥१५३॥
एवं सो लद्धजसो जणमणनयणाण पुण्णिमाचन्दो ।
अलियं मुणेइ सव्वं रहिओ चिरदिट्ठबालाए ॥१५४॥

जओ—

ता लज्जा ता माणो ताव य परलोयचिन्तणे बुद्धी ।
जा न विवेयजियहरा मयणस्स सरा पहुप्पन्ति ॥१५५॥
एवं मयणायत्तो सो चिट्ठइ जाव निययभवणम्मि ।
ता एगा वरविलया समागया कुमरपासम्मि ॥१५६॥
दिन्नासणोवविट्ठा भणिया कुमरेण "केण कज्जेण ।
तं आगया सि सुन्दरि, साहसु निययं अहिप्पायं" ॥१५७॥
भणियं तीए निसुणसु अवहियहियओ कुमार होऊणं ।
"अहयं तुम्ह समीवं पट्ठविया मयणमञ्जरिए ॥१५८॥
एयं तुह संदिट्ठं "सुन्दर गुरुविरहजलणतवियाए ।
जा गच्छइ न य जीयं ता सिञ्चसु संगमजलेणं" ॥१५९॥
अन्नं च निसुणिऊणं गयखेड्डुं तक्करस्स वहणं च ।
दुट्ठित्थीपरिहरणं नरवइपमुहेण य जणेणं ॥१६०॥
साहुक्कारं तुज्झं कारन्तं अहियविम्हियमणा सा ।
जीयं पि हु तुह दंसणसमुस्सुया धरइ किच्छेण ॥१६१॥
सुणिऊण तीएँ वयणं दाउं हत्थट्ठियं च तम्बोलं ।
भणिया सा हू इत्थी सिणेहसारेहि वयणेहिं ॥१६२॥
"कुसले, पभणसु गन्तुं मा होहि समुस्सुया दिणे कइ वि ।
पत्थावं लहिऊणं सव्वं सत्थं करिस्सामि" ॥१६३॥
अन्नम्मि दिणे सहसा करहारूढा समागया पुरिसा ।
भवणम्मि पविसमाणा दिट्ठा कुमरेण हिट्ठमणा ॥१६४॥
आलिङ्गिउं सहरिसं अम्मापियरस्स कुसलपडिउत्ती ।
ससिणेहं परिपुट्ठा पमुक्कघणअंसुनिवहेण ॥१६५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तो तेहि इमं भणियं "अम्मापियरस्स कुमर कुसलं ति ।
तह वि हु तुह विरहमहागहेण गहियाइँ चिट्ठन्ति ॥१६६॥
कइवयदिणाण मज्झे जइ गन्तूणं न दंसणं कुणसि ।
तो कुमर निच्छएणं विमुक्कजीवाण वच्चिहिसि" ॥१६७॥
एवं निसामिऊणं सज्जावेऊण निययखन्धारं ।
पत्तो रायसमीवे जंपइ सो एरिसं वयणं ॥१६८॥
"तायस्स समीवाओ उस्सुयकरहीरुहा दुवे पुरिसा ।
पहु मज्झ आणणत्थं समागया कहसु जं जोग्गं" ॥१६९॥
नरवइणा तो भणियं "वच्चसु तं कुमर, तायपासम्मि ।
नियपरिवारसमेओ गन्तूण पुणो नियत्तेसु" ॥१७०॥
दाऊण अलंकारं संमाणेऊण महुरवयणेहिं ।
नियधूयाएँ समेओ नरवइणा पेसिओ कुमरो ॥१७१ ।
काऊणं संजत्तिं दावावेउं पयाणयं सिविरं ।
एगरहेणं कुमरो सयं ठिओ नयरमज्झम्मि ॥१७२॥
जामिणिपढमे पहरे दूईए संगमीएँ पासम्मि ।
कुमरेण नियपुरिसो पट्ठविओ जाणणट्ठाए ॥१७३॥
गन्तूण तेण भणियं सिविरं अम्हाण पविसियं मग्गे ।
एगागी रायसुओ चिट्ठइ तुम्हाण कज्जेण ॥१७४॥
ता सुन्दरि गन्तूणं आणसु लहु मयणमञ्जरिं एत्थ ।
जेण समीहियकज्जं संपज्जइ अज्ज तुम्हाणं ॥१७५॥
सुणिऊण तस्स वयणं गन्तूणं संगमी तुरियतुरियं ।
नियसामिणीएँ साहइ जं भणियं कुमरपुरिसेण ॥१७६॥
आयण्णिऊण सहसा रहससमुच्छलियबहलरोमञ्चा ।
संचल्लिया खणेणं सुसहिसहाया नियघराओ ॥१७७॥
पत्ता कुमरसमीवं आरूढा मयणमञ्जरी जाणे ।
"आरुहसु सुयणु सिग्घं" इय भणिया रायतणएणं ॥१७८॥
अह चोइऊण तुरए रज्जं गहिऊण वामहत्थेणं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नीहरिउं नयरीए संपत्तो निययकडयम्मि ॥१७६॥
तुरियं पयाणढक्का दवाविया तेण पत्तमेत्तेणं ।
काऊण सुसंजत्तिं चलियं सेन्नं समत्थं पि ॥१८०॥
अणवरयपयाणेहिं विसयं लंघेवि भुवणपालस्स ।
पत्तो महाअरण्णे सावयतरुसंकुले भीमे ॥१८१॥
अइविसममहादुमसंकुलम्मि मग्गम्मि वच्चमाणस्स ।
सव्वजणाणन्दयरो पाउसकालो समणुपत्तो ॥१८२॥
तम्मि य मणहरकाले वच्चइ कुमरो वणस्स जा मज्झे ।
सहस त्ति भिल्लसामी ता पडिओ तस्स सिबिरम्मि ॥१८३॥
तस्स वलेणं बलदप्पिएण सहसा कुमारखन्धारं ।
पवणेण व घणवन्दं पक्खित्तं चउसु वि दिसासु ॥१८४॥
एगेण सन्दणेणं सहिओ नियपणइणीएँ रायसुओ ।
रणमज्झे सो थक्को हरि व्व मायङ्गजूहस्स ॥१८५॥
ता वाणावलिपहयं भग्गं भिल्लाण तं बलं सयलं ।
अन्नन्नदिसिपलाणं गन्धगयस्सेव करिजूहं ॥१८६॥
तं पुण पलायमाणं भिल्लवई पेच्छिऊण निवसेन्नं ।
निट्ठुरमक्कोसन्तो सहसा सवडंमुहो चलिओ ॥१८७॥
अणवरयं ते दोन्नि वि अन्नोन्नं पक्खिवन्ति सरनिवहे ।
एक्को वि न वि छलिज्जइ निउणत्तणओ धणुव्वेए ॥१८८॥

तओ चिन्तियं कुमारेण—

बुद्धीएँ पवञ्चेण य छलेण तह मन्ततन्तजोएण ।
पहणिज्जइ पडिवक्खो जस्स न नीईएँ सक्केज्ज ॥१८६॥
ता एसो भिल्लवई धणुगुणसत्थेसु लद्धमाहप्पो ।
न य सक्को पहणेउं तेण उवायं विचिन्तेमि ॥१६०॥
एवं च चिन्तिऊणं भणिया कुमरेण सा निया भज्जा ।
कुणसु पिए सिङ्गारं उवविससु रहस्स तुण्डम्मि ॥१६१॥
उवविट्ठाए तीए दट्ठूणं रूवसंपयं पवरं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दिट्ठिं तस्स निवेसइ पहओ मयणस्स वाणेहिं ॥१६२॥
नीलुप्पलपत्तसरिच्छएण आरामुहेण वाणेणं।
वच्छत्थलम्मि सहसा ता पहओ रायतणएणं ॥१६३॥
मम्मपएसम्मि हओ पडिओ भूमीऍ भिल्लनरनाहो।
ईसिं वियसियनयणो जम्पइ सो एरिसं वयणं ॥१६४॥
अवि य—
"नाहं तुह सरपहओ पहओ कुसुमाउहस्स वाणेण।
अहवा किमेत्थ चोज्जं मयणेणं को वि न हु छलिओ" ॥१६५॥
एवं पयम्पिऊणं कालगओ भिल्लसामिओ झत्ति।
एत्थन्तरम्मि कुमरो नियपरिवारं पलोएइ ॥१६६॥
जाव न रहे न तुरए सेवयपुरिसे य नो य वरसुहडे।
एगरहेणं कुमरो संचलिओ नियपुराहुत्तं ॥१६७॥
कहकहवि तं अरण्णं सो कुमरो लंघिऊण भयरहिओ।
गोउलमेगं पत्तो गावीनिवहेण रमणीयं ॥१६८॥
एत्थन्तरम्मि कुमरं दट्ठूणं गोउलाउ दो पुरिसा।
पत्ता कुमरसमीवं भणन्ति महुरेहि वयणेहिं ॥१६९॥
"कत्तो सि तुमं नरवर कत्थ व वच्चिहिसि कहसु अम्हाणं"।
"सङ्खउरे वच्चामो" भणिया ते रायतणएणं ॥२००॥
तो तेहि पुणो भणियं "सुपुरिस अम्हे वि तुज्झ सत्थेणं।
सङ्खउरे वच्चामो जइ सुपसाओ तुमं होसि" ॥२०१॥
"एवं ति होउ" पडिवज्जिऊण जोएइ जा रहे तुरए।
ता सत्थिल्लयपुरिसा भणन्ति एयारिसं वयणं ॥२०२॥
"एएणं मग्गेणं अत्थि महन्तं अईव कन्तारं।
तस्स य मज्झे चिट्ठइ चोरो दुज्जोहणो चण्डो ॥२०३॥
मयमत्तो गलगज्जि कुणमाणो करिवरो य अइविसमो।
दिट्ठीविसो य सप्पो वग्घो तह दारुणो अत्थि ॥२०४॥
अन्ने वि सावयगणा कूरा मंसासिओ य दुप्पेच्छा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं नाऊण मणे वच्चसु एएण मग्गेण" ॥२०५॥
कुमरेण तओ भणिओ "मा कुणह भयं पयत्तह पहम्मि ।
कुसलेणं सङ्खउरे संपत्ता देमि किं बहुणा" ॥२०६॥
एवं निसामिऊणं अन्ने सत्थिल्लया नरा बहवे ।
रायतणएण समयं संचलिया मुक्कभयपसरा ॥२०७॥
एत्थन्तरम्मि एगो दीहजडामउडभूसियसरीरो ।
भसमुद्धूलियगत्तो तिसूलचक्केण य सणाहो ॥२०८॥
पणिचारयपरिचरिओ पत्थियलिङ्गेण वावडकरग्गो ।
तेयंसी सुपसत्थो महवइओ तत्थ संपत्तो ॥२०९॥
तेण य भणिओ कुमरो "तुम्ह सुसत्थेण पुत्तय अहं पि ।
सङ्खउरे वच्चामि तित्थाणं दंसणनिमित्तं ॥२१०॥
अन्नं च मह समीवे कइ वि हु चिट्ठन्ति पुत्त दीणारा ।
बलिपूयणत्थदिन्ना देवाणं धम्मियनरेहिं ॥२११॥
ते गेण्हेसु महायस वच्चामो जेण निब्भया अम्हे" ।
एवं बहु भणिऊणं समप्पिओ दविणनिवहो त्ति ॥२१२॥
ताहे सो परितुट्ठो आसीसं देइ नरवइसुयस्स ।
सत्थिल्लएहि सद्धिं संचलिओ कवडकयवेसो ॥२१३॥
मुणिउं तस्स सरूवं कुमरो चिन्तेइ हिययमज्झम्मि ।
एएण समं गमणं न सुन्दरं होइ परिणामे ॥२१४॥
एवं हियए परिभाविऊण कुमरेण चोइया तुरया ।
मग्गो रहो पयट्टो संपत्तो गहणदेसम्मि ॥२१५॥
तेण महव्वइएणं भणिया सत्थिल्लया इमं वयणं ।
"अज्ज अहं तुम्हाणं पाहुणयं सव्वहा काहं ॥२१६॥
अत्थि इह रण्णमज्झे गोउलमेगं पभूयधणनिवहं ।
तत्थ मए वरिसालो आवन्तेणं कओ आसि ॥२१७॥
तम्मि मए गोउलिया सव्वे आवज्जिया नियगुणेहिं ।
दाहिन्ति अज्ज भोज्जं ता तुम्हे पाहुणा मज्झ" ॥२१८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं निमन्तिऊणं गन्तूण समागओ महावइओ ।
पायसघयदहियाणं भरिऊणं भण्डए गरुए ॥२१६॥
आगन्तूण य तेणं भणिओ कुमरो वि महुरवहणेहि ।
"पुत्तय अज्जम्हाणं हिअइच्छियनिव्वुइं कुणसु" ॥२२०॥
कुमरेण तओ भणियं गुरुवियणा मज्झ उत्तमङ्गम्मि ।
वट्टइ, अन्नं च जईण भोयणं कप्पए णेय ॥२२१॥
सत्थेल्लया य सव्वे भणिया कुमरेण दिट्ठिसन्नाए ।
न हु एयं भोत्तव्वं एएण समाणियं भत्तं ॥२२२॥
अवगण्णिऊण कुमरं भुत्तं तं भोयणं विसविमिस्सं ।
भुञ्जियमेत्ता सव्वे सहसा निच्चेयणा जाया ॥२२३॥
जममन्दिरं पवन्ने सव्वे ते जाणिउं महावइओ ।
मेल्लन्तो सरनिवहं पहाविओ कुमरवहणत्थं ॥२२४॥
कुमरेण सकोवेणं सरनिवहं वञ्चिऊण वेएण ।
मम्मपएसे पहओ एगेणं अद्धयन्देणं ॥२२५॥
अह सो महीएँ पडिओ जीवियसेसो पयम्पए एयं ।
"पुत्त अहं दुज्जेओ चोरो दुज्जोहणो नाम ॥२२६॥
निब्भयचित्तेण तए महं चित्तं रञ्जियं महाभाग ।
जीवियसेसो अहयं संपत्तो वाणघाएणं ॥२२७॥
आयण्णसु मह वयणं एयस्स गिरिस्स वामपासम्मि ।
सरियाण दोण्ह मज्झे देवउलं अत्थि रमणीयं ॥२२८॥
तस्स य पच्छिमभाए तलिणसिला सज्जिया सुजत्तेणं ।
तं पेल्लिऊण वामे भूमिघरं सत्थ पविसेसु ॥२२९॥
तस्सत्थि मज्झभाए मम महिला पवररूवगुणकलिया ।
नवजोव्वणा विणीया नामेणं जयसिरी सरला ॥२३०॥
रित्थं अइव महन्तं चिट्ठइ मज्झम्मि तस्स भवणस्स ।
ता तं सव्वं सुपुरिस अप्पायत्तं करेज्जासु ॥२३१।
मह पुण वट्टइ अन्तो गयम्मि जीयम्मि देसु कट्ठाणि" ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं सो भणमाणो पञ्चत्तं पाविओ सहसा ।।२३२।।
दारुसमूहे मेलिय दिन्नो कुमरेण हुयवहो तस्स ।
आरुहिउं पवररहं ताव गओ कहियदेसम्मि ।।२३३।।
दोसरियाणं मज्झे देवउले जोइया सिला तेणं ।
उग्घाडिऊणं दारं कओ य सद्दो जहाभणिओ ।।२३४।।
भणइ तओ सा रमणी सहसागन्तूण दारदेसम्मि ।
कोइलमहुरसरेणं "मज्झे आगच्छ भवणस्स ।।२३५।।
पेच्छेवि तीएँ रूवं साणन्दं जा पलोयए कुमरो ।
मयमञ्जरीइ ताव य अवहत्थेणं हओ सहसा ।।२३६।।

भणियं च ।

"वन्धुपियासहियाओ नयरं गेहं च तुज्झ कज्जेणं ।
चत्तं मए अलज्जिर तुमं च अन्नं पसत्तो सि" ।।२३७।।
निसुणेवि तीइ वयणं कुमरो वज्जेवि तं वणं सहसा ।
सन्दणवरमारुहिओ संचलिओ अग्गओ ताहे ।।२३८।।
लंघइ जाव सुहेणं केत्तियमेत्तं पि भीसणं रण्णं ।
सहस त्ति ताव पेच्छइ नासन्तं सवरसंघायं ।।२३९।।
अह पेच्छिऊण कुमरो भयतसिए वणयराण संघाए ।
चिन्तइ नियचित्तेणं होयव्वं एत्थ मयकरिणा ।।२४०।।
सासङ्को हियएणं जाव पलोएइ तद्दिसाहुत्तं ।
ससिसङ्खकुन्दधवलं पेच्छइ ता करिवरं एक्कं ।।२४१।।
पज्झरियमयपवाहं मोडन्तं तरुवरे महाकाए ।
मयमञ्जरी खणेणं उव्विग्गा हिययमज्झम्मि ।।२४२।।
कुमरेण तओ भणियं "मा वीहसु सुद्धि रण्णकलहाओ ।
गरुयाण संपया आवया य, न हु इयरपुरिसाणं ।।२४३।।
एवं भणिऊण पियं अवयरिओ रहवराउ सो तुरियं ।
गन्तूणमुत्तरीयं पक्खित्तं झत्ति पुरओ त्ति ।।२४४।।
ताव य सो मायङ्गो छोहं जा देइ उत्तरिज्जम्मि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ता कुमरो वि सुदक्खो झडत्ति आरुहइ खन्धम्मि ॥२४५॥
खणमेत्तेणं सो मत्तकरिवरो पेगवणयरकयन्तो ।
सवसो कुमरेण कओ अहि व्व मणिमन्तजोएण ॥२४६॥
नियदइयाए पुरओ अवइण्णो गयवरस्स खन्धाओ ।
पुणरवि रहम्मि रूढो संचलिओ नियपुराहुत्तं ॥२४७॥
जा केत्तियं पएसं कुमरो लंघेइ नियपियासहिओ ।
ता पेच्छइ सो वग्घं अद्धाणतडम्मि उवविट्ठं ॥२४८॥
अद्धुसियकेसरसढं अप्फालियवसुहदीहलङ्गूलं ।
तं पेच्छिऊण कुमरो हसिऊणं धाविओ सम्मुहो ॥२४९॥
सज्जेउं रोद्दकमं वग्घो जा देइ नियकरपहारं ।
वेंटियवत्थो हत्थो छूढो कुमरेण वयणम्मि ॥२५०॥
दाहिणहत्थेण पुणो पहओ असिधेणुयाएँ खन्धम्मि ।
गाढपहारेण हओ धस त्ति महिमण्डले पडिओ ॥२५१॥
निज्जिणिऊण य वग्घं जाव य लंघेइ थोवयं गहणं ।
पेच्छइ ताव भुयङ्गं अद्धाणे संठियं कुमरो ॥२५२॥

केरिसं—

अलिउलकज्जलवण्णं फणिमणिकिरणोहभासुरसरीरं ।
दोजीहं रत्तच्छं धमणी व पमुक्कपुक्कारं ॥२५३॥
सवडंमुहं उवेन्तं दट्ठूणं मयणमञ्जरी सप्पं ।
गुरुभयकम्पियदेहा लग्गा कुमरस्स कण्ठम्मि ॥२५४॥
मा बीहेसु भणन्तो उत्तिण्णो सन्दणाउ सो सुहडो ।
आवन्तस्स य फणिणो सहसा विहिओ गईथम्भो ॥२५५॥
तो काऊं मुहथम्भं खेल्लावेऊण छड्डिओ भुयगो ।
आरुहिऊण रहवरं तुरियं संजोइया तुरया ॥२५६॥
किच्छेण लंघिऊणं गहणं तं कहवि नरयसारिच्छं ।
संपत्तो सङ्कउरं संतोसियनयरिजणनिवहो ॥२५७॥
वरविहियवत्थसोहाउलम्मि नयरम्मि सुन्दरनिवस्स ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जणमणनयणाणन्दो दाणं दिन्तो पविट्ठो सो ॥२५८॥
नियमन्दिरम्मि पत्तो जणणीजणएणं गरुयनेहेणं ।
आलिङ्गिओ सहरिसं लोएणं पणमिओ ताहे ॥२५६॥
सो भोयणावसाणे पुट्ठो देसन्तराण वुत्तन्तं ।
तेण समग्गं कहियं जा पत्तो निययभवणम्मि ॥२६०॥
एवं ताणं सुहसंगमेण संजायपरमतोसाणं ।
वच्चइ सुहेण कालो रज्जसुहं भुञ्जमाणाणं ॥२६१॥
अह अन्नया वसन्ते कामुयलोयाण हिययआणन्दे ।
बहुपउरपरियरजुओ उज्जाणं उवगओ राया ॥२६२॥
अह सो वि तओ कुमरो सुहिजणपरिवारिओ पियासहिओ ।
पुरनारिपलोइयरूवसंपओ तत्थ संपत्तो ॥२६३॥
बहुहासतोसवीणाविणोयवरनट्टगेयकव्वेहिं ।
कीलइ पमुइयचित्तो मयमञ्जरियाएँ सह कुमरो ॥२६४॥
अवरण्हे सव्वजणो रमिऊणं पुरवरे गओ सिग्घं ।
राया वि सयलपरिवारसंजुओ भवणमणुपत्तो ॥२६५॥
कुमरो वि विसज्जियसयलपरियणो जाव रहवरं पत्तो ।
ता सा मयमञ्जरिया डक्का उरगेण उग्गेण ॥२६६॥
हाहारवं कुणन्ती डक्का डक्क त्ति तह य विलवन्ती ।
कम्पन्तसयलगत्ता पडिया कुमरस्स उच्छङ्गे ॥२६७॥
कुमरेण तओ भणिया मा मा वीहेहि कुवलयदलच्छि ।
विसहरविसमप्पभवं निमेसमेत्तेण काहामि ॥२६८॥
एवं भणमाणस्स य मुहुत्तमेत्तेण सा पिया तस्स ।
विसमविसपीडियङ्गा खणेण निच्चेयणा जाया २६६॥
जीवियमुक्क त्ति वियाणिऊण कुमरो वि मोहमावन्नो ।
विलवइ करुणसरेणं हाहाकारे विमुञ्चन्तो ॥२७०॥
कह कह वि हु किच्छेणं अत्ताणं संवरेवि कुमरेणं ।
रइऊण चियं ताहे ठविया उयरम्मि सा भज्जा ॥२७१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पज्जालिऊण जलणं अत्ताणं जा खिवेइ सो कुमरो ।
सहस त्ति ताव पत्तं गयणाओ खयरजुयलं ति ॥२७२॥
संपत्तमेत्तएण य भणिओ कुमरो सुकोमलं वयणं ।
किमकारणेण सुपुरिस अत्ताणं खिवसि जलणम्मि ॥२७३॥
अहयं खणमेत्तेण वि सत्थसरीरं करेमि तुह भज्जं ।
एवं पजम्पिऊणं पहया अहिमन्तियजलेण ॥२७४॥
निद्दाखए व्व वुद्धा अत्ताणं संवरेवि पसयच्छी ।
कयरो इमो पएसो पुच्छन्ती उट्ठिया झत्ति ॥२७५॥
तं खयराणं जुयलं उट्ठावेऊण पणइणिं तस्स ।
जंपिय कुमरेण समं उप्पइयं गयणमग्गम्मि ॥२७६॥
कुमरो वि पियासहिओ रयणीए अइतमन्धपउराए ।
पच्चासन्ने देवयउलम्मि सहस च्चिय गओ त्ति ॥२७७॥
कुमरेण एत्थ समए भणिया दइया पसन्नवयणेणं ।
आणेमि जाव जलणं ताव तुमं चिट्ठ खणमेगं ॥२७८॥
एवं भणिऊण गओ जलणं गहिऊण पुणरवि नियत्तो ।
ता पेच्छइ देवउले उज्जोयं मणचमक्कारं ॥२७९॥
संपत्तेणं तेणं भणिया सासङ्कमाणसेणेवं ।
अज्जे दीवुज्जोओ दिट्ठो मे आसि देवउले ॥२८०॥
तीए वि य पडिभणियं पिय तुह हत्थट्ठियस्स जलणस्स ।
जलियस्स समुज्जोओ संकन्तो सो तुमे दिट्ठो ॥२८१॥
एत्थन्तरम्मि खग्गं भज्जाए समप्पिऊण सो कुमरो ।
महिनिहियजाणुजुयलो अहोमुहो धमइ जा जलणं ॥२८२॥
ता सहस च्चिय तीए खग्गं हत्थाउ कोसपरिहीणं ।
अइगरुयनिहाएणं पडियं देवउलसिलपट्टे ॥२८३॥
संभन्तो ता पुच्छइ नियदइयं सो हु सरलसब्भावो ।
"किं कोसनिप्पमुक्कं खग्गं पडियं महियलम्मि" ॥२८४॥
तीए चि तओ भणिओ "मह मणमोहो अईव उच्छलिओ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेणं परव्वसाए करवालं नवरि पडियं'' ति ॥२८५॥
जालेवि तओ जलणं देवउले वोलिऊण सा रयणी ।
गोसम्मि नियभवणे गयाइँ साणन्दहिययाइं । २८६॥
वन्धवसुहिसयणाणं रयणिपउत्ती य निव्विसेसा सा ।
पियसहिएणं कहिया रहसवसुल्लसियहियएणं ॥२८७॥
एवं च ताण दोण्ह वि हिययसमीहियविलाससत्ताणं ।
वच्चइ सुहेण कालो विसयसुहं सेवमाणाणं ॥२८८॥
अह अन्नया कयाई सप्पुरिसो रायनन्दणो कुमरो ।
विवरीयसिक्खतुरयं परिवाहइ वाहियालीए ॥२८९॥
तो तेण दुट्ठहरिणा उव्वाहरिऊण लोयपच्चक्खं ।
उवणीओ सो रण्णे अइविसमे तावसनिवासे ॥२९०॥
परिभममाणेण तओ पत्तं कुमरेण जिणहरं एक्कं ।
चारणसमणो एगो दिट्ठो वहुमुणिगणाइण्णो ॥२९१॥

सो य केरिसो—

गहनक्खत्ताणं ससहरो व्व रयणाण कोत्थुहमणि व्व ।
कप्पदुमो व्व तरूणं देवाण सहस्सनयणो व्व ॥२९२॥
चन्दो व्व सोमयाए महि व्व खन्तीएँ दित्तिए मित्तो ।
रूवेण वम्महो इव निम्मलचउनाणसंपन्नो ॥२९३॥
नामेण साहसगई विज्जावसदिट्ठविस्सववहारो ।
वोहेन्तो भवियजणे निम्मलधम्मोवएसेणं ॥२९४॥
गन्तूणं कुमरेणं सहसा तो पणमियं चरणकमलं ।
लद्धासीसो य तहा उवविट्ठो तस्स पासम्मि ॥२९५॥
लहिऊण अवसरं तो भणियं कुमरेण विणयपत्तेणं ।
सुहगुरु साहसु मज्झं सकोउओ किं पि पुच्छामि ॥२९६॥
के पहु इमे सुपुरिसा जोव्वणलायण्णरूवपडिहत्था ।
वेरग्गमग्गपडिया पव्व वि इच्छन्ति वयगहणं ॥२९७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तओ भणियं नाणिणा—

अत्थि इह विसयमज्झे चमरी नामेण विसमपल्लि त्ति ।
तं भुञ्जइ वलवन्तो धरणिधरो नाम भिल्लो त्ति ॥२९८॥
अह अन्नया कयाई हयगयरहजोहसुहडपरियरिओ ।
एगो नरवइकुमरो समागओ तस्स भूमीए ॥२९९॥
तो तेण तस्स सिविरं हयविहयं तक्खणेण काऊणं ।
आढत्तो संगामो वलवइणा तेण सरिसो त्ति ॥३००॥
भिडिया महइं वेलं जाव न एगो वि तीरए छलिउं ।
तो तेण निययजाया कयसिङ्गारा कया पुरओ ॥३०१॥
ता तीएँ उवरि दिट्ठी वम्महहरिएण पेसिया जाव ।
छिद्दं लहिऊण तओ कुमरेणं सो हओ मम्मे ॥३०२॥
वहिऊण भिल्लनाहं सो कुमरो पवसिओ पियासहिओ ।
एए पुण पञ्च वि तस्स भायरो आगया तुरियं ॥३०३॥
जीयविमुक्कं दट्ठुं बाणपहारेण भायरं जेट्ठं ।
रहमग्गेणं चलिया अमरिसवसफुरफुरन्तोट्ठा ॥३०४॥
सङ्कउरम्मि गएहिं दिट्ठो कुमरो कुमारपरियरिओ ।
चिट्ठन्ति तत्थ पञ्च वि जोयन्ता मारणे छिड्डं ॥३०५॥
अह अन्नदिणे कुमरो उज्जाणे मुक्कसयलपरिवारो ।
नियजायाइ समेओ दिट्ठो सो तेहि एगागी ॥३०६॥
जा चिन्तन्ति इमं ते वहणोवायं किलिट्ठपरिणामा ।
सहस त्ति तस्स जाया दट्ठा दुट्ठेण भुयगेण ॥३०७॥
गयजीयं नाऊणं अप्पाणं जा खिवेइ जलणम्मि ।
ता विज्जाहरजुयलं पत्तं सत्थीकया तेण ॥३०८॥
चइऊण तमुज्जाणं पच्चासन्ने गयाइँ देवउले ।
मोत्तूण तं मयच्छिं जलणस्स तओ गओ कुमरो ॥३०९॥
एवं पञ्च वि पुरिसा लद्धछला गरुयतोसमावन्ना ।
वहणकरणुज्जयमणा पच्छन्ना तत्थ चिट्ठन्ति ॥३१०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एयाण कणिट्ठेणं चिरगोवियदीवओ समुग्गाओ ।
पयडीकओ य सहसा सुरमन्दिरमज्झयारम्मि ॥३११॥
दीवुज्जोएण तओ दिट्ठो वालाइ ताण लहुभाया ।
अइनेहनिब्भराए पलोइओ सोमदिट्ठीए ॥३१२॥
ता वुत्तो सो तीए होसु तुमं सुयणु मज्झ भत्तारो ।
जइ तं अन्नं झायसि ता से नासेमि जीयं पि ॥३१३॥
तेण पुणो सा भणिया "मुद्धे इच्छामहं तुमं किं तु ।
तुह भत्ता जइ जाणइ न सव्वहा अत्थि मे जीयं" ॥३१४॥

तओ तीए भणियं—

"सुहय अहं नियदइयं वावाइस्सामि तुज्झ, पच्चक्खं" ।
एवं पजम्पिऊणं पईवओ झम्पिओ झत्ति ॥३१५॥
एत्थन्तरम्मि कुमरो वण्हि घेत्तूण झत्ति संपत्तो ।
संपत्तेण भणियं "उज्जोओ इह मए दिट्ठो ॥३१६॥
तीइ तओ भणियमिणं "तुह करगहियस्स जलियजलणस्स ।
देवउले संकन्तो पिय उज्जोओ तए दिट्ठो" ॥३१७॥
खग्गं समप्पिऊणं जा सो दीवेइ हुयवयं कुमरो ।
ता कड्ढिय करवालं गीवाए मुञ्चए पहरं ॥३१८॥
एएण करुणमइणा अवहत्थेऊण पाडियं खग्गं ।
सिट्ठं सहोयराणं चरियं इत्थीएँ सुविच्चित्तं ॥३१९॥
नाऊण तयं तीए विलसियमइदारुणं निरावेक्खं ।
वेरग्गसमावन्ना समागया मह समीवम्मि" ॥३२०॥
आयण्णिय नियचरियं संभन्तो माणसम्मि सो कुमरो ।
परिभावइ "पेच्छ अहो महिलाणं दारुणं चरियं ॥३२१॥

तो सच्चमेयं—

गङ्गाएँ वालुयं सायरे जलं हिमवओ य परिमाणं ।
जाणन्ति बुद्धिमन्ता महिलाहिययं न याणन्ति" ॥३२२॥
ता धिरत्थु संसारस्स । नत्थि एत्थ किं पि सुहकारणं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भणियं च—

खणदिट्ठनट्ठविह वेखणपरियट्टन्तविविहसुहदुक्खे।
खणसंजोगविओगे संसारे रे सुह कत्तो ॥३२३॥

एवमाइ भावेन्तो संवेगमुवगओ। निवडिऊण य भयवओ चलणेसु भणियं "भयवं, मम सन्तियं चरियमेयं। अहं एएसिं भायघायगो। उव्विग्गो य अहं संसारवासाओ ता करेह वयपयाणेण अणुग्गहं। दिक्खिओ भयवया जाओ दुरणुचरसामण्णपरिपालणुज्जओ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Glossary— शब्दकोष

प्राकृत	संस्कृत	हिन्दी
अइदुट्ठं	अतिदुष्टं	अतिदुष्ट
अइ-माण-गव्विएणं	अतिमानगर्वितत्वेन	अत्यन्त अहंकार में चूर होने से
अइलंघिओ	अतिलंघितः	उल्लंघन कर
अउव्वदुग्गंधं	अपूर्वदुर्गन्धं	अपूर्वदुर्गन्ध को
अउव्वो	अपूर्वः	अपूर्व
अकडं	अकृतं	नहीं किये हुए को
अकयत्था	अकृतार्था	असफल
अकसायिणो	अकषायिणः	कषायरहित
अकुए	अकुके	अस्पन्दमान
अक्कोसा	अक्रोशाः	कोसते, गाली देते
अखंडलसरिसं	आखण्डलसदृशं	इन्द्र के समान
अगारेसु	आगारेषु	घरो में
अचोइए	अचोदितः	विना प्रेरणा किये
अजंपणिज्जं	अजल्पनीयम्	अकथनीय को—न कहने वाली बातों को।
अट्टालएहि	अट्टालिकाभिः	अट्टालिकाओं से
अणयारस्स	अनगारस्य	अनगार, गृहत्यागी का
अणाइपरमत्थपयडणं	अनादिपरमार्थप्रकटनं	अनादिपरमार्थ को प्रकट करने वाला
अणहिलवाडयपुरं	अणहिल्लवाटकपुरम्	अणहिल्लवाटकपुर को
अणिद्देशकरे	अनिर्देशकाः	अस्वीकार करने वाला
अणियमो वापि	अनियमो वापि	अनियम भी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अणुववायकारए	अनुपपातकारका	पास में न बैठने वाला
अणुपेहाओ	अनुप्रेक्षाः	अनुप्रेक्षाओं को
अणुभाओ	अनुभागः	अनुभाग
अणुरायं	अनुरागं	अनुराग को
अणुसासिओ	अनुशासितः	अनुशासित किया गया शिक्षित किया गया
अणुसासणमोवायं	अनुशासनमौपायं	अनुशासन—शिक्षा उवायं-उपाययुक्त
अणुहवसु	अनुभव	अनुभव करो
अणुहवइ	अनुभवति	अनुभव करता है
अणूणं	अणूनां	परमाणुओं का
अणंतयं	अनन्तं	अनन्त को
अण्णेहिं कम्मेहिं	अन्यैः कर्मभिः	अन्य कर्मों से
अण्णं	अन्यत्	अन्यत्व
अण्णं-अण्णं	अन्यत्-अन्यत्	अन्य अन्य
अण्णत्तं	अन्यत्वं	अन्यत्व भावना
अतब्भावविसिट्ठा	अतद्भावविशिष्टाः	अतद्भाव के द्वारा द्रव्य से भिन्न
अंतिए	अन्तिके	पास में
अत्थमिओ	अस्तमितः	अस्तप्रायः
अदुव	अथवा	अथवा
अट्ठि	अस्थि	हड्डी
अन्तेरण	अन्तेरण	विना प्रयोजन के
अन्नंधरंति	अन्यद्धरन्ति	अन्यधारण करते हैं
अपदेसो	अप्रदेशः	अप्रदेशी
अपरिसाडियं	अपरिशाटिकाम्	भूमि पर न गिराते हुए को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अप्पकुक्कए	अल्पकुक्कुचः	थोड़ी हस्तादि की चेष्टा से
अप्पणो	आत्मनः	आत्मा से
अप्पणट्ठा	आत्मार्थं	अपने लिए
अप्पाणवि	आत्मानमपि	अपनी आत्मा को भी
अप्पाणं	आत्मानं	आत्मा को, अपने को
अप्पादंतो	आत्मादान्तः	दमनकिया हुआ आत्मा
अप्परए	अल्परजः	अल्पकर्मरजवाला

अप्पपरोभयवाधणवंधा— आत्मपरोभयवाधनवन्धः — अपने, दूसरे को तथा दोनों को वाधादेने एवं बन्धन करने

अप्पपसंसणकरणं	आत्मप्रशंसन करणं	अपनी प्रशंसा करना
अप्पसरूवि	आत्मस्वरूपे	आत्मस्वरूप में
अप्पवीयम्मि	अल्प बीजे	अल्प बीज वाले
अप्पीकरइ	आत्मीकरोति	अपना बनाता है।
अप्पुट्ठाई	अल्पोत्थायी	थोड़ा उठनेवाला
अभावं	अभावं	अफल
अब्भत्थणाए	अभ्यर्थनया	अभ्यर्थना से

अब्भंलिह-सुर-मन्दिर-सिर विल सिर—कणय-केयणभुएहिं——अभ्रंलिह-सुरमन्दिर शिखर विलसित कनककेतन भुजाभिः—आकाश को छूनेवाले देव मन्दिरों के शिखरो में लटकती हुई ध्वजा रूपी हाथों से।

अमयसारिच्छं	अमृतसदृशं	अमृत के समान
अमरीओ	अमर्यः	देवाङ्गनाएँ
अभित्थुवंतो	अभिष्टुवतो	स्तुति करने वाले
असुहरी	असुखरी	असम्बद्ध भाषी
अवट्ठियो	अवस्थितः	स्थित होकर
अवहरिया	अवहरिता	चुराली गई
अवराहं	अपराधं	अपराध को
असुइमयं	अशुचिमयं	अपवित्र को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

असुइत्ते	अशुचित्वे	अशुचित्व में
असुइत्तं	अशुचित्वम्	अशुचित्व
अंसुजला पुण्ण-नयनजुत	अश्रु-जल पूर्णनयनयुता	आँखें आँसुओं से भरी हुई
असुयइ	असूयति	असहिष्णु होता है
असंगाणं	असङ्गानां	मुनियों का
असंबुद्धे	असंवुद्धः	तत्वबोध से रहित
असंखलोगमिदा	असंख्यातलोकमिताः	असंख्यातलोक प्रमाण
असंजमणिमित्त कोहादी	असंयमनिमित्तक्रोधादयः	असंयम करने में निमित्त-भूत क्रोधादिकषाय
अस्सिं	अस्मिन	इसमें
अट्ठजुत्ताणि	अर्थयुक्तानि	अर्थयुक्त पदों को
अहिज्जित्ता	अधीत्य	पढ़कर
आइपरिहीणो	आदिपरिहीनः	अनादिकाल
आउरमणावि	आतुरमनसोऽपि	मनके घवड़ाने पर भी
आउपाणो	आयुप्राणः	आयुप्राण
आगम्मुक्कडुओ	आगम्योत्कटिकः	आकरके, उक्कडुओ-आसन को छोड़ता हुआ
आगासस्सवगाहो	आकाशस्यावगाहः	आकाश का अवगाह
आगासपदेससण्णया	आकाशप्रदेशसंज्ञया	आकाश प्रदेश के नाम से
आगासे	आकाशे	आकाश में
आगासमणुणिविट्ठं	आकाशमणुनिविष्टम्	एक परमाणु जितने आकाश में रहता है।
आणप्पाणप्पाणो	आनपानप्राणः	श्वासोच्छ्वास प्राण
अणुपुव्विं	आनुपूर्व्या	अनुक्रम से—यहाँ तृतीया के स्थान में आर्ष प्रयोग होने से द्वितीया हुई है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आणा	आज्ञा	आज्ञा
आणेहि	आनय	लेआओ
आदा	आत्मा	आत्मा
आददो	आततः	व्याप्त
आयरिएहिं	आचार्यैः	आचार्यों द्वारा
आवइ	आपदं	विपत्ति को
आलवंते	आलपन्तो	एक वार बुलाने पर
आलविऊण	आलापित्वा	वार्तालाप करके
आलवे	आलपेत्	वोल
आलावणेण	आलापनेन	संभाषण या वार्तालाप करने से
आवी	आविः	प्रत्यक्ष
आसणगओ	आसनगतः	आसन पर बैठा हुआ
आसवअणुपेहणं	आस्रवानुप्रेक्षणं	आस्रावानुप्रेक्षा को
आसवा	आस्रवा	आस्रव— कर्मों के आनेके द्वार को आस्रव कहते है।
आसन्नासाससोसिय सरीरो	आसन्नाश्वासशोषितशरीरः	निकट में श्वास लेने से सूखा हुआ शरीर।
आइण्णे	आकीर्णः	विनयवान्
ओगाभावो	योगाभावः	योगों का अभाव
ओहारिणीं	अवधारिणीं	निश्चयात्माक भाषा को
इदो तदो	इतस्ततः	इधर उधर
इच्चेव माइवहवो	इत्येवमादिवहवः	इस प्रकार से वहुत से
इंदियवावारवजिओ	इन्द्रियव्यापारवर्जितः	इन्द्रियों की विषय प्रवृत्ति से रहित
इंदियगेज्भा	इन्द्रियग्राह्याः	इन्द्रियग्राह्य
इंदियकसायविजई	इन्द्रियकषायविजयी	इन्द्रियों और कषाय को जीतनेवाला

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इच्छन्तो	इच्छन्	चाहता हुआ
इच्छे	इच्छेत्	चाहे
इय	इति	इस प्रकार
उ	तु	वितर्क से
उक्किट्ठं	उत्कृष्टं	उत्कृष्ट
उच्चारं	पुरीषं	टट्टीको—मलको
उड्ढेण	ऊर्द्ध्वेन	खड़े होने से
उदयस्सव	उदकस्येव	जल के समान
उपसाहं	उपशाखं	छोटी छोटी शाखाओं को
उप्पण्णपद्धंसी	उत्पन्नप्रध्वंसी	उत्पन्न और नष्ट होनेवाला
उप्पणं	उत्पन्नं	उत्पन्न हुआ
उप्पण्णपढमकालम्हि	उत्पन्नप्रथमकाले	उत्पन्न होने के प्रथम समय में
उप्पायओ	उत्पादकः	उत्पन्न करनेवाला
उप्पादट्ठिदिभंगा	उत्पादस्थितिभङ्गाः	उत्पाद, ध्रौव्य और व्यय
उज्जागरओ	उज्जागरकः	जागरणकरना
उज्जवकम्मो	उद्युक्तकर्म	उत्तमकार्य करने का स्वभाव
उरब्भयसिंगेण	उरभ्रकश्रृंगेण	मेढ़े के सींग से
उल्लावाणेण	उल्लापनेन	उत्तर प्रत्युत्तर करने से-गप्प करने से
उल्लावा	उल्लावा	उत्तर प्रत्युत्तर या वकवाद
उवओगमप्पगं	उपयोगमात्मकं	उपयोगमात्र आत्मा को
उवएसो	उपदेशः	उपदेश
उवचिट्ठेज्जा	उपतिष्ठेत्	बैठे
उववायकारए	उपपातकारकः	समीप में रहनेवाला और उनकी आज्ञा के अनुसार काम करने वाला

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उवभुंजं	उपभुञ्जानः	भोगता हुआ
उवसमे	उपशमे	उपशम में
उवसमेक्कसब्भावो	उपशमैकसद्भावः	कर्मों की अवस्थाविशेष एक मात्र उपशमभाव से
ऊरूणा	ऊरूणा	ऊरु—गोड से
एगत्थिए	एकस्त्रिया	अकेली स्त्री के साथ
एकमत्तणिव्वियडी	एकभक्तं निर्विकृतिं	एकवार भोजन नीरस आहार
एदीए	एतया	इसके द्वारा
एयावत्थं	एतावस्थां	इस अवस्था को
एरिसाणि	एतादृशानि	इस प्रकार से
एसेज्जा	एषयेत्	करे
एसित्ता	एषयित्वा	गवेषणा करके
कओ	कृतः	किया
कलयलसद्दं	कलकलशब्दम्	कलकल शब्द को
कज्जं	कार्यम्	कार्य को
कज्जकरं	कार्यकरं	कार्यकारी
कट्टु	कृत्वा	करके, होकर
कट्ठं	काष्ठम्	काठ को
कडं	कृतं	किये हुए को
कडे	कृतं	किया
कणकुण्डगं	कणकुण्डकं	चावलों के भाजन को
कण्डुई	कुतश्चित्	किसी स्थान से भी
कयविप्पिए वि	कृतविप्रियेऽपि	अप्रिय करने पर भी
कमे	क्रमे	पंजो में, पगतल में
कम्मखेत्तं	कर्मक्षेत्रं	कर्म रूपी क्षेत्र को
कम्ममलिमसो	कर्ममलीमसः	कर्म से मलीन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कम्मादो	कर्मतः	कर्म से

कर्म+तस्—कम्म+दो—तस के स्थानर विकल्प से दो होता है।

कयाइवि	कदापि	कदाचित् भी
कलियं	कलितं	ग्रहण किया
कलत्तं	कलत्रं	भार्या
कवलिया	कवलिताः	ग्रसित
कसेदि	कृषति	कर्षण करता है।
कसायउदयाणुरंजिया	कषायोदयानुरंजिता	कषायोदय से अनुरक्त
कसं	कषं	चाबुक को
काऊ	कापोता	कापोतलेश्या
कत्तिमउवयारेहि	कृत्रिमोपकारैः	कृत्रिम उपकारों के द्वारा
कालड्ढो	कालाढ्यः	काल से समृद्ध
कलिउ	कलित्वा	मानकर या गणना करके
कासी	कार्षीः	बोल
किण्णा	कृष्णा	कृष्णलेश्या
किच्चाई	कृत्यानि	कार्यों को
किंपि	किमपि	कुछ भी
किमिकुलकलियं	क्रिमिकुलकलितं	कृमि समूह से भरा हुआ
कमिराय	क्रिमिरागः	क्रिमिराग, किरिमजी का रंग,
किह	कथं	कैसे, क्यों
कीरए	क्रियते	करता है
कुणह	कुरुष्व	कृ—कुण+ह—विधि—आज्ञा कृ का मध्यम पु० बहुवचन, करो
कुणदि	करोति	करता है
कुणह	कुरुतः	करो
कुप्पंति	कुप्यंति	क्रोधित होता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुप्पिज्जा	कुप्येत्	कोप करें
कुसीला	कुशीला	कुत्सित आचार वाली
कुव्वेज्जा	कुर्यात्	करे
कूवम्मि	कूपे	कुएँ में
केऊरभूसियासु	केयूरभूषितासु	बाजूबन्दों से भूषितों में
कोउहल्लेण	कौतूहलेन	कौतूहल से, परिहास करनेसे
खउं	खादितुं	खाने के लिए
खड्डुया	खड्डुक	टक्करें मारनेवा ले
खुड्डेहिं	क्षुद्रैः	पतित आचार वालों से
खणिज्जन्ति	खन्यन्ते	खोदते हैं
खंध	स्कन्धः	तना—स्कन्ध
खमदि	क्षमते	क्षमा करता है
खमादिभावेहिं	क्षमादिभावैः	क्षमादि दशलक्षण स्वरूप भावों से
खरपवणचाडुचालिर-दवग्गिसरिसेण	खरपवनचाटुचालन शीलदवाग्निसदृशेन	तेज पवन द्वारा उद्दीप्त की गई दावाग्नि के समान
खवेदि	क्षपति	नष्ट करता है
खिवदि	क्षिपति	लेजाती है
खेयराहिवई	विचाराधिपतिः	विद्याधर
खेलंतस्स	क्रीडन्तस्य	खेलनेवाले पुरुष के
खोरप्पे	क्षुरप्रः	खुरपा के समान
खांतिं	क्षान्तिं	क्षमा को
खंतिसोहिकरं	क्षान्तिशुद्धिकरं	क्षमा और शुद्धि को करने वाला
गब्भम्मि	गर्भे	गर्भ में— संयुक्त रेफ का लोप, म को द्वित्व, पूर्व को व; सप्तमी एक वचन में म्मि प्रत्यय।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गमणहेदुत्तं	गमनहेतुत्वम्	गमनहेतुत्व
गरहं	गर्हां	निन्दा को
गवेसणट्ठे	गवेषणार्थं	ढूंढ़ने के लिए
गलियस्सेव	गलिताश्व इव	गलित घोड़े की तरह
गहियं	गृहीतं	पकड़े हुए
गिण्हेदि	गृह्णाति	ग्रहण करता है
गिहगोइणाइ	गृहगोधनादि	घरगोधनादि
गंतूण	गत्वा	जाकर
गुणोवओगो	गुण-उपयोगः	गुण उपयोग (कहा है)
गुत्ती	गुप्तयः	गुप्तियाँ, ("गुत्ती जोग निरोहो" गा० ९७, मन वचन काय को वश करना गुप्ति है)
गुरुणन्तिए	गुरुणामन्तिके	गुरुओं के पास में
गुरुविहवलंघिया	गुरुविभवलंघिता	वैभव के नहीं रहते
गेहं	गृहं	घर को
गोउलाइन्नो	गोकुलाकीर्णः	गोकुलों से व्याप्त
गोदरे	गोचरे	विषय में
गोमुत्तए	गोमूत्रेण	गोमूत्र के समान
चइऊंणमासणं	त्यक्तासनं	आसन को छोड़कर
चइऊण	त्यक्त्वा-त्यज्-च+इऊण, छोड़कर	
चइत्ताणं	त्यक्त्वा	त्यागकर
चक्खुफासओ	चक्षुस्पर्शतः	चक्षुस्पर्श से, आखों के सामने खड़ा हो
चक्कतणुमल	चक्रतनुमलं	चक्रमल और शरीरमल चक्रमल—गाड़ी के पहियों के भीतर का औंगना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चजदि	त्यजति त्यज+ति	"त्य" के स्थान पर "च" होने से तथा "त" के स्थान पर शौरसेनी में "द" होने से "चजदि" यह रूप बनता है। इसका अर्थ होगा छोड़ता है।
चंडो	चण्डो	तीव्र क्रोध करनेवाला
चण्डालियं	चाण्डालिकं	क्रोध के वश होकर
चयदि	त्यजति	छोड़ता है
चवेडा	चपेटा	तमाचा मारते हैं
चागी	त्यागी	त्या के स्थान पर चा हुआ है।
चिट्ठे	तिष्ठेत्	बैठे
चिट्ठेज्जा	तिष्ठेत्	खड़ा होवे
चिणित्तुं	चित्वा	इकट्ठा करके
चित्तचेलए	चित्ततुलापात्रे	चित्तरूपी तराजू के पलड़े पर
चेदणोवओगमओ	चेतनोपयोगमयः	चेतनामय और उपयोगमय
चोक्खो		चोखा, अच्छा
चोदणं	चोदनम्	प्रेरणा करने वाला
चंचलमणसंभणट्ठं	चंचलमनोरुन्धनार्थं	चंचलमन को रोकने के लिए
छइल्लो	विदग्धः	चतुर या कला प्रवीण
छप्पणयाण	षट्प्रज्ञानां	छः प्रकार की बुद्धिवाले विदग्धों की
छप्पय	षट्पदः	भ्रमर
छलिज्जंति	छल्यन्ते	छलते हैं, धोखा देते हैं
छित्तं	छित्वा	काटकर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छेयवाणिज्जयाण	छेकवणिजां	कलाकाररूपी व्यापारियों को, चतुर व्यापारियों को
छेयत्तणस्स	छेकत्वस्य	चातुर्य का
छेया	छेका	विदग्ध
जओ	यतः	जिससे
जगई	जगती	पृथिवी
जत्तं	युक्तं	यत्न के साथ
जध	यथा	जैसे
जम्पिऊण	जल्पितुं	कहने के लिए
जम्पियमत्तं	जल्पितमात्रम्	कथन मात्र को
जंमि	यस्मित्	जिसमें
जरागहिओ (दो)	जराग्रहीतः	जराग्रसित
जलराइसमाणओ	जलराजिसमानकः	जलरेखा के समान
जलहिपडियं	जलधिपतितम्	समुद्र में गिरे हुए
जह्मि	यस्मिन्	जिसमें
जह	यथा	जैसे
जहक्खाद चरण	यथाख्यात चरण	यथाख्यात चारित्ररूपी
परिणामे	परिणामान्	परिणामों को
जहासुयं	यथाश्रुतं	जैसा सुना
जाणइ	जानाति	जानता है
जाणए	जानाति	जानता है
जाणह	जानीहि	जानो
जणिऊण	ज्ञात्वा जण+इऊण	जानकर
जाणित्ता	ज्ञात्वा	जानकर
जाणिय	ज्ञात्वा जण+इय	जानकर
जाणंतोवि	जानतोऽपि	जानता हुआ भी
जायदि	जायते	जन्म लेता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिणवयणेयग्गमणो	जिनवचनैकाग्रमनाः	जिन वचन में एकाग्रमन होकर
जियं	जीवं	जीव को
जीवपयेसाण	जीवप्रदेशानां	जीवप्रदेशों का
जीवसरूपादु	जीवस्वरूपात्	जीवस्वरूप से
जुव्वणं	यौवनं	युवावस्था को
जेसिं	येषां	जिनके
जेहिं	यैः	जिनसे
जोगपउत्ती	योगप्रवृत्तिः	योगप्रवृत्ति, मन, वचन और काय की प्रवृत्ति
जंकिंपिवि	यत्किमपि	जो कुछ भी
झाइज्ज	ध्यायेत्	ध्यान कर
झादि	ध्यायति	ध्यान करता है
झायइ	ध्यायत	ध्यानकर
ठविज्ज	स्थापयेत्	स्थापन करे
ठाणकारणदा	स्थानकारणता	स्थानकारणता
णभप्पदेसा	नभः प्रदेशाः	आकाशप्रदेश
णहाणविलेवणभूसण	स्नानविलेपनभूषण	स्नान, विलेपन, आभूषण
णरए	नरके	नरक में
णरयदुहं	नरकदुःखं	नरक के दुःख को
णवघणविंदेण	नवघनवृन्देन	नवीनमेघ समूह के द्वारा
नाऊण	ज्ञात्वा	जानकर
णाणादेहेसु	नानादेहेसु	नानाशरीरों में
णाणिस्स	ज्ञानिनः	ज्ञानी के
णासए	नाशयेत्	नाश करे
णालियाछक्को	नालिकाषट्कम्	छह घड़ी काल
णासेइ	नश्यति	नष्ट होता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिव्विसयं	निर्विषयं	विषयों से रहित
णिगोएसु	निगोदेषु	निगोदों में
णिद्दावंचणवहुलो	निद्रावंचनवहुलः	निद्रालु और दूसरों के ठगने में प्रवीण
णिद्देसा	निर्देशाः	निर्देश
णिज्जरा	निर्जरा	कर्मों का थोड़ा-थोड़ा क्षय निर्जरा कहलाता है
णिम्मूल	निर्मूल	मूल से उखाड़कर
णिंदइ	निन्दति	निन्दा करता है
णिंदणिज्जाइं	निन्दनीयम्	निन्दनीय कार्यों को
णियअपुण्णपुण्णं	निजापुण्यपुण्यं	अपने पाप और पुण्य को
णियाणरहियस्स	निदानरहितस्य	इन्द्रिय विषयों की इच्छा से रहित
णियभेएणणुहरंतओ	निजभेदेनानुहरन्	अपने भेदों के अनुसार
णिल्लज्जो	निर्लज्जः	निर्लज्ज, वेशर्म
णिव्विण्णाणी	निर्विज्ञानी	विज्ञान और कलाओं से रहित
णीसरिऊणं	निःसृत्य	निकलकर
णेहोवि	स्नेहोऽपि	स्नेह भी
तच्चदो	तत्त्वतः	वास्तविक रूप से (त्व के स्थान पर च और त को द, विसर्ग को ओत्व)
तत्थ	तत्र	जहाँ पर
तत्थारोवियगुण-धणुनिभं	तत्रारोपितगुणधनुनिभं	धनुष पर चढ़ी हुई प्रत्यञ्चा के समान
तप्पेइ	तप्यति	तप्तायमान होता है
तम्हा	तस्मात्	इसलिए

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तवेणकयमाणा	तपसाकृतमाना	तपस्या द्वारा की जाने-वाली
तवोसमायारि	तपःसमाचारी	तपाचरण करनेवाला
तह	तथा	उसी तरह
तावियसीयलस्स	तापितशीतलस्य	गर्म करनेसे शीतल जल का
त्ति	इति	इस प्रकार से
तिलयतुल्लं	तिलकतुल्यं	तिलक के समान
तियस-पव्वओ	त्रिदशपर्वतः	सुमेरु
तियालगुणपज्जएहिं	त्रिकालगुणपर्यायैः	त्रिकालगोचर समस्त गुण-पर्यायों से सहित
तिव्वकसायाविट्ठो	तीव्रकषायाविष्टः	तीव्र कषाययुक्त
तिव्वकषाया	तीव्रकषायाः	तीव्र कषायवाले परिणाम
तिव्वसण्णा	तीव्रसंज्ञा	तीव्र लालसा
तिहुवणतिलयं	त्रिभुवनतिलकं	तीनलोक के शिरोमणि
तिहुअणिंदपरिपुज्जं	त्रिभुवनेन्द्र परिपूज्यं	तीनलोक के इन्द्रों द्वारा
तुरयगयरहवरादीया	तुरगगजरथवरादयः	घोड़े, हाथी, रथादि
तुसिणीओ	तूष्णीकः	मौनवृत्ति के साथ
तेऊ	तेजः	तेजोलेश्या—पीतलेश्या
तेसिं	तेषां	उनका प्राकृत में द्विवचन न होने से सत्तमी वहुवचन का प्रयोग
तोत्तगवेसए	तोत्रगवेषकः	छिद्रों को देखनेवाला, छिद्रान्वेषि
थुव्वदे	स्तूयते	स्तुति करता है
थुव्वमाणो	स्तूयमानः	स्तुति करनेवाला
थूलवया	स्थूलवचसः	बिनाविचारे बोलनेवाले
थूसइ	तुष्यति	सन्तुष्ट होता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थोखसहदाहेक्कमण्डिया	उत्कृष्टवृषभदाहैकमण्डिता	अत्यधिक मदनदाह की पीड़ा से सहित
दइयं	दयितं	पति को
दट्ठुं	दृष्ट्वा	देखकर
दट्ठूण	दृष्ट्वा	देखकर
दमेयव्वो	दमितव्यः	दमन करना चाहिए
दत्तेसणं	दत्तैषणां	दिया हुआ एषणीय शुद्ध-आहार
दव्वदोलेस्सा	द्रव्यतोलेश्या	द्रव्यलेश्या
दहवयणं	दशवदनं	रावण को
दिट्ठपणट्ठा	दृष्टप्रणष्टाः	दिखाई देकर नष्ट होने-वाले या देखते-देखते नष्ट होनेवाले
दिट्ठीतुलाए	दृष्टतुलया	दृष्टतुला, तराजू के द्वारा
दित्ताणलसमसरिसी	दीप्तानलसमसदृशी	जलती हुई अग्नि के समान
दीसए	दृश्यते	देखा जाता है
दीहनिसासं	दीर्घनिश्वासं	लम्बी सांस लेकर
दुक्खसंतत्तो	दुःख सन्तप्तः	दुःख से पीड़ित
दुक्कडस्स	दुष्कृतस्य	पापका
दुगुच्छणीयं	जुगुप्सनीयं	घृणा करने के योग्य
दुद्दमो	दुर्दमः	दुर्जय
दुरासयंपि	दुराश्रयमपि	अति क्रोधी को भी
पुव्वम्मि	पूर्वस्मिन् काले	पूर्व समय में—पहले
दुव्वयणे-दुज्जणेवि	दुर्वचनेदुर्जनेऽपि	दुर्वचन सुनकर दुर्जन को भी
दुस्सील	दुश्शीलः	दुराचारी
दुहिया	दुहिता	पुत्री
दुहावहँ	दुःखावहं	दुःखों का उत्पन्न करनेवाला

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दूरट्ठिएवि	दूरस्थितंऽपि	दूरस्थित होने परभी
दूसइ	दूष्यति	दूषण देता है
देदुमवगासं	दातुमवकाशम्	अवकाश देने के लिए
देवगंधव्वमणुस्सपूइए	देवगन्धर्वमनुष्यपूजितः	देव, गन्धर्व और मनुष्यों द्वारा पूजित
देसवयं	देशव्रतं	देशव्रत
देहणिहित्तं	देहनिक्षिप्तं	शरीर में लगाने या शरीर में प्रवेश करने से
देहपधाणेसु	देहप्रधानेषु	देह प्रधान में
देहसौक्खं	देहसौख्यं	शरीरिक सुख भी
दोण्णं	द्वयोः	दोनों का—कषाय और भोग का
दोसगहणसीलत्तं	दोषग्रहणशीलत्वं	दोषग्रहण करने का अभ्यास
दंसादीया	दंशादिकाः	डाँस, मच्छर, चींटी आदि
धणधण्णे	धनधान्ये	धनधान्य के विषय में
धम्म	धर्मः	धर्म
धम्माधम्मेहि	धर्माधर्माभ्याम्	धर्म और अधर्म से
धम्मिय लोयस्स	धार्मिकलोकस्य	धार्मिक व्यक्तियों को
धरिओ	धृतः	धारण किया है
धारेज्जा	धारयेत्	धारण करे
धूली		धूलिरेखा के समान
नइक्कमे	नातिक्रमेत्	घर में न जावे
नच्चइ	नृत्यते	नाचती है
नन्नेसिं	नान्येषां	न औरों के
नलाडं	ललाटं	ललाट
नहलच्छिं	नभलक्ष्मीम्	आकाश रूपी लक्ष्मी को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाइउच्चे	नात्युच्चैः	अति ऊंचे से
नाइत्तिं	ज्ञातिरिति	जाति के समान
नाइदूरे	नातिदूरं	अति दूर नहीं
नापुट्ठो	नास्पृष्टः	विना बोलाये
निक्कसिज्जइ	निःकास्यते	निकाली जाती है
निण्हविज्जं	निह्नुवीत	छिपाये
निद्देसकरे	निर्देशकरः	पालन करनेवाला
नियागट्ठी	नियागार्थी	मोक्ष को चाहनेवाला
निरट्ठाणि	निरर्थानि	निरर्थक बातों को
निरट्ठं	निरर्थं	निरर्थक वचनों को

निरंतर-सुर-भवण-पडिम-ण्हवणंबुपूरसित—

निरन्तरसुरभवनप्रतिमास्नपनाम्बुपूरसिञ्चित—

निरन्तर देव मन्दिरों में प्रतिमाओं के अभिषेक के जल-प्रक्षाल से सिञ्चित।

निरहंकारस्स	निरहङ्कारस्य	निरहङ्कारों के
निव्वत्ता	निर्वृत्तः	निष्पन्न
निरुट्ठाई	निरुत्थायी	न उठनेवाला
निसीएज्ज	निषीदेत्	बैठा रहे, बैठे
निस्संते	निःशान्तः	अतिशान्त।
नेऊण	नीत्वा	लेकर
पक्खओ	पक्षतः	पक्ष से
पक्खपिण्डं	पक्षपिण्डं	दोनों भुजाओं को जाँघों पर रखकर बैठना
पक्खवायं	पक्षपातं	पक्षपात
पच्चक्खं	प्रत्यक्षं	प्रत्यक्ष
पच्चक्खदिट्ठ-विलीयस्स	प्रत्यक्षदृष्टव्यलीकस्य	प्रत्यक्ष में अपराध देखने वाले का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिओ	पतितः	गिरा
पंडिए	पण्डितान्	पण्डितों को
पडिक्कमे	प्रतिक्रमेत्	आजावे
पडिगाहेज्ज	प्रतिगृह्णीयात्	ग्रहण करे।
पडिच्छन्नम्मि	प्रतिच्छन्ने	चारों ओर से ढंके हुए
पडिजुवइसंकिरीओ	प्रतियुवतिशंकाशीलाः	अन्य स्त्रियों से आशंकालु महिलाएँ
पडिणीए	प्रत्यनीकः	प्रतिकूलवर्ती, शत्रु
पडिणीयं	प्रत्यनीकं	प्रतिकूलता
पडिदाइं	पतितानि	गिरे हुए
पडिभणइ	प्रतिभणति	उत्तर देती है
पडिरूवेण	प्रतिरूपेन	भेष द्वारा
पडिमस्स	पतितस्य	गिरकर पड़े हुए
पडिदं	पतितं	पड़े हुए
पडिलभेज्ज	प्रतिलभेत्	प्राप्त करे
पडिस्सुणे	प्रतिश्रृणुयात्	सुने, स्वीकार करे
पडुच्च	प्रतीत्य	आश्रय लेकर
पण्णो	प्राज्ञः	बुद्धिमान्
पत्तिएण	प्रातिकेन	प्रतीतिकारक वचनों से
पत्थेइ	प्रार्थयति	प्रार्थना करता है
पत्थियव्वा	प्रार्थितव्या	प्रार्थना करनी चाहिए
पत्थिवाण	पार्थिवानां	राजाओं का
पदेशमेत्तस्स	प्रदेशमात्रस्य	प्रदेश मात्र का
पदेसुब्भवो	प्रदेशोद्भवः	प्रदेशोद्भव
पदेसमागासदव्वस्स	प्रदेशमाकाशद्रव्यस्य	आकाशद्रव्य के प्रदेश को
पम्मा	पद्मा	पद्मलेश्या
पयओ	प्रयतः	प्रयत्न से युक्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परकडं	परकृतं	दूसरों के लिए बनाया हुआ
परकलहालोयणं	परकलहालोकनं	परकलह को देखना
परट्ठा	परार्थं	पर के लिए
परदेहविरत्तो	परदेहविरक्तः	परदेह—स्त्री पुत्रादि से विरक्त
परमसद्धाए	परमश्रद्धया	परम श्रद्धा के साथ
परिगिज्झ	परिगृह्य	ग्रहण करके
परिणदं	परिणतं	परिणत — शौरसेनी प्रवृत्ति के कारण त के स्थान पर द
परिणामसरूपेण	परिणामस्वरूपेण	परिणमन स्वरूप होने से
परिणाम सहावादो	परिणामस्वभावात्	परिणमन स्वभाव होने से
परिणामादो	परिणामात्	परिणमन से
परिभवइ	परिभवति	तिरस्कार करता है
परियणसयणं	परिजनस्वजनः	परिवार बन्धुवर्ग
परिभट्ठा	परिभ्रष्टा	भ्रष्ट होकर, भूलकर
परिवाडीए	परिपाट्यां	पंक्ति में
परिवज्जेइ	परिवर्जयति	त्याग करता है
परिसहजओ	परीषहजया	परिषहों का जीतना
परेहिं	परैः	औरों के द्वारा
पविट्ठा	प्रविष्टा	प्रविष्ट हो
पवसणेण	प्रवसनेन	प्रवास करने से
पसायए	प्रसादयेयुः	प्रसन्न करें
पसायपेही	प्रसादप्रेक्षी	प्रसन्नता की अभिलाषा रखता हुआ
पसारिए	प्रसार्यं	फैलाकर
पस्सवणं	प्रस्रवणं	पेशाब को
पसंसये	प्रशंसति	प्रशंसा करता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पल्हत्थियं	पर्यास्तिकां	जंघोपरि वस्त्रवेष्टन रूप पाल को
पहिया	पथिका	पथिक, राहगीर
पहू	प्रभुः	प्रभु—स्वामी
पाउकरिस्सामि	प्रादुःकरिष्यामि	प्रकट करूँगा—यहाँ भविष्यत्काल की क्रिया का प्रयोग यथाशक्ति सर्वज्ञ के वचनों को प्रतिपादन करने के अभिप्राय से है।
पादमूलम्मि	पादमूले	चरणों के निकट में।
पायारतुङ्गसिहरेहिं	प्राकारतुङ्गशिखरैः	चाहार दीवारी और ऊँची-ऊँची चोटियों से।
पावइ	प्राप्नोति	प्राप्त करता है
पावगं	पापकं	दुष्ट मार्ग को
पावं	पापं	पाप
पावंति	प्राप्नुवन्ति	प्राप्त करती हैं
पावदिट्ठित्ति	पापदृष्टिरिति	पाप दृष्टि, इस प्रकार
पिट्ठओ	पृष्ठतः	पीठ करके
पिंडे	पिण्डे	अधिकार या वश में
पिण्डं	पिण्डं	आहार को
पियक्खरेहि	प्रियाक्षरैः	प्रियकर या प्रिय बातों से
पियवयणं	प्रियवचनं	प्रियहित रूपी वचन
पीणथणा	पीनस्तनाः	स्थूल स्तन
पुच्छमाणस्स	पृच्छतः	पूछनेवाले को
पुच्छेज्जा	पृच्छेत्	पूछे
पुज्जेसु	पूज्येषु	पूज्य पुरुषों में
पुज्जसत्थे	पूज्यशास्त्रः	पूज्य शास्त्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुट्ठो	पृष्टेः	पूछा हुआ
पुढविभेद	पृथ्वीभेदः	पृथ्वी रेखा के समान
पुढवीपरियत्तस्स	पृथ्वीपर्यन्तस्य	पृथ्वी पर्यन्त के
पुरओ	पुरतः	आगे से
पुरिसित्थीसंजोए	पुरुष स्त्री संयोगे	पुरुष स्त्री का संयोग जैसे हो, वैसे करने आदि कार्यों का
पुव्वसंस्थुया	पूर्वसंस्तुता	पढ़ने से पूर्व जिनकी स्तुति की गई
पूइकन्नी	पूतिकर्णी	सड़े हुए कानोंवाली
पेच्छिउं	द्दष्टुं	देखने के लिए
पेक्खित्ता	प्रेक्षित्वा पेक्ख + इत्ता	देखकर
पेहाए	प्रेक्ष्य	विचार करके
पोग्गलजीवप्पगस्स	पुद्गलजीवात्मकस्य	पुद्गलजीवात्मक का
पोग्गलजीवणिवहो	पुद्गलजीवनिवहः	पुद्गल और जीव से संयुक्त
पोग्गलदव्वप्पमुहं	पुद्गलद्रव्यप्रमुखैः	पुद्गलद्रव्यादिक से
पोग्गलदव्वेहिं	पुद्गलद्रव्यैः	पुद्गलद्रव्यों से
पोग्गलदव्वपगा	पुद्गलद्रव्यात्मकाः	पुद्गलद्रव्यात्मक
पंजलीउडो	प्राञ्जलिपुटः	हाथों को जोड़कर
फणओ	फलदः	कुवेर
फरुसेण	परुषेण	कठोर वाक्यों से
फरुसंवि	परुषमपि	कठोर भी
फलाइं	फलानि	फलों को
फलभरियरुक्खमेगं	फलभरितवृक्षमेकं	फलों से पूर्ण किसी एक वृक्ष को
फासुयं	प्रासुकं	अचित्त
फिच्चाणं	कृत्यानां	कार्यों के
फुडं	स्फुटं	स्पष्ट

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

फंदणविसेसा	स्पन्दनविशेषः	स्पन्दन विशेष रूप
वज्झदि	वध्येत	बंधता है
बंधचउक्कं	बन्धचतुष्कं	कर्मबन्ध चतुष्क-प्रकृति, प्रदेश, स्थिति और अनुभाग बन्ध
वलगव्विओ	वलगर्वितः	वल का अहंकार
वहुएहिं भणिएहिं	वहुभिः भणितैः	अधिक कहने से
वहुकूडकवडभरियाण	बहुकूटकपटभृतानां	नाना प्रकार के छल-कपटों से भरे हुओं को।
वहुदुक्खं		वहुत दुःखको
वहुमज्झ संठियो	वहुमध्यसंस्थितः	उसके ठीक मध्य में स्थित
वाहिरदव्वं	बाह्यद्रव्यं	वाह्य वस्तुओं को
बुद्धपुत्त	बुद्धपुत्रः	बुद्ध-आचार्य पुत्र
बुद्धणं	बुद्धानाम्	आचार्यों के
बुद्धेरायरियं	बुद्धैराचरितं	तत्त्ववेत्ता आचार्यों द्वारा आचरण किया गया
बुद्धोवघाई	बुद्धोपघाती	आचार्यों का घात करने वाला
बुब्भन्ति	मह्यन्ते	धारण करते हैं
बेंति	ब्रुवन्ति	कहते हैं
वोहित्थवायसेण व	प्रवहणवायसेनेव	जहाज के काक के समान
भक्खए	भक्षयेत्	आहार करे
भणिया	भणिता	कही
भवियजणाणंदजणणीओ	भविकजनानन्दजननीः	भव्यजीवों को आनन्द उत्पन्न करनेवाली
भमिऊण	भ्रान्त्वा	भ्रमण करके
भवीय	भूत्वा	होकर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावना — बारबार चिन्तन करने को अनुप्रेक्षा या भावना कहते हैं।

भासेज्जा	भाषेत	भाषण करें
भिक्खुणो	भिक्षोः	भिक्षु के
भुंजइ	भुङ्क्ते	खाता है
भुंजेदि	भुनक्ति	भोगता है
भूयाणं	भूतानां	वनस्पति आदि भूतों का
भोउवभोयं	भोगोपभोगं	भोगोपभोग नाम का
भोयणतंबोलवत्थु-माइणं	भोजनताम्बूलवस्त्रादीनां	भोजन, ताम्बूल, वस्त्र आदि का
भंडणवसियरणकाम सत्थाणं	भण्डणवशीकरण कामशास्त्राणां	भांडक्रिया, वशीकरण, मन्त्र तथा वर्णन करनेवाले कामशास्त्रों का
मज्जारपहुदिधरणं	मार्जारप्रभृतिधरणं	विलाव आदि हिंसक जन्तुओं को पालना
मज्जेण	मद्येन	शराव से
मणवयणकायसुद्धी	मनवचनकायशुद्ध्या	मन, वचन और काय की शुद्धि से
मणहरविसयेहिंतो	मनोहरविषयेभ्यः	मनोहर विषयों से
मणुलड्डुव		संकल्प मात्र से, मन में लड्डू खाने की कल्पना करने के समान
मणोरह-दुम	मनोरथद्रुमाः	मनोरथ रूपी वृक्ष
मणोरुई	मनोरुचिः	गुरुओं के मन की रुचि
भण्णदि	भण्यते (भण्ण + दि—ते के स्थान पर परस्मैपद)	कहा जाता है
मण्णई	मन्येत	मानता है
मण्णमाणो	मन्यमानः	जानता है
मम्मयं	मर्मकम्	मर्मयुक्त वचन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भयमत्तो	मदमत्तः	नशे से चूर, वेहोश
मदण-सर-भिन्न-हिययं	मदनशरभिन्नहृदयं	कामदेव के बाण से भग्न हृदयं
मयंकपडिविंवं	मृगाङ्कप्रतिविम्बम्	चन्द्रप्रतिबिम्ब को
मलमुत्ताणं	मलमूत्राणां	मलमूत्रों का
मलपंकपुव्वम्	मलपङ्कपूर्वकम्	मलपङ्कयुक्त को
महव्वयं	महाव्रतं	महाव्रत
मह	मम	मेरे
महज्जुई	महाद्युतिः	महाद्युतिवाला
महादरं	महादरं	आदर
महापहे	महापथे	राजमार्ग में
महिड्ढिए	महर्द्धिकः	महाऋद्धिवाला
महिला-ओसहिं	महिलौषधिं	महिला रूपी औषधि को
सव्वदुलहदुलहं	सर्वदुर्ल्लभ दुर्ल्लभं	दुर्लभ से भी दुर्लभ
मही—महिलाए	महीमहिलायाः	पृथ्वीरूपी महिला के
महुमहोव्व	मधुमथन इव	विष्णु के समान
महुरत्तणं	मधुरत्वं	मीठापन, मिठास
माणसे दुक्खे	मानसैः दुःखैः	मानसिक दुःखों से
भारहं	भारतं	भारतवर्ष
माहं	माऽहं	मुझे मत हो
मिग	मृगः	पशु
मिउंपि	मदुमपि	कोमल स्वभाव वाले को भी
मिच्छकसायेहिं	मिथ्याकषायैः	मिथ्यात्व और कषायों के द्वारा
मिदू	मृदुः	कोमल परिणामी
मुचइ	मुञ्चति	छोड़ता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिच्चुणा	मृत्युना	मृत्यु से
	ऋकार के स्थान पर इकार और त्य के स्थान पर च्च	
मुत्तामुत्ता	मूर्तामूर्ता	मूर्त, अमूर्त
मुणह	जानीहि	जानो
मुणिदे	ज्ञाते	जान लेने पर
मुणिऊण	ज्ञात्वा	जानकर
मुणेदव्व	ज्ञातव्याः	जानना चाहिए
मुत्तिप्पहीणाणं	मूर्तिप्रहीणानां	अमूर्त द्रव्यों के
मुसं	मृषां	झूठ को
मुहरी	मुखारिः	मुखर, वाचाल
मोत्तूण	मुक्त्वा	छोड़कर
मोसं	मृषां	झूठ को
मोहजभावा	मोहजभावान्	मोह से उत्पन्न हुए भावों को
मोहपदेसेहिं	मोहप्रदेशाभ्यां	मोह और द्वेष के द्वारा
मोहाणुरायजणयं	मोहानुरागजनकम्	मोहानुराग को उत्पन्न करनेवाला
मोहादिएहिं	मोहादिकैः	मोहादिककर्मों से
मोहोदएण	मोहोदयेन	मोहोदय से
मंदकसाया	मन्दकषायाः	मन्दकषाय रूप परिणाम
रक्खदे	रक्षते	रक्षा करता है
रज्जदे	रज्यति	राग करता है
रज्जूए	रज्वा	रस्सी से
रण्णमज्झदेसम्मि	अरण्यमध्यदेशे	वन के मध्य में
रत्थयअंगणे	रथ्याङ्गणे	चौराहे पर
रमइ	रमते	रमण करता है
रमणीण	रमणीनाम्	स्त्रियों के
रयणुव्व	रत्नमित्र	रत्न की तरह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रययपट्टोव्व	रजतपट इव	रजत वस्त्र के समान
रायद्दोसा	रागद्वेषाः	राग और द्वेष
रुट्ठो	रुष्टः	नाराज होकर
रुयन्ती	रुदन्ती	रोती हुई
रुव-जोव्वण-गुणड्ढा	रूपयौवनगुणाढ्या	रूप यौवन और गुणों से युक्त
रूवा	रूपात्	आत्मस्वरूप से
रूसइ	रूष्यति	क्रोध करता है
रोई	रोगी	रोगी
लउडि	लकुटि	लाठी
लक्खाखलादिगहणं	लाक्षाखलादिग्रहणं	लाख, खाल, विष या अन्य घातक वस्तुओं को देना, लेना, व्यापार आदि करना
लच्छी	लक्ष्मी	सम्पति
लक्खणमेयं	लक्षणमेतत्	ये चिह्न
ललियक्खरकव्व-वन्धने	ललिताक्षरकाव्यवन्धने	मधुर और ललित पदावली युक्त काव्य
लवेज्ज	लपेत्	बोले
लेस्सागुणजाणयक्खादा	लेश्यागुणज्ञापकाख्याता	लेश्या के स्वरूप को जानने वालों ने
लहुदक्खोववेया	लघुदाक्ष्योपपेताः	लघु-शीघ्र कार्य करनेवाले, चतुर, गुणों से युक्त
लहेइ	लभते	प्राप्त करता है
लहुं	लघुं	शीघ्र
लाभइस्संति	लाभयिष्यन्ति	लाभ देंगे
लावण्णं	लावण्यम्	सौन्दर्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लिंगेहिं	लिंगैः	चिह्नों से
लिंपइ	लिंपति	लिप्त करता है
लीलावलोयणेणवि	लीलावलोकनेनापि	लीला, कौतूहल वश देखने से ही
लोयाणुपेहाओ	लोकानुप्रेक्षा	लोक भावना
लोहणासणट्ठं	लोभनाशनार्थम्	लोभ के नाश करने के लिए
लोहुदओ	लोभोदयः	लोभ का उदय
लंघित्ता	लङ्घयित्वा	उल्लंघन करके
वङ्कभणियं	वक्रभणितं	व्यञ्जनायुक्त बातें
वच्चति	वव्रति	प्राप्त होता है
वज्जए	वर्जयेत्	त्याग दे, छोड़ देवे
वट्टणा	वर्तना	प्रतिपर्याय में वर्तना रूप
वट्टदि	वर्तते	है
वणप्फदिछेओ	वनस्पतिच्छेदः	वनस्पति वृक्षादिका छेदन
वणसिरी	वनश्री	वनशोभा
वण्णरसगंधफासा	वर्णरसगन्धस्पर्शाः	वर्ण, रस, गन्ध और स्पर्श
वण्णोदयेण	वर्णोदयेन	वर्णनाम कर्म के उदय से
वदिवददो	व्यतिपततः	मन्दगति से गमन कर रहा हो
वयजुत्ताणं	व्रतयुक्तानां	व्रतयुक्तजीवों के
वयं	व्रतं	व्रत
वराओ	वराक !	दीन
वरुज्जाणे	वरोद्याने	सुन्दर उद्यान-वगीचे में
वसइ	वसति	रहता है
वसंगदो	वशंगतः	वश में हुआ
वागरिज्ज	व्यगृणीयाद्	कहे
वागेर	व्यागृणीयात्	वोले

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वारसविहेण	द्वादशविधेन	वारह प्रकार के तपों से
वावारो	व्यापारः	प्रवृत्ति
वाहए	वाहकः	सवार
वाहित्तो	व्याहृतः	बुलाया हुआ
विउलो	विपुलः	विशाल
विगयभया	विगतभया	भयरहित
विजुदा	वियुक्ताः	रहित
विज्जाहराहम	विद्याधराधमः	नीच विद्याधर
विज्झवेज्जं	विध्यापयेत्	क्रोधरूपी अग्नि को शान्त करें
विट्ठं	विष्ठां	विष्ठा को
विणए	विनये	विनय में
विणीए	विनयी	विनयवान्
विण्णादं	विज्ञातम्	जाना, ज्ञात किया
विदीया	द्वितीया	दूसरी
विप्पमुक्कस्स	विप्रमुक्तस्य	विप्रमुक्त, रहित
विचारमाणोवि	विचारयन् अपि	विचार करता हुआ भी
विरायंति	विराजन्ति	विराजते हैं
विरोहियसंधियस्स	विरोधितसन्धितस्य	विरोधी के साथ मेल करनेवाले का
विलओ	विलयः	विनाश
विलभं	वनितां	स्त्री को
विवज्जित्ता	विवर्ज्य	वर्ज करके
विचिट्ठो	विचेष्टः	वेसुध हो
विवाहओ	व्यापादितः	मारा
विविहसुरसोक्खं	विविधसुरसौख्यं	नाना प्रकार के देव जाति के सुखों को
विसये	विषयान्	विषयों को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विहलो	विफलः	विना प्रयोजन, निरर्थक
विहिणा	विधिना	विधाता ने
वीचिपउरम्मि		तरंगों से भरे हुए
वुच्चई	उच्यते	कहा जाता है
वुड्ढो	वृद्धः	वृद्ध, बूढ़ा
वेणुवमूल	वेणूपमूलः	बांस की जड़
वेत्ते	वेत्रान्	बेंत को
वेरग्गभावणादो	वैराग्यभावनातः	वैराग्यभावना से
वेरधरणं	वैरधारणं	शत्रुता ग्रहण करना
वेसं	द्वेष्यं	द्वेष का करण
वेहदि	वेधैः	वेधों से
वोच्छं	वक्ष्ये	कहूँगा
वंदित्ता	वंदित्वा ; वंद+इत्ता	वन्दना करके
सई	सती	सती
सकालपत्ता	स्वकालप्राप्ता	स्वकाल प्राप्त
सक्कदि	शक्नोति	समर्थ है
सच्छिदरा	स्वच्छेतराः	प्रशस्त और अप्रशस्त
सडणं	सटनं	सड़ना
सण्णिहा	सन्निभः	समान
सत्तिविवाओ	शक्तिविपाकः	फलदायिनी शक्ति के विपाक को
सद्धिं	सार्धं	साथ
सन्धीसु	सन्धिषु	दो घरों की सन्धियों में
सभावसमवट्ठिदो	स्वभावसमवस्थितः	स्वभाव में अवस्थित
सब्भावबाहिरेहिं	सद्भावबहिर्भूतैः	सद्भाव से रहितों के द्वारा
समच्छरमणा	समत्सरमना	मत्सर सहित, मात्सर्यभाव सहित

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समरेसु	समरेषु	युद्ध में
समसुक्खणिलीणो	समसौख्यनिलीनः	समता भाव रूपी सुख में लीन होकर
सम्मइ	श्राम्यति	कष्ट पाता है
सम्मत्तं	सम्यक्त्वं	सम्यक्त्व
समाचरे	समाचरेत्	ग्रहण करें
समाणीया	समानीता	लाई
समासदो	समासतः	संक्षेप से
समुद्दिट्ठं	समुद्दिष्टं	कहा है
सयलकुट्ठियाणं	सकलकुत्स्थितानां	समस्त कुत्सित वस्तुओं को
सयलतिहुयणे	सकलत्रिभुवने	समस्त तीनों लोकों में
सया	सदा	सदा, निरन्तर
सरलसहावेहि	सरलस्वभावेन	सरल स्वभाव से
सरिसओ	सदृशः	समान
सरिसी	सदृशी	समान
सरेइ	स्मरति	स्मरण करता है
सवदं	शपथं	कसम
सव्वण्ह	सर्वज्ञः	सर्वज्ञ
सव्वत्थ	सर्वत्र	सर्वत्र
सव्वसमपासी	सर्वसमदर्शी	सभी विषयों में समदर्शी
सव्वसो	सर्वतः	सभी ओर से
सव्वायरेण	सर्वादरेण	सभी प्रकार के आदर से
सव्वायासमणन्तं	सर्वाकाशमनन्तं	समस्त आकाश अनन्त है
सव्वेसिं	सर्वेषां	समस्त
ससहावं	स्वस्वभावं	आत्म स्वभाव को
ससिवयणे	शशिवदने	चन्द्रमुखी
सहलो	सफलः	फल सहित

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सहसत्ति	सहसा	अचानक
सहेदि	सहते	सहन करता है
साणस्स	शुनः	कुत्ते का
सारमेया	कुक्कुरा	कुत्ते
सारित्थं	सदृशं	समान
सारंगं	सारङ्गं	हरिण को
सावज्जवज्जिदो	सावद्यवर्जितः	पाप कार्यों से रहित
सावज्जं	सावद्यं	सावद्य, सदोष वचन को
सासए	शाश्वतः	निरन्तर
सासयं	शाश्वत	नित्य
साहदि	साधयति	सिद्ध करता है
साहा	शाखा	शाखा
साहुगुरुपूजणरदो	साधुगुरुपूजनरतः	मुनि, गुरु, आदि की पूजा में आसक्त
साहुपडिचोइएणं	साधुप्रति चोदितेन	साधु के द्वारा प्रेरित होने से
सिक्खिज्जा	शिक्षेत	सीखे
सिढिलन्ति	शिथिलयन्ति	शिथिल करते हैं
सियसालो	श्वेतशाला	श्वेतगृह
सिया	स्यात्	हो
सिल	शिला	पत्थर की रेखा के समान
सिविणन्तरे वि	स्वप्नान्तरेऽपि	स्वप्न में भी
सिहरम्मि	शिखरे	शिखर पर
सिहामणी	शिखामणिः	शिखामणि अर्थात् सिद्ध हो जाता है
सीएण	शीतेन	शीतल वचनों से
सीसा	शिष्यः	शिष्य
सीसेहिं	शिरोभिः	सिर से

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सीहस्स	सिंहस्य	सिंह के
सुक्कलेस्सा	शुक्लेश्या	शुक्ल लेश्या
सुचोइए	सुचोदितः	सुप्रेरित
सुट्ठु	सुष्ठुः	अच्छी तरह
सुट्ठ दुग्गंधं	सुष्ठुदुर्गन्धं	अत्यन्त दुर्गन्धित
सुणिऊण	श्रुत्वा (श्रु-सुण-इतूण)	सुनकर
सुणिट्ठिए	सुनिष्ठितं	अच्छा रस उत्पन्न हुआ
सुणिच्चइत्ता	सुनिश्चियित्वा	निश्चय करके
सुणिया	श्रुत्वा	सुन करके
सुणी	शुनी	कुत्ती
सुणेह	श्रुणुत	सुनो
सुदूरं	सुचिरं	दीर्घकाल तक
सुन्नमणो	शून्यमना	शून्यमन
सुपक्किक्ति	सुपक्वमिति	अच्छा पकाया हुआ
सुमिच्चवग्गा	सुमित्रवर्गाः	सुमित्रवर्ग
सुमित्त	सुमित्रं	अच्छे मित्र
सुरधणुतडिव्वचवला	सुरधनुतडिद्वच्चपला	इन्द्रधनुष और बिजली के समान चंचल
सुरघरसिहरेसु	सुरगृहशिखरेषु	देवमन्दिरों के शिखरों पर
सुरिंदाण	सुरेन्द्राणां	इन्द्रों का
सुलट्ठिक्ति	सुलष्टमिति	बहुत मनोहर
सुविणीय संसए	सुविनीत संशयः	सर्वथा सन्देह रहित
सुहडा	सुभटा	योद्धा
सुहडे	सुहृतम्	हरा गाय, अच्छा हुआ इसका कडुआपन हट गया
सुहदुक्खस्सबहुस्सं	सुखदुःखस्यबहुशस्यं	सुखदुख आदि अनेक प्रकार के धान्य को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुही	सुखी	सुखी
सुहुमादो	सूक्ष्मात्	सूक्ष्म से लेकर
सुहेम	सुहेम	सुवर्ण
सूयरस्स	शूकरस्य	शूकर का
सूयरे	शूकरः	शूकर
सूर-रसिणो	सूर्यरश्मयः	सूर्य किरणें या सैनिकों की रस्सी
से	सः	वह
से	तस्य	उसकी
सेल	शैलः	पत्थर
सेवदि	सेवते	सेवा करता है
सेविज्ज	सेवेत	सेवन करे
सोढा	षोढा	छः भेद
सोयभयवहुलो	शोकभयवहुलः	शोकाकुलित और भयग्रस्त
सोवाणपएदिव	सोपानपदैखि	सीढ़ी के समान
सोहए	शोभते	शोभित होता है
सोई	शोकी	शोकसहित
संखेवादो	संक्षेपात्	संक्षेप से
संगासत्ताण	सङ्गाशक्तानां	गृहस्थों का
संचदि	संचिनोति	संचय करता है
संपज्जइ	सम्पद्यते	है
संपरिवुडा	संपरिवृत्ता	सहित
संपुडकाओ	संपुटकायः	काय को संकोच कर
संवुडे	संवृत्ते	दोनों ओर दीवारों से संवृत्त स्थान में
संसग्गिं	संसर्गं	संसर्ग को

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संसरणं	संसरणं	गमन-भ्रमण होने से ही संसरणं संसार कहा जाता है
संसारदूरमेरं	संसारदूरमर्यादं	संसाररूपी मर्यादा अत्यन्त दूर
हणदि	हन्ति, हण + ति	घात करता है
हत्थउडपाणियाइव	हस्तपुटपानीय इव	अंजली में रखे हुए जल के समान
हयासा	हताशा	निराशा
हरिऊण	हृत्वा	हरणकर
हरिद्दराएण	हरिद्रारागेण	हल्दी के रंग के समान
हरिहरबंभादीया	हरिहरब्रह्मादयः	हरि, नारायण, हर, रुद्र और ब्रह्मा आदि
हवदि	भवति (हो के स्थान पर हव तथा त् के स्थान पर द होने से हवदि)	
हवे	भवेत्	होता है
हवेइ	भवति (हो+इ+हव+इ)	होता है
हसविया	हासिता	हँसी के पात्र
हियपरमत्थं	हृदयपरमार्थं	हृदय की गहराई को
हियं	हितम्	हितको
हेउं	हेतुं	कारण
हु	स्फुटं	स्पष्टरूप से
हूयं	भूतं	हुआ
होइ	भवति	होता है
होदि	भवति भू+होती शौरसेनी प्रवृत्ति के कारण ह के स्थान पर द	होता है
होसइ	भविष्यति	होगा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिशिष्ट

अगडदत्त कहा

कथावस्तु

शंखपुर में नानागुणों से अलंकृत सुन्दर नाम का राजा राज्य करता था। इसकी पट्टरानी का नाम सुलसा था। इस सुलसा के गर्भ से अगडदत्त नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। यह वालक क्रमशः वड़ा होकर युवावस्था को प्राप्त हुआ। युवावस्था के मद के कारण अगडदत्त धर्म-दयारहित, अविनीत, असत्यवादी, व्यभिचारी और घमंडी हो गया। यह मद्य पीता, मांस भक्षण करता और जुआ खेला करता था, तथा आवारागर्दी करता हुआ इधर-उधर घूमा करता था। नगर की प्रजा कुमार के दुष्कृत्यों से तंग हो गई थी। अतः नगरवासी साहस कर एक दिन राजा के पास गये और कहने लगे—'महाराज! कुमार ने अपनी कार्यों से हमलोगों को तवाह कर डाला है। अव आपही रक्षक हैं; जैसा उचित हो, आदेश दीजिये।"

कुमार के कुकृत्यों को सुनकर महाराज सुन्दर को वहुत दुःख और क्रोध हुआ और उन्होंने कुमार को राज्य से निष्कासित करने की घोषणा की। अपने निष्कासन का आदेश अवगत कर कुमार अगडदत्त को क्षोभ हुआ और वह एकमात्र तलवार के भरोसे वाराणसी की ओर चल दिया। दुर्गम वन, पर्वत और नदियों को पार करते हुए वह वाराणसी नगरी में पहुँचा। इस महान् नगरी से अपरिचित रहने के कारण कुमार किंकर्त्तव्य विमूढ़ होकर इधर-उधर घूमने लगा।

उसे सड़क के किनारे कुछ राजकुमार शिष्यों सहित खड़ा हुआ सकल कला और शास्त्रों में प्रवीण, परोपकारी, दयालु एवं दूसरे के मन के भावों का ज्ञाता एक विद्वान् गुरु दिखलायी पड़ा। इसका नाम पवन-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चण्ड था। ये राजकुमारों को हाथी, घोड़े और रथसंचालन की शिक्षा के साथ विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चलाने की शिक्षा भी देते थे। कुमार अगडदत्त इनके चरणों में गिर गया और साष्टाङ्ग दण्डवत किया। गुरु ने प्रभावित हो पूछा—"तुम कौन हो और कहाँ से आये हो?"

कुमार ने एकान्त में अपने दुष्कृत्यों के साथ शंखपुर से हुए राज्य-निष्कासन की कथा कह सुनायी। अगडदत्त के इस सत्य और स्पष्ट वार्तालाप से गुरु पवनचण्ड बहुत प्रसन्न हुए और उसे भविष्णु समझकर अपना शिष्य बना लिया। वे उसे अपने घर ले गये और अपना भतीजा बताकर उसकी रहने की व्यवस्था भी कर दी। कुमार अगडदत्त भोजन आदि की समस्त सुविधाओं को प्राप्त कर विविध प्रकार की कला और विद्याओं का अभ्यास करने लगा। अगडदत्त ने गुरु की कृपा और अपने परिश्रम से बहत्तर कलाओं को थोड़े ही समय में सीख लिया। अगडदत्त पवनचण्ड के पवनोद्यान में बैठकर विद्याभ्यास किया करता था। इस उद्यान के समीप ही प्रधान सेठ का सुन्दर महल था। इस सेठ की मदन-मंजरी नाम की रूपवती कन्या थी। इस कन्या ने अपने भवन की छतपर से कुमार अगडदत्त को देखा और उसके रूप सौन्दर्य से मुग्ध हो प्रेम करने लगी। उसने एक दिन कुमार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए अशोक का गुच्छा उसके ऊपर फेंका, जिससे अध्ययन में संलग्न कुमार का ध्यान मदनमंजरी की ओर गया। एक ही दृष्टि में उसे देखकर कुमार सोचने लगा—यह देवांगना है या नाग कन्या? यह लक्ष्मी के समान है या साक्षात् सरस्वती है? कुमार ने उससे पूछा—"तुम कौन हो? मेरे विद्याभ्यास में तुमने क्यों विघ्न किया है?"

मदनमंजरी—"मैं इस नगर के प्रधान सेठ बन्धुदत्त की पुत्री हूँ और मेरा विवाह भी इसी नगर में हुआ है। कामदेव के समान मनोरम रूप वाले जिस दिन से आपको देखा है, उसी दिन से मेरी नींद चली गयी है, भोजन रुचिकर प्रतीत नहीं होता और सिर में अपार वेदना रहती है। मैं आपसे प्रेम करती हूँ। जबतक आप मुझे स्वीकार नहीं करेंगे, मैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वस्थ नहीं हो सकती हूँ। आप विश्वास कीजिए कि आपके अभाव में मेरा जीवित रहना संभव नहीं।"

कुमार अगडदत्त ने उसे आश्वासन दिया और कहा कि जब मैं विद्या समाप्त कर इस नगरी से जाने ललूँगा, तो तुझे अपने साथ ले चलूँगा।

एक दिन वह कुमार अगडदत्त घोड़े पर संवार राजमार्ग से जा रहा था कि उसने लोगों का कोलाहल सुना। उसने देखा कि एक मदोन्मत्त हाथी लोगों को मारता हुआ दौड़ रहा है। नगर में चारों ओर भगदड़ मच गयी है। सभी ओर त्राहि-त्राहि की आवाज आ रही है। कुमार घोड़े से उतरा और उतरकर उसने उस पागल हाथी को ललकारा। ललकार सुनते ही हाथी कुमार पर झपटा। कुमार ने अपना चादर हाथी की सूंड़ में फँसाकर उसकी पीठ में एक घूँसा जमाया और उसके ऊपर सवार होकर उसे मदहीन कर दिया तथा गजशाला में ले जाकर बाँध दिया। हाथी को वश करने के इस समाचार को सुनकर राजा कुमार से बहुत प्रसन्न हुआ और उसे अपने यहाँ बुलाया। राजा ने कुमार का समस्त परिचय प्राप्त किया।

इसी समय नगर के प्रमुख व्यक्ति राजा के पास पहुँचे और अभिवादन कर उन्होंने निवेदन किया कि महाराज! कोई चोर हमलोगों का धन रात में चुरा ले जाता है। उसने सारे नगर को तबाह कर दिया है। प्रति दिन किसी न किसी व्यक्ति के घर चोरी होती है। हम नगरनिवासी निर्धन हो गये हैं। राजा ने नगर रक्षकों को कड़ी आज्ञा देकर चोरी को रोकने के लिए सतर्क किया, पर चोरी बन्द न हो सकी। कुमार अगडदत्त ने राज से निवेदन किया कि महाराज, आप मुझे आज्ञा दें तो मैं उस चोर को सात दिन के भीतर पकड़ कर ला दूँगा और न ला सकूँगा तो अग्नि में प्रविष्ट होकर जल मरूँगा।

अपनी प्रतिज्ञानुसार अगडदत्त चोर की तलाश करने में लग गया। उसने चोरों के अड्डों को घूम-घूम कर देखा, पर कहीं भी उस चोर का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पता नहीं चला। प्रतिज्ञा किये उसे छः दिन बीत गये। सातवें दिन संध्या समय नगर के बाहर सुनसान बगीचे में बैठा हुआ वह सोचने लगा कि अब तो अग्नि में जलकर मरना ही है। क्या मैं यहाँ से अपने नगर को चला जाऊँ या कहीं अन्यत्र भाग जाऊँ? चोर का कहीं पता नहीं लगा, अब संध्या होने में देरी नहीं है।

कुमार अगडदत्त इस प्रकार चिन्तामग्न बैठा हुआ था कि एक परिव्राजक—संन्यासी काषायले वस्त्र पहने हुए, मुण्डित सिर हाथ में त्रिदण्ड लिये कुछ गुनगुनाता हुआ उपस्थित हुआ। उसकी वेषा-भूषा और रहन-सहन से कुमार ने उसे चोर समझा। वह आगन्तुक पुरुष कुमार से मधुर वचनों में बोला—"महानुभाव! तुम कौन हो और यहाँ किस कार्य से बैठे हो?"

बुद्धिनिपुण कुमार ने उत्तर दिया—मैं गरीबी से पीड़ित चिन्तामग्न बैठा हूँ। सोच रहा हूँ कि भरण-पोषण के निमित्त कोई कार्य मिल जाय।

आगन्तुक—पुत्र! चिन्ता मत करो, आज ही मैं तुम्हारी दरिद्रता को दूर कर दूँगा।

कुमार—आपकी अनुकम्पा से मेरी दरिद्रता दूर हो जाय तो मैं आपका बड़ा अनुगृहीत होऊँगा।

इस प्रकार बातचीत करते हुए रात्रि आ गयी। जब मध्यरात्रि हुई तो वह आगन्तुक तलवार निकाल कर शीघ्रता-पूर्वक नगर की ओर चलने लगा और कुमार से बोला—"तुम भी मेरे पीछे-पीछे आओ, आज तुम्हारी इष्ट सिद्धि हो जायगी।" परिव्राजक ने नगर में पहुँच कर एक धनिक वैश्य के घर में सेंध लगायी और मूल्यवान् समानों को निकाल-निकालकर बाहर करने लगा। उसने कुमार से कहा—तुम यहीं रहो, मैं निकट के देवमन्दिर से कुछ व्यक्तियों को बुलाता हूँ। वह कुछ व्यक्तियों को बुला लाया और उनके ऊपर समान रखवाकर नगर से बाहर जाने लगा। वे सभी लोग नगर के बाहर एक पुराने उद्यान में पहुँचे और रात्रि बिताने के लिए वहीं सो गये। उस परि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्राजक ने उठकर तलवार से उन सामान ढोनेवालों को मार डाला। वह कुमार को भी मारने के लिए ढूँढ़ने लगा। पर कुमार पहले से ही सावधान था, अतः दोनों में युद्ध होने लगा। कुमार की तलवार के वार को वह सह न सका और घायल होकर भूमि पर गिर गया। वह अपना परिचय देने लगा—

"मेरा नाम भुजंगम चोर है। श्मशानभूमि में जमीन के नीचे मेरा भवन है। वीरमती नाम की मेरी बहन है। तुम वड़ के वृक्ष के नीचे जाकर उसको बुलाना। वह तलघर का दरवाजा खोल देगी। तुम उसके साथ विवाह कर लेना और समस्त धन को ग्रहण कर वहीं सुखपूर्वक निवास करना। अथवा कुछ दिन वहाँ रहकर चले आना।"

भुजंगम चोर के निर्देशानुसार वह श्मशानभूमि में पहुँचा और संकेतानुसार उसने वीरमती से तलघर का दरवाजा खुलवाया। वीरमती ने उसका स्वागत किया और भाई का घातक समझकर उससे बदला लेना चाहा। उसने कुमार को एक पलंग पर सुला दिया और स्वयं ऊपर चली गयी।

कुमार सोचने लगा कि मुझे यहाँ सुलाने में कोई रहस्य है। अतः मैं यहाँ से हटकर दूर चला जाता हूँ। इसी बीच उस वीरमती ने छत के ऊपर से मशीन द्वारा एक पत्थर की विशाल चट्टान उस पलंग पर गिरायी, जिससे पलंग चूर-चूर हो गया। वह हँसती हुई नीचे आई, पर कुमार को एक कोने में हँसते हुए पाया। कुमार ने उस विश्वास-घातक के वाल पकड़ लिये और उसे राजा के पास ले आया। राजा से उसने भुजंगम चोर की सारी कथा कह सुनायी और उसकी बहन वीरमती को वहाँ उपस्थित किया। राजा ने चोर का समस्त धन नागरिकों को दिला दिया। प्रसन्न होकर राजा ने कुमार के साथ अपनी कन्या कमलसेना का विवाह भी कर दिया। दहेज में कुमार को एक हजार श्रेष्ठ गाँव, सौ हाथी, एक लाख पैदल सेना, दस हजार घोड़े और विपुल भण्डार दिये। इतना सम्मान, धन और वैभव प्राप्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर भी कुमार मदनमंजरी के बिना सबको निरर्थक समझता था।

एक दिन मदनमंजरी की एक दासी कुमार के पास आई और कहने लगी कि आपके विरह में मदनमंजरी जल रही है। आपके अभाव में उसका जीवित रहना संभव नहीं। अतः आपको चलकर उसको सान्त्वना देना चाहिए।

कुमार ने दासी के वचन सुनकर कहा—तुम जाकर मदनमंजरी से कहो कि मैं समय पाकर अवश्य ही उसे सुखी बनाऊँगा। वह अपने मन में चिन्ता न करे।

कुछ दिनों के पश्चात् एक दिन ऊँट पर सवार एक व्यक्ति आया। कुमार उस व्यक्ति से बड़ी प्रसन्नतापूर्वक मिला और उससे अपने माता पिता का कुशल समाचार पूछा। उस व्यक्ति ने कहा—"तुम्हारे माता-पिता कुशल हैं। पर यदि तुम जल्दी चलकर उनसे नहीं मिलोगे, तो वे रो-रोकर तुम्हारे वियोग में अपने प्राण दे देंगे। तुम से मिलने के लिए वे अत्यन्त लालायित हैं।"

कुमार अपने स्कन्धावार को तैयार कर राजा के पास आया और कहने लगा कि—"महाराज! मेरे पिता के यहाँ से दो व्यक्ति मुझे बुलाने के लिए आये हैं। आप जैसा आदेश दें, किया जाय।" राजा—"कुमार जाओ और अपने माता-पिता को संतुष्ट करो"।

राजा का आदेश प्राप्त कर कुमार मदनमंजरी के साथ शंखपुर के लिए रवाना हुआ। रास्ते में चलते-चलते वह महाभयंकर वन में पहुँचा। अब वर्षा ऋतु आ गई थी। जिस वन से कुमार जा रहा था, उस वन में एक भिल्लपति ससैन्य निवास करता था। कुमार की सेना के साथ उस भिल्लराज की सेना का युद्ध होने लगा। पहले तो कुमार की सेना ने भिल्लसेना को तितर-बितर कर दिया, पर बाद में भिल्लसेना ने कुमार के सभी सैनिकों को छिन्न-भिन्न कर भगा दिया। अब कुमार और भिल्लराज के बीच युद्ध होने लगा। दोनों ही कुशलता-पूर्वक बाण वर्षा करने लगे। एक दूसरे को वश करने का दोनों का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही प्रयत्न निष्फल रहा। अतः कुमार ने मदनमंजरी से कहा कि तुम शृंगार कर रथ के ऊपर बैठ जाओ। कुमार के कथनानुसार मदनमंजरी रथ के ऊपर बैठ गयी। जब भिल्लराज ने मदनमंजरी के अपूर्व सौन्दर्य को देखा तो वह मुग्ध हो गया और बाण चलाना ही भूल गया। इसी बीच कुमार ने छल द्वारा भिल्लराज को मार गिराया।

कुमार अगडदत्त ने देखा कि रथ के सिवाय वहाँ अब एक भी सुभट नहीं है, सभी इधर-उधर छिन्न-भिन्न हो गये हैं। अतः वह अकेला ही आगे बढ़ा और किसी प्रकार उसने उस दुर्गम वन को पार किया। उसे आगे चलने पर एक रमणीय गोपुर मिला। यहाँ उसे दो व्यक्ति मिले, जिन्होंने कुमार से कहा कि हमलोग भी शंखपुर को चल रहे हैं। आपके साथ चलने से हमारा मार्ग भी निर्विघ्न कट जायगा। आगे बढ़ने पर जब दो मार्ग आये तो उन्होंने एक मार्ग की ओर संकेत करते हुए कहा कि इस मार्ग में दुर्जन चोर, मदोन्मत्त हाथी और दृष्टिविष नामक सर्प रहते हैं तथा अन्य सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक प्राणी भी निवास करते हैं। अतः इस रास्ते से न जाकर दूसरे से चलना चाहिए।

कुमार ने उनको धैर्य बँधाते हुए कहा—आपलोग निर्भय होकर चलिए। मैं सकुशल आपलोगों को शंखपुर में पहुँचा दूँगा। कुमार की इन बातों को सुनकर अन्य यात्री भी प्रसन्नतापूर्वक उसके साथ चलने लगे। कुछ दूर आगे बढ़ने पर एक परिव्राजक जटा जूट बढ़ाये, शरीर में भस्म लगाये और पिच्छिका हाथ में लिये हुए आया और कहने लगा—"कुमार! मैं भी तीर्थयात्रा के निमित्त शंखपुर को चल रहा हूँ। मेरे पास कुछ स्वर्ण मुद्राएँ हैं, जो देवपूजा के निमित्त प्राप्त हुई हैं। अतः आप इन दीनारों—स्वर्ण मुद्राओं को अपने पास रख लीजिए, जिससे मैं निर्भय होकर आपलोगों के साथ चल सकूँ। कुमार ने उस परिव्राजक से दीनारें ले लीं। इस पर उस परिव्राजक ने कुमार को अशीर्वाद दिया। उस परिव्राजक की वेशभूषा से कुमार को आशंका हुई और वह उसके साथ को अनिष्टकर समझने लगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुछ दूर जाने के उपरान्त उस परिव्राजक ने कहा—"साथियो! यहाँ के गोकुल में मेरे सुपरिचित हैं। मैंने एक बार यहाँ चातुर्मास किया है, जिससे सभी ग्वाले मुझे खूब मानते हैं। अतः आज आप-लोगों की दावत यहीं पर होगी।" इतना कहकर वह परिव्राजक गोकुल में गया और वहाँ से दही, घी और दूध के भरे हुए वर्तन ले आया। उसने कुमार से कहा—"राजपुत्र! आप यथेच्छ दुग्धपान करें।"

कुमार—"मेरे सिर में आज अपार वेदना है, अतः कुछ भी भोजन करने की इच्छा नहीं है।"

राजकुमार ने इशारे से अन्य साथियों को भी भोजन करने से रोका, पर वे न माने और उस विषमिश्रित भोजन को ग्रहण करते ही मूर्छित हो गये। थोड़ी ही देर में वे यममन्दिर के अतिथि बने। जब कुमार ने भोजन नहीं किया तो वह परिव्राजक बहुत नाराज हुआ और कुमार को मारने के लिए दौड़ा। कुमार ने अपने बाण से उसको मार गिराया। मरते समय उसने कहा—"कुमार! मैं दुर्जय दुर्योधन नाम का चोर हूँ। मैं तुम्हारी निर्भीकता से बहुत प्रसन्न हूँ। अतः तुमसे एक बात कहता हूँ। इस पर्वत के वामपार्श्व में दो नदियों के बीच एक देवालय है। इस देवालय के पश्चिम ओर एक शिला है। इस शिला को उठानेपर तुम्हें एक तलघर मिलेगा, इस तलघर में मेरी सुन्दर रूप-लावण्यवाली पत्नी रहती है। यहाँ अपार धनराशि है। तुम इस धन का उपभोग करना।"

दुर्योधन चोर की मृत्यु हो जाने पर कुमार अगडदत्त ने उसका दाह संस्कार किया और रथ को उसके द्वारा बताये गये स्थान पर ले गया। शिला के उठाते ही उसे तलघर का दरवाजा मिला और भीतर जाने पर उस चोर की जयश्री नाम की सुन्दर पत्नी दिखलाई पड़ी। कुमार अगडदत्त उस नारी के लावण्य को देखते ही मुग्ध हो गया। मदनमंजरी ने जब कुमार की यह दशा देखी तो उसने कुमार को हाथ का झटका देकर कहा—"मैंने आपके लिए अपने माता, पिता, भाई, बहन आदि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कुटुम्बियों तथा समस्त सुख को छोड़ा है और आप इस प्रकार की निर्लज्जता कर रहे हैं।"

मदनमंजरी के इन वचनों को सुनते ही कुमार सावधान हो गया और रथ पर सवार होकर आगे बढ़ा। उसे आगे चलने पर मदोन्मत्त हाथी और दृष्टिविष सर्प मिले तथा इन्हें किसी प्रकार वशकर वह सकुशल शंखपुर में पहुँचा।

महाराज सुन्दर ने कुमार के आगमन की खुशी में याचकों को दान दिया तथा अनेक प्रकार से अपनी प्रसन्नता प्रकट की। भोजन के उपरान्त परदेश में रहने का समस्त वृत्तान्त और घटी हुई घटनाएँ कुमार ने कह सुनाई। इस प्रकार आनन्दपूर्वक राज्य सुख भोगते हुए समय वीतने लगा।

इसके पश्चात् अन्य किसी समय कामी और विलासी व्यक्तियों के लिए सुखदायक वसन्त ऋतु आई। राजा परिजन और पुरजन सहित वनविहार के लिए गया। साथ में मदनमंजरी सहित कुमार अगडदत्त भी चला। नाना प्रकार की क्रीडाएँ करके राजा तथा नगरवासी लौट आये। कुमार अगडदत्त भी अपने मित्रों सहित चलने लगा। जब वह रथ के पास आया तो मदनमंजरी को एक विषैले साँप ने डँस लिया। मदनमंजरी हाय, हाय करती हुई कुमार की गोद में गिर पड़ी। कुमार ने विष दूर करने का बहुत प्रयत्न किया; किन्तु सब व्यर्थ रहा। जब वह निर्जीव हो गई तो कुमार ने विलाप करना आरंभ किया। किसी प्रकार धैर्य धारण कर उसने लकड़ियों की चिता बनाई और उस चिता में भार्या के साथ स्वयं भी जल मरने का निश्चय किया। इसी समय एक विद्याधर युगल आया और उसने कहा—"महानुभाव! आप अपने प्राणों को अकारण क्यों नष्ट कर रहे हैं? हम आपकी पत्नी को जीवित कर देते हैं।" उन्होंने मंत्रित जल मदनमंजरी के ऊपर छींटा। जल के छींटे लगते ही वह निद्रा से सोते हुए के समान जाग उठी और कहने लगी कि यह कौन सा स्थान है?

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मदनमंजरी के सचेत होते ही विद्याधर दम्पती आकाशमार्ग से चले गये और कुमार अपनी प्रिया सहित उस अंधेरी रात्रि में पासवाले देवालय में पहुँचा। उसने अपनी पत्नी से कहा—"मैं जबतक बाहर से अग्नि लेकर आता हूँ, तुम यहीं पर ठहरो।"

जब कुमार अग्नि लेकर वापस लौटा तो उसने उस देवालय में दीपक का प्रकाश देखा। वह उस प्रकाश के संबंध में अपनी पत्नी से पूछने लगा। पत्नी ने बहाना बनाकर कहा कि दीपक यहाँ कहाँ से आया? आप जो अग्नि लाये हैं, उसीके प्रकाश का प्रतिबिम्ब आपको दिखलायी पड़ा होगा। कुमार अगडदत्त अपनी तलवार मदनमंजरी को देकर अग्नि को नीचे रखकर मुँह से फूँक कर उसे प्रज्वलित करने लगा। इसी बीच उसने तलवार के गिरने की आवाज सुनी। चौंककर कुमार ने पूछा कि यह नंगी तलवार फर्श पर कैसी गिरी? मदनमंजरी ने कहा—

"मेरे मन में इस बात को जानने का कौतूहल हुआ कि नंगी तलवार कैसी लगती है? अतः मैं म्यान से तलवार को अलग कर घुमाने लगी तो तलवार मेरे हाथ से छूटकर फर्श पर गिर गयी।"

देवालय में रात्रि व्यतीत कर वह कुमार नगर में लौट आया और संसार के विषय-सुखों का अनुभव करते हुए समय बिताने लगा।

एक दिन वह कुमार बाह्याली में एक घोड़े को चाल सिखा रहा था कि वह दुष्ट घोड़ा कुमार को लेकर जंगल की ओर भागा और वह जंगल में तापस आश्रम में पहुँचा। कुमार घोड़े पर से उतर कर इधर-उधर परिभ्रमण करने लगा। वह एक जिनालय में पहुँचा और वहाँ उसे अनेक मुनियों से युक्त चारण ऋद्धिधारी सहस्रगति नाम के एक मुनिराज मिले। उसने मुनिराज की वन्दना की और उनके पादमूल में बैठकर पूछा—"प्रभो! ये पाँच सुन्दर युवक कौन हैं, जो इस चढ़ती आयु में विरक्त होकर आप संव्रत माँग रहे हैं? इनका साहस अनुपम है।" मुनिराज ने कहा—

"इस वन में चमरी नाम का एक गाँव है। इसमें धरणीधर नाम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

का एक बलवान् भिल्लराज रहता था। कुछ दिन पहले वहाँ ससैन्य एक राजकुमार अपनी सुन्दरी पत्नी सहित आया। भिल्लराज और कुमार में युद्ध हुआ। कुमार भिल्लराज को जब बाहुबल द्वारा परास्त न कर सका तो उसने अपनी सुन्दर रूपवती पत्नी को रथ के ऊपर बैठाया, जिससे वह धरणीधर उस नारी के कटाक्षवाणों से घायल हो वाण चलाना ही भूल गया और कुमार ने अवसर पाकर उसका वध कर दिया। अपनी प्रिया सहित कुमार वहाँ से चला आया। पाँचों व्यक्ति उसके भाई हैं, जब ये बाहर से लौटकर आये तो अपने भाई के घातक से बदला चुकाने के लिए उस कुमार के पीछे-पीछे चले। ये अवसर की प्रतीक्षा में थे कि एकान्त प्राप्तकर कुमार की हत्या की जायगी। अतः जब वह कुमार वसन्त ऋतु में वनविहार के लिए गया तो ये भी छिपे रूप में वहाँ पहुँचे। वनविहार के बाद जब कुमार रथ पर सवार होने लगा तो उसकी प्रिय पत्नी को एक विषैले सर्प ने डँस लिया। कुमार पत्नी के वियोग से दुःखित हो चिता बनाकर मृत पत्नी के साथ जलने को तैयार हो गया, उसी समय एक विद्याधर युगल आया, जिसने उस कुमार की पत्नी को जीवित किया। कुमार पत्नी के साथ रात्रि में एक देवालय में गया। वहाँ पर ये पाँचों भाई कुमार को मारने के लिए अवसर प्राप्त करने हेतु छिपे हुए थे। जब कुमार अग्नि लाने के लिए देवालय से बाहर गया तो इन लोगों ने अपने छिपाये हुए दीपक को प्रज्वलित किया। उस दीपक के प्रकाश में उस कुमार की पत्नी ने इन लोगों को देख लिया और वह इनके छोटे भाई के रूप-लावण्य पर मुग्ध हो गई। उसने कहा—"मैं तुम्हारे बिना जीवित नहीं रह सकती हूँ। अतः मेरे साथ तुम विवाह कर लो।" छोटे भाई ने कहा—"आपका पति बहुत बलवान् है। यदि उसे यह मालूम हो जायगा, तो वह हम सभी को मार डालेगा।" रमणी बोली—"मैं अपने इस पति की हत्या स्वयं ही कर देती हूँ, तब तो मार्ग निष्कंटक हो जायगा। आपको इसके लिए चिन्ता करने की आवश्यकता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नहीं।" जब वह कुमार अग्नि लेकर आया और उसने दीपक के प्रकाश के सम्बन्ध में पूछा तो उस रमणी ने झूठ बोलकर उस कुमार को धोखा दिया और जब वह सिर नीचा कर अग्नि को जलाने लगा तो उसने तलवार द्वारा उसका वध करना चाहा। पर इस दयालु वीर ने निरपराधी कुमार को बचाने के लिए तलवार को धक्का दिया, जिससे वार खाली गया और तलवार हाथ से छूटकर गिर गयी। इन लोगों को उस नारी के मायाचारी प्रपंचों को देखकर विरक्ति हो गई है, अतः ये पाँचों ही महानुभाव दीक्षा लेने के लिए प्रस्तुत हैं।"

कुमार ने कहा—"प्रभो! मैं ही इनके भाई का घातक हूँ। यह घटना मेरे ही साथ घटी है। मैं भी अब इस संसार से पूर्ण विरक्त हूँ। कृपया मुझे भी व्रत प्रदान करने का कष्ट करें।"

मुनिराज ने उसे दीक्षा प्रदान की और वह उग्र तपश्चरण करने में संलग्न हो गया।

यह एक साहसिक प्रेम कथा है। कुमार अगडदत्त के वीरतापूर्ण साहसिक कार्यों का विवेचन किया गया है। संसार के विषय भोगों का आधार नारी को मानकर नारी के चरित्र का पतन और उसके रहस्य का उद्घाटन किया गया है। काम की प्रतीक नारी का विश्लेषण हुआ है।

इस कथा में अगडदत्त और मदनमंजरी के अतिरिक्त भुजंगम चोर, धरणीधर भिल्लराज और दुर्योधन चोर पात्र भी अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। यह एक लोक कथा है, इसमें लोक कथा के तत्त्व और गुण-धर्म पाये जाते हैं। इस लोक कथा में निम्न लोक तत्व विद्यमान् हैं।

यह कथा परम्परा द्वारा प्रचलित है—मौखिक और लिखित दोनों रूपों में इसके पहले भी प्रचलित रही है। शान्ति सूरि ने उत्तराध्ययन के चतुर्थ सूत्र की छठी गाथा की टीका में इस कथा को उद्धृत किया है। यद्यपि देवेन्द्र गणि ने कथा को शान्ति सूरि की अपेक्षा बहुत विस्तृत किया है, तो भी कथावस्तु के बीज वे ही हैं जिनको शान्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूरि ने निबद्ध किया है। परिमाण की दृष्टि से शान्ति सूरि की अपेक्षा यह कथा छः गुनी है। दोनों ने ही इसे पद्य में लिखा है।

यह कथा ईस्वी सन् चौथी शताब्दी में संघदास गणि ने गद्य में वसुदेवहिण्डि में भी लिखी है। वहाँ भी इस कथा का यही प्रारूप मिलता है। अगडदत्त अवन्ती देश के उज्जैनी नगर के अमोघरथ नामक सारथी का पुत्र है, इसकी माता का नाम यशोमती है। यह विद्या सीखने के लिए कौशाम्बी नगरी में जाता है और वहाँ दृढप्रहारी नाम के गुरु के पास कला और शास्त्रों का अध्ययन करता है। वहाँ पर यज्ञदत्त नामक गजपति की पुत्री सामदत्ता इसके सौन्दर्य और यौवन से आकृष्ट हो प्रेम करने लगती है। सामदत्ता के आकृष्ट होने का ढंग बिल्कुल इसी अगडदत्त कथा के समान है।

विद्याएँ और कलाएँ सीख लेने के उपरान्त अगडदत्त कौशाम्बी राजा की राजसभा में जाता है और अपनी कलाओं के प्रदर्शन से उसे आश्चर्यचकित कर देता है। राजा उसे साधुवाद न देकर केवल धन देने की बात कहता है। इस पर कुमार अगडदत्त राजा से निवेदन करता है कि महाराज आपने मुझे साधुवाद तो नहीं दिया, तब धन देने से क्या लाभ ? राजा ने कहा—'मैं तुम्हारी इस विद्या को महत्वपूण नहीं समझता हूँ।' वह अध्यात्म विद्या तथा व्रताचरण का महत्व बतलाने के लिए अपने पूर्वभव की कथा सुनाने लगा।

"मैं पूर्वभव में कौशाम्बी के हरिषेण राजा के सुबुद्धि नामक मन्त्री का पुत्र था। मेरी माता का नाम सिंहली था और मेरा नाम आनन्द था। दुर्भाग्यवश मैं कुष्ठ रोग से पीड़ित हो गया। एक दिन यवन देश से एक दूत आया और उसने मुझ आनन्द के कुष्ठ रोग को देखकर कहा कि युवा घोड़े के रुधिर में इसे एक मुहूर्त्त पर्यन्त रखा जाय तो इसका कुष्ठ रोग अच्छा हो सकता है। पुत्र स्नेह से माता-पिता ने राजकुल का घोड़ा मारकर उसके रक्त में मुझे रखा। मैं अच्छा तो हो गया, पर राजकुल के घोड़े के मारने के अपराध में मेरे समस्त परिवार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को राजा ने शारीरिक दण्ड दिया। मैं किसी तरह बचकर पण्यवाट नगरी में पहुँचा। पण्यवाट नगरी के राजा ने दया कर मुझे अपने यहाँ रख लिया। कुछ दिनों के पश्चात् उस नगरी में एक मुनिराज आये और मैंने उनसे अहिंसा धर्म का उपदेश ग्रहण किया। पञ्चाणुव्रत और सात शील व्रतों का पालन करने से मेरा जीव जितशत्रु नाम का राजा हुआ है। अतः थोड़े से व्रतों की शिक्षा भी राज्यश्री को देती है।"

इस प्रकार राजा जितशत्रु ने अपने पूर्व भव की घटना कहकर कौशाम्बी राजा को सन्तुष्ट किया। कुमार अगडदत्त ने नागरिकों का धन चुरानेवाले चोर को सात दिन के भीतर पकड़ लाने की प्रतिज्ञा की। वह चोर को पकड़ने के लिए घोर परिश्रम करने लगा, पर छः दिनों तक चोर का कहीं भी पता न लगा। सातवें दिन सन्ध्या समय एक सुनसान बगीचे में संन्यासी के वेष में वह चोर आया और अगडदत्त से उसकी बातचीत हुई। रात्रि में अगडदत्त उसके साथ गया और एक स्थान पर सेंध लगाकर चोरी करनेवाले उस चोर के साथ रहा। अन्त में प्रस्तुत कथा के समान ही उस चोर को यममन्दिर भेजा और उसके द्वारा बताये हुए संकेत स्थल पर जाकर उसने उस चोर की बहन को वश किया तथा तलघर में रखा हुआ नागरिकों का धन भी उसने बाँट दिया।

कुछ दिनों के पश्चात् अगडदत्त कौशाम्बी से सामदत्ता के साथ उज्जैनी में वापस आता है। मार्ग में हाथी, सर्प, व्याघ्र और अर्जुन नामक चोर को वश किया। अर्जुन चोर पाँच सौ चोरों का सरदार था। कुमार अगडदत्त ने उसका सामना भी प्रस्तुत कथा में वर्णित ढंग से ही किया है।

उज्जैनी आने पर कुमार अगडदत्त एक दिन वनविहार के लिए गया और वहाँ सामदत्ता को एक सर्प ने डंस लिया। सामदत्ता का चरित्र यहाँ पर इसी कथा के समान वर्णित है। कुमार अगडदत्त मुनि हो जाता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस प्रकार वसुदेव हिण्डी की कथा के पात्रों में नाम मात्र का परिवर्तन कर देवेन्द्र गणि ने इस कथा को लिखा है। हमारा मत है कि इस कथा का मूल स्रोत वसुदेवहिण्डी की कथा ही है। इस कथा में निम्न लोकतत्त्व भी विद्यमान् हैं।

१ कुमार अगडदत्त की कथा वहुत लोकप्रिय रही है। इसका मौखिक और लिखित रूप में प्रचार रहा है।

२ लोक कथा का दूसरा तत्त्व है, देशकाल का वहुधा आश्चर्यजनक और कल्पना मण्डित होना। इस कथा में आश्चर्यजनक तत्त्वों की कमी नहीं है। मदनमंजरी और कुमार अगडदत्त के कार्य आश्चर्यजनक हैं।

३ लोक रुचि का लोकरंजक चित्रण है।

४ अप्राकृतिक, अति प्राकृतिक और अमानवीय तत्त्वों का भी समावेश है।

५ यह कथा लोकचित्त को आन्दोलित कर, प्रेरित कर उसे निश्चित उद्देश्य की ओर ले जाती है।

६ स्वस्थशृङ्गार और धार्मिक श्रद्धा को स्थान प्राप्त है।

७ रहस्य और कुतूहल का यथेष्ट समावेश है।

८ महत्वाकांक्षा या साहस का यथेष्ट निरूपण है।

९ जनमानस का प्रतिफलन पर्याप्त मात्रा में है।

१० पूर्वजन्मों के संस्कार और फलोपयोग का निरूपण है।

११ नारी के छलकपटमय आचरण का विश्लेषण; लोक कथा में इसका रहना परम आवश्यक माना गया है।

१२ विषय वस्तु और कथानक की शैली में लोककथा शैली का प्रयोग है।

१३ लोकमानस की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति इस कथा में वर्तमान है।

१४ अद्भुत तत्त्व का समावेश है।

१५ निम्नस्तरीय व्यक्तियों का चरित्र यथा चोर, चोरों के निवास,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जुआरी, व्यभिचारी आदि का यथार्थ चरित्र विश्लेषण इस कथा में वर्तमान है।

इस कथा के रचयिता देवेन्द्र गणि हैं। देवेन्द्र गणि का दूसरा नाम नेमिचन्द्र सूरि भी है। ये वृहद्‌गच्छीय आचार्य थे। चन्द्रकुल और वृहद्‌गच्छ के आचार्य उद्योतन सूरि के प्रशिष्य और आम्रदेव के शिष्य थे। आचार्य पद प्राप्त करने के पहले, इनका नाम देवेन्द्र गणि था। मुनिचन्द्र सूरि को इनका सहोदर कहा गया है। इस गच्छ में प्रद्युम्नसूरि, मानदेवदूरि, सुप्रसिद्धदेव सूरि, उद्योतन सूरि और अम्बदेव सूरि नाम के आचार्य हुए हैं। 'महावीर चरियं' में बताया गया है।

> जम्मि य गच्छे आसी सिरि पज्जुन्नामिहाण सूरित्ति
> सिरि मानदेवसूरी सुप्पसिद्धो देवसूरी य ॥२३७९॥
> उज्जोयणसूरिस्स य सीसो अह अम्बदेव उवज्झाओ।
> खममद्दवज्जवाई गुणकलिओ सोमसुत्तो य ॥२३८०॥
>
> —महावीर चरियं पृ० १०२

देवेन्द्रगणि या नेमिचन्द्र सूरि के तीन ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं। रयणचूडरायचरिय, सुखवोध टीका और महावीर चरिय। वि० सं० ११२९ में इन्होंने उत्तराध्ययन सूत्र की सुखवोध टीका का प्रणयन किया है। इस टीका में प्राकृत की वहुत ही सुन्दर कथाएँ संकलित हैं। 'कहाणय-तिगं' में संग्रहीत कथाएँ भी इसी टीका से उद्धृत हैं तथा अगडदत्त कथा भी इसी टीका से ली गयी है। सुखवोध टीका प्राकृत कथाओं का खजाना है। भाषा सीखने के लिए इससे सरल और मनोरंजक कथाएँ अन्यत्र शायद ही मिल सकेंगी। इन कथाओं में लोक संस्कृति और लोक जीवन का भी सुन्दर चित्रण हुआ है। अतः भारतीय संस्कृति और इतिहास ज्ञान के लिए भी इन कथाओं का अध्ययन आवश्यक है। कुछ कथाओं में अर्ध ऐतिहासिक तथ्यों का भी अच्छा संकलन है।

देवेन्द्र गणि ने वि० सं० ११४० में महावीरचरियं को लिखा है। इस चरित ग्रन्थ में अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर का जीवन अंकित

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

किया गया है। रचयिता ने स्वयं बतलाया है कि मैं संसार, शरीर और भोगों की आसक्ति को दूर करने के लिए तथा यथार्थ जीवन-यापन की प्रेरणा प्राप्त करने के लिए अन्तिम तीर्थंकर का चरित वर्णित करता हूँ। यथा—

वोच्छामि समासेणं वीरजिणिन्दस्स सन्तियं चरियं।
संवेगट्ठा भवियाण अत्तणो सुमरणत्थं च ॥१०॥
जम्मि भवे संमत्तं पत्तं पढमं तमाइओ काउं।
सत्तावीस जिणभवे संखवेणं पविक्खामि ॥११॥

--महावीर चरियं पृ० १

रयणचूडरायचरिय का रचनाकाल निश्चित नहीं है। पर इतना तथ्य है कि यह ग्रन्थ उक्त दोनों के बाद लिखा गया है। इसमें रत्नदेव राजा का चरित्र वर्णित है। अतः स्पष्ट है कि देवेन्द्र गणि प्रसिद्ध प्राकृत कथाकार हैं—इनका दूसरा नाम नेमिचन्द्र भी है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शब्दार्थ और टिप्पणियाँ (Notes)

१ अत्थि=अस्ति—वर्तमानकाल के तीनों पुरुष और दोनों वचनों में यह रूप बनता है। इसका अर्थ, रहता है या अस्तित्व होता है।

जए = जगति—संसार में—यह जगत् शब्द का सप्तमी का एकवचन है। प्राकृत में अन्तिम हलन्त वर्ण का लोप हो जाता है और मध्यवर्ती ग का लोप होने से अ शेष रहता है। इस प्रकार जगत् के स्थान पर 'जअ' रूप बनता है। सप्तमी का विभक्ति चिह्न ए जोड़ने से जए रूप बना है।

तम्मि = तस्मिन्—उसमें—तद् शब्द से सप्तमी विभक्ति के एक वचन में 'म्मि' प्रत्यय जोड़ने से तथा अन्तिम हलन्त्य वर्ण 'द्' का लोप होने से तम्मि रूप बना है।

जणजणियतोसओ = जन + जनित + तोष + क—लोगों को सन्तोष उत्पन्न करनेवाला— न के स्थान पर ण, त के स्थान पर य और क प्रत्यय का लोप तथा उसके स्थान पर अ और विसर्ग का ओत्व होने से यह रूप बना है।

२ तस्स = तस्य—उसका—तद् शब्द से षष्ठी विभक्ति के एक वचन में 'स्स' प्रत्यय जोड़ने और अन्तिम हलन्त्य वर्ण द् का लोप करने से यह रूप बनता है।

कुलरूवसरिसी = कुल + रूप + सदृशी—कुल और रूप के सदृश—कुलीन और रूपवती—प्राकृत में 'प' के स्थान व होता है और सदृशी के स्थान पर सरिसी बनता है।

समग्गजणजणियलोयणाणंदा = समग्र + जन + जनित + लोचन + आनन्दा—समस्त लोगों के नेत्रों को आनन्द देनेवाली—सभी को सुन्दर और प्रिय लगनेवाली। समग्र शब्दों में ग्र में से संयुक्त रेफ का लोप और ग को द्वित्व होने से समग्ग बना। लोचन में मध्यवर्ती च का लोप होने और अवशेष 'अ' के स्थान पर 'य' श्रुति होने से तथा नकार के स्थान पर णकार होने से लोयण शब्द बना है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्तेउरस्स = अन्तःपुरस्य—अन्तःपुर की। विसर्ग के स्थान पर एत्व और पकार का लोप तथा षष्ठी विभक्ति के एक वचन में 'स्स' प्रत्यय जोड़ने से अन्तेउरस्स रूप बनता है।

पढमा = प्रथमा—प्र के स्थान पर प, थ के स्थान पर ढ होने से पढमा रूप बना है।

वरभज्जा = वर + भार्या—श्रेष्ठ पत्नी—पट्टरानी, महिषी। भार्या के स्थान पर प्राकृत में भज्जा रूप होता है। 'र्य' के स्थान पर ज्ज तथा संयुक्त के पूर्ववर्ती स्वर को ह्रस्व होने से भार्या = भज्जा बना है।

३ कुच्छिपसूओ = कुक्षि + प्रसूतः—उदर से उत्पन्न—पेट से जन्म। संस्कृत के क्ष के स्थान पर प्राकृत में छ होता है तथा क्ष के मध्यवर्ती रहने से च्छ बनता है। प्र के स्थान पर प और त का लोप होने से अ शेष रहता है तथा विसर्ग का ओत्व हो जाने से प्रसूतः > पसूओ रूप निष्पन्न होता है।

अणुदियहं = अनुदिवसम्—प्रदि दिन—रोज-रोज। प्राकृत में दिवस शब्द के स्थान पर 'दियह' आदेश होता है तथा न के स्थान पर ण हुआ है।

वड्ढन्तो = √वृध् + शतृ—बढ़ते हुए। प्राकृत में संस्कृत की √वृध् धातु के स्थान पर वड्ढ आदेश होता है तथा वर्तमान कालिक 'न्त' कृत् प्रत्यय के जोड़ने से यह रूप बनता है।

पत्तो = प्राप्तः—प्राप्त हुआ। प्र के स्थान पर प और विजातीय वर्ग के संयुक्त 'प्त' में से प का लोप कर त को द्वित्व कर देने एवं संयुक्त के पूर्ववर्ती आकार को ह्रस्व कर देने से पत्तो रूप बना है।

केरिसो = कीदृशः—कैसा या किस प्रकार के स्वभाव का। संस्कृत के कीदृश के स्थान पर प्राकृत में केरिस आदेश होता है और विसर्ग के स्थान पर ओत्व होने से केरिसो रूप बनता है।

४ धम्मत्थदयारहियो = धर्म + अर्थ + दया + रहितः—धर्म, धन और दया रहित, चारों पुरुषार्थ और दया रहित। धर्म के स्थान पर प्राकृत में

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विजातीय संयुक्त वर्ग के अक्षर 'र्म' में से रेफ का लोप होने पर अवशेष म को द्वित्व कर देने से धम्म बना है। इसी प्रकार 'अर्थ' में 'र्थ' वर्ण के संयुक्त रेफ का लोप होने पर थ को द्वित्व तथा पूर्ववर्ती थ के स्थान पर त होने से अत्थ बना है। 'रहित' में से अन्तिम त का लोप होने और अवशिष्ट अ के स्थान पर यश्रुति होने से प्राकृत में रहियो रूप बना है।

गुरुविणयविवज्जिओ = गुरु + विनय + विवर्जितः—गुरुजनों की विनय से रहित—उद्दण्ड। विवर्जित के स्थान पर प्राकृत में 'र्जि' में से रेफ का लोप होने और 'ज' को द्वित्व होने से 'ज्जि' तथा त का लोप होने से अ शेष और विसर्ग को ओत्व होने से विवज्जिओ रूप बनता है।

अलियवाइ = अलीक + वादिन्—झूठा—असत्यवादी। क का लोप होने से अ शेष और अवशिष्ट स्वर को यश्रुति होने तथा पूर्व स्वर ईकार को ह्रस्व होने से 'अलिय' रूप बनता है। अन्तिम हलन्त्य व्यञ्जन न् का लोप होने और 'द' का लोप होने से वाइ बनता है।

पररमणिरमणकामो = पर + रमणी + रमण + कामः—परस्त्रियों के साथ रमण करने की इच्छा करनेवाला।

निस्संको = निःशंकः—निडर हो। तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स और विसर्ग को स् कर देने तथा अन्तिम विसर्ग का ओत्व कर देने से निस्संको रूप बना है।

माणसोण्डीरो = मान + शौण्डीरः—गर्वित—घमण्डी। साधारणतया सोण्डीर = शौण्डीर शब्द का अर्थ वीर, पराक्रमी या शूर होता है। मान-अहंकार के साथ शौण्डीर के रहने से गर्वयुक्त या अहंकारी अर्थ होता है।

५. मज्जं = मद्यम्—शराब। द्य के स्थान पर प्राकृत में ज्ज आदेश होने से से मज्जम् रूप बना है।

पियइ = पिबति—पीता है। √पा के स्थान पर पिय आदेश होता है और वर्तमानकाल के प्रथम पुरुष एक वचन का 'इ' प्रत्यय जोड़ने से पियइ रूप बनता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जूयं = द्यूतं—जुआ। प्राकृत में संस्कृत के द्यूत के स्थान पर जूय या जूअ आदेश होता है।

पिसियं = पिशितम्—मांस को। तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स, तकार का लोप और अवशिष्ट अ स्वर के स्थान पर यश्रुति होने से पिसियं रूप वना है।

नडपेडयवेसाविन्दपरिगओ = नट + पेटक + वेश्या + वृन्द + परिगतः —नट समूह और वेश्य समूह से परिवेष्टित। नड = नट—ट के स्थान पर ड हुआ है। पेडय = पेटक—भीड़ या समूह। ट के स्थान पर ड और क का लोप और अवशिष्ट अ स्वर के स्थान पर यश्रुति होने से पेडय रूप वनता है। विंद = वृन्दम्—ऋकार के स्थान पर इकार होने से वृन्द के स्थान पर विन्द हुआ है।

पुरमज्झे = पुरमध्ये—नगर के भीतर, नगर में। ध्य के स्थान पर प्राकृत में ज्झ आदेश होता है, अतः मज्झे = मध्ये से बनता है।

६ अन्नम्मि = अन्यस्मिन्—अन्य किसी दिन में। संयुक्त य का लोप होने; अवशेष न को द्वित्व होने से अन्य के स्थान पर अन्न आदेश हुआ है तथा सप्तमी विभक्ति के एकवचन में म्मि प्रत्यय जोड़ने से अन्नम्मि रूप वनता है।

पुरवरलोएण = पुर + वर + लोकेन—नागरिकों द्वारा।

वइयरो = व्यतिकर—घटना। संयुक्त य का लोप होने से व शेष रहा तथा मध्यवर्ती तकार का लोप होने से इ शेष, क कार का लोप और अवशिष्ट स्वर के स्थान पर य श्रुति होने से यह रूप वना।

सिट्ठो = शिष्टः—कहा।

असमंजसं = अ + समंजसम्—अव्यवस्थित, ऊट-पटांग कार्य।

७ सुणिऊण = श्रुत्वा—सुनकर। √श्रु के स्थान में प्राकृत में सुण आदेश होता है और सम्बन्ध भूत कृत् प्रत्यय तूण (इ ऊण) जोड़ने से सुणिऊण पूर्वकालिक क्रिया का रूप बनता है।

पउरवयणं = पौर + वचनम्—नागरिकों के वचनों को। पौर के स्थान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर प्राकृत में पउर होता है और 'वचनम्' में से चकार का लोप तथा अवशिष्ट स्वर के स्थान पर यश्रुति होने और न को णत्व होने से 'पउर-वयणं' वनता है।

गुरुकोवजायरत्तच्छो = गुरु + कोप + जात + रक्त + अक्षः—अधिक क्रोध करने से आँखें लाल हो गईं। प्राकृत में प के स्थान पर व होता है, अतः कोप > कोव रूप वना है।

फुडभिउडिभासुरसिरो = स्फुट + भृकुटि + भासुर + शिरस्—भौंहों को फैलाकर—भौंहों को टेढ़ा कर और सिर को भासुर—चमकाते हुए—भीषण या डरावना बनाते हुए—भौंहों को टेढ़ा कर और डरावना बनाकर। स्फुट के स्थान पर फुड होता है और भृकुटि के स्थान पर मिउडि रूप बनता है। भकारोत्तर ऋकार के स्थान पर इकार, ककार का लोप और उ शेष तथा ट के स्थान पर ड होने से मिउडि रूप वना है।

समाढत्तो = समाब्ध—आरम्भ किया। संस्कृत √रम् के स्थान पर प्राकृत में आढ आदेश होता है और कृत प्रत्यय त्त जोड़ने से समाढत्तो रूप वना है।

भणिउं = भणित्वा—कहकर। √भण से हेत्वर्थक कृत् प्रत्यय 'तुं' जोड़ा और तकार का लोप होने से तथा इकार आगम होने से भणिउं रूप वना है।

८ सिग्धं = शीघ्रम्—जल्दी। तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स, संयुक्त रेफ का लोप, घ को दित्व और पूर्ववर्ती क को ग तथा सकारोत्तर ईकार को ह्रस्व कर देने से सिग्धं रूप बना है।

वज्जिऊण = वर्जयित्वा—छोड़कर। संयुक्त रेफ का लोप, घ को द्वित्व तथा सम्बन्ध भूत कृत् प्रत्यय तूण (ऊण) जोड़ने और प्रत्यय के पूर्व इकार का आगम होने से वज्जिऊण रूप बनता है।

चिय—यह निपात से सिद्ध है और किसी भी वात पर जोर देने के लिए आता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विसयं=विषयं—राज्य या देश को—राज्य की सीमा को।

अन्नत्थ=अन्यत्र—दूसरी किसी जगह।

जं=यत्—क्योंकि, कि। यह अव्यय है, यत् के स्थान पर जं आदेश होता है।

मा भणसु य जं न कहियं ति—मा भणसु—मत कहना; जं न कहियं ति—कि नहीं कहा था—इस प्रकार।

९ नाऊण=ज्ञात्वा—जानकर। √ज्ञा के स्थान पर ना और पूर्व-कालिक क्रिया को वतलाने के लिए तूण (ऊण) प्रत्यय जोड़ने से नाऊण रूप बनता है।

वइयरं=व्यतिकरं—घटना को या वृत्तान्त को।

चइऊण=त्यक्त्वा—छोड़कर। √त्यज् के स्थान में चय आदेश होता है और पूर्वकालिक क्रिया को वतलाने के लिए तूण (ऊण) प्रत्यय जोड़ने तथा प्रत्यय के पूर्व इकारागम होने से चइऊण रूप बनता है।

नियपुरं=निजपुरं—अपने नगर को। मध्यवर्ती ज का लोप और अवशिष्ट स्वर के स्थान में य श्रुति।

रम्मं=रम्यं—सुन्दर। संयुक्त यकार का लोप और म को द्वित्व।

खग्गसहाओ=खड्ग+सहाय—तलवार मात्र ही जिसका साथी है, केवल तलवार लेकर।

चलिओ=चलितः—चला। तकार का लोप, अ स्वर शेष और विसर्ग को ओत्व।

गुरुमाणपवड्ढियामरिसो=गुरु+मान+प्रवर्धित+आमर्षः—अहं-कार की अधिकता से जिसका क्रोध बढ़ गया है। प्रवर्धित के स्थान पर प्राकृत में पवड्ढिय रूप होता है। यतः प्र के स्थान पर प, र्धि के स्थान ड्ढि और तकार का लोप, अवशिष्ट स्वर को य श्रुति हुई है। स्वरभक्ति के नियमानुसार आमर्ष के स्थान पर आमरिसो रूप बनता है। क्योंकि 'र्ष' को पृथक् करने और इकार का आगम होने से यह रूप बना है।

१० लंघित्ता=लंघ्+क्त्वा—पारकर, लांघकर। प्राकृत में लंघ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धातु से इत्ता कृत् प्रत्यय जोड़ने से लंघित्ता रूप वनता है।

गिरिसरिकाणणाइँ = गिरि + सरित् + काननानि—पहाड़, नदी और जंगलों को। सरित् शब्द के अन्तिम हलन्त्य त् का लोप होने से सरि वना है। कानन शब्द का नपुंसक लिंग द्वितीया विभक्ति के वहुवचन में काणणाइँ रूप वनता है।

पुरगोट्ठगामवन्दाइं = पुर + गोष्ठ + ग्राम + वृन्दानि—नगर, गोकुल और ग्राम समूहों को। वृन्द शब्द का प्राकृत में विन्द वनता है। यतः वकारोत्तर ऋकार के स्थान पर इकार हो गया है। समस्त पद का समास होने पर द्वितीया विभक्ति वहुवचन और नपुंसक लिंग में यह रूप वना है।

नियनयराओ—निजनगरात्—अपने नगर से। पञ्चमी विभक्ति के एक वचन का रूप है।

दूरे—दूर।

पत्तो = प्राप्तः—पहुँचा।

११ तियचच्चरमाईसुं = तिय + चच्चर + माइसुं—त्रिक + चत्वर + आदि—तिमुहानी और चौमुहानी आदि में।

असहाओ = अ + सहाय—मित्रों से रहित, अकेला।

भमइ = √भ्रम + ति—घूमता है। भ्रम् के स्थान पर भम और वर्तमानकाल प्रथम पुरुष एक वचन में इ प्रत्यय जोड़ने से भमइ रूप बनता है।

नयरमज्झे = नगर + मध्ये—नगर में—शहर में। मध्यवर्ती ग का लोप होने पर अवशिष्ट स्वर के स्थान पर य श्रुति; ध्य के स्थान पर ज्झ होने से नयरमज्झे रूप वना है।

चित्ते अमरिसजुत्तो = चित्ते + अमर्ष + युक्तः—मन में क्रोधित हुआ।

करिव्व = करि + इव—हाथी के समान। इव के स्थान पर व्व हुआ है।

जूहाउ = यूथात्—झुण्ड से। यूथ के स्थान पर प्राकृत में जूह होता है और पञ्चमी विभक्ति के एक वचन का आउ प्रत्यय जोड़ने से जूहाउ रूप वना है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिभट्ठो = परिभ्रष्टः—परिभ्रष्ट—पृथक् या स्खलित।

१२ हिण्डन्तेणं = हिण्ड + न्त + टा—भ्रमण करते हुए—घूमते हुए—निरुद्देश्य घूमने को हिण्ड कहते हैं।

तया = तदा—उस समय।

पुरीए—पुरी शब्द से षष्ठी के एक वचन में ए प्रत्यय जोड़ने से यह रूप बना है —पुरी के।

रायतणएण = राजतनयेन—राज + तनय—राजपुत्र के द्वारा या राजपुत्र ने। रायतणअ शब्द से तृतीया विभक्ति के एक वचन में यह रूप बनता है।

बहुतरुणनरसमेओ = बहु + तरुण + नर + समेत—बहुत से युवकों से युक्त।

किल—निश्चय से।

जाणओ = ज्ञायकः—विद्वान् शिक्षक।

दिट्ठ = दृष्टः—दिखलायी पड़ा, देखा।

केरिसो = कीदृशः—कैसा

१३ सत्थत्थकलाकुसलो = शास्त्र + अस्त्र + कला + कुशलः —शास्त्र, अस्त्र और कलाओं में प्रवीण। शास्त्रों का विद्वान्; अस्त्र संचालन का विशेषज्ञ; काव्य, संगीत आदि कलाओं का ज्ञाता। शास्त्र शब्द के स्थान पर प्राकृत में सत्थ शब्द बनता है। यतः तालव्य श के स्थान पर दन्त्य स, स्त्र के स्थान पर त्थ तथा त्थ के पूर्ववर्ती वर्ण को ह्रस्व कर देने से सत्थ शब्द निष्पन्न होता है। इसी प्रकार अस्त्र के स्थान पर अत्थ बनता है। समास करने पर अत्थ के अ का लोप हो जाने से 'सत्थत्थ' रूप बना है।

विउसो = विद्वान्—जानकार, ज्ञानी। विद्वस् शब्द में से संयुक्त द् का लोप होने से 'व' शेष रहता है तथा सम्प्रसारण होने से व के स्थान पर उं हो जाता है। अनन्तर—प्रथमा विभक्ति के एक वचन में विउसो रूप बना है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मावन्नुओ = भावज्ञकः—भाव+ज्ञ–कः—अन्य व्यक्तियों के मन की बात को जाननेवाला। 'ज्ञ' के स्थान पर प्राकृत में न्नु आदेश हुआ है और स्वार्थिक 'क' प्रत्यय का लोप होने से अ स्वर अवशिष्ट रह गया है तथा विसर्ग को ओत्व हुआ है।

सुगम्भीरो=सुगम्भीरः—सु—अधिक, गम्भीर—गहन।

निरयो = निरतः—संलग्न।

परोवयारे = पर+उपकारे—परोपकार में—दूसरों की भलाई में।

किवालुओ =कृपालु + कः—दयालु—अन्य लोगों पर कृपा करनेवाला। ऋकार के स्थान पर इकार, प के स्थान पर व और स्वार्थिक प्रत्यय का लोप, अ स्वर शेष और विसर्ग का ओत्व।

रूपगुणकलिओ=रूप + गुण + कलितः—रूप और गुणों से युक्त, सुन्दर रूववाला और गुणवान्।

१४ नामेण=नम्ना—नाम से।

वाईणं = वादिभ्यः—वादियों—शास्त्रार्थ करनेवालों के लिए। वादिन् से प्राकृत में अन्तिम हलन्त्य का लोप होने से तथा दकार का लोप होने से 'वाइ' वनता है। चतुर्थी विभक्ति के वहुवचन में ण या णं प्रत्यय जोड़ देने और पूर्ववर्ती स्वर को दीर्घ कर देने से 'वाईणं' रूप वना है।

उण=पुनः—पुनः या किन्तु अथवा किसी प्रकार। पकार का लोप होने और न को णत्व होने से उण वना है।

सीसाणं = शिष्यानाम् या शिष्येभ्यः—शिष्यों के लिए। शिष्य के स्थान पर सीस होता है और चतुर्थी तथा षष्ठी के वहुवचन में णं प्रत्यय जोड़ने से सीसाणं रूप वनता है।

सन्दणहयगयसिक्खं=स्यन्दन+हय + गज+ शिक्षां—रथ संचालन की शिक्षा, घोड़ों को चाल की शिक्षा देनेवाला, हस्ति संचालन की शिक्षा तथा मदोन्मत्त हाथियों को वश करने की शिक्षा देनेवाला।

साहिन्तो = शास्+शतृ—शिक्षा देता हुआ। ✓शास् के स्थान पर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्राकृत में साह आदेश होता है और वर्त्तमानकालिक 'न्त' प्रत्यय जोड़ देने से साहिन्तो रूप वनता है।

निवसुयाणं = नृपसुतानाम्—राजपुत्रों को। ऋकार के स्थान इकार प के स्थान पर व, तकार का लोप और अवशिष्ट स्वर के स्थान पर यश्रुति तथा षष्ठी विभक्ति के वहुवचन में णं प्रत्यय जोड़ने से निवसुयाणं रूप वनता है।

तहिं = तत्र—वहाँ।

१५ समीवम्मि = समीपे—निकट में। समीप शब्द के प के स्थान पर व और सप्तमी विभक्ति के एक वचन में 'म्मि' प्रत्यय जोड़ने से यह रूप बना है।

चरणजुयं = चरण+युगम्—दोनों चरणों को।

पणमिउं—प्रणाम करके। यहाँ √पणम से अनियमित हेत्वर्थक कृत् प्रत्यय तुं (उं) जोड़ने से तथा प्रत्यय के पूर्व इकारागम होने से पणमिउं रूप वनता है।

समासीणो = समासीनः—बैठा।

कुत्तो = कुतः—कहाँ से।

अह = अथ—अनन्तर, तव।

१६ एगन्ते = एकान्ते—एकान्त में।

गन्तूणं = गत्वा—गमन करके या जाकर। √गम्+तूणं।

विणिक्खन्तो = विनिष्क्रान्तः—निकला था, चला था।

वुत्तन्तो = वृत्तान्तः—समाचार, हाल-चाल। ऋकार के स्थान पर उकारादेश होने से वुत्तन्तो रूप बना है।

१७ तओ = ततः—तव, इस पर। अन्तिम तकार का लोप होने से अ स्वर शेष रहा और विसर्ग को ओत्व होने से तओ रूप बना है।

अच्छसु = एधि—स्तात्—रहो। √अस के स्थान पर प्राकृत में अच्छ आदेश होता है तथा विधि या आज्ञार्थ में अध्यम पुरुष एक वचन में सु प्रत्यय जोंड़ने से अच्छसु रूप बनता है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एत्थं = अत्र—यहाँ ।

कलाउ = कलाः—कलाओं को । कला शब्द से द्वितीया के बहुवचन में उ प्रत्यय जोड़ने से कलाउ रूप बनता है ।

अत्तणो = अत्त—आत्मानम्—अपना वृतान्त ।

गुज्भं = गुह्यम्—रहस्य को ।

मा पयडेसु—प्रकट मत करो ।

१८ उट्ठेउं = उट्ठ—उत् + स्था + त्वा—उठकर ।

उज्झाओ = उपध्यायः—शिक्षक ।

पत्तो = प्राप्तः—पहुँचा ।

गेहम्मि = गृहे—भवन या घर में ।

रायसुयसहिओ = राज + सुत + सहितः—राजकुमार सहित—कुमार अगडदत्त सहित ।

साहेइ = कथयति—कहता है । √कथ् के स्थान पर प्राकृत में साह आदेश होता है और चुरादी गण की धातु होने से हकारोत्तर अकार को एत्व होता है तथा वर्तमानकाल प्रथम पुरुष एक वचन में 'इ' प्रत्यय जोड़ने से साहेइ रूप बनता है ।

महिलियाए = महिला + का + ए—महिला—पत्नी को ।

भाउयसुओ = भाउय—भ्रातृकः + सुतः—भतीजा ।

१६ ण्हविऊणं = ण्हा—√स्ना + तूण—स्नान कराके ।

दाऊणं = दत्वा—देकर । दा + तूण—दाऊणं ।

पवरवत्थमाभरणं = प्रवर + वस्त्र + आभरणम्— श्रेष्ठ वस्त्राभरणों को । वस्त्र > वत्थ—स्त्र के स्थान पर त्थ आदेश होता है ।

मोयणावसाणे = भोजन + अवसाने—भोजन के अन्त में । जथा क्र का लोप और अवशिष्ट स्वर के स्थान पर य श्रुति होने से मोयण शब्द बनता है ।

२० भवणधणं = भवन + धनम्—घर और धन—सम्पत्ति को ।

परिवारो = परिवारः—परिचारक, सेवक आदि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सन्दणतुरयाइ=स्यन्दन+तुरग+आदि—रथ, घोड़े आदि। स्यन्दन के स्थान पर सन्दण बनता है। तुरग—में गकार का लोप और अवशिष्ट स्वर के स्थान पर यश्रुति तथा आदि में से दकार का लोप होने से इ स्वर शेष।

सन्तियं=सत्क– सम्बन्धी, सम्बन्ध रखनेवाला।

तुज्झायत्तं=त्वद्+आयत्तम्—तुम्हारे आधीन है।

विलससु—विलास करो, आनन्द करो, उपभोग करो।

हियइच्छियं=हृदय+इच्छितम्—इच्छानुसार। हृदय के स्थान पर हिय आदेश होता है।

२१ किर=किल—निश्चय से।

सन्तुट्ठमाणसो=सन्तुष्ट+मानसः—सन्तुष्ट मन से, प्रसन्नचित्त से। ष्ट के स्थान पर ट्ठ आदेश होने संतुट्ठ=संतुष्ट बनता है।

मुक्ककूरववसाओ=मुक्त+क्रूर+व्यवसायः—क्रूर—निर्दयता पूर्वक किये जानेवाले निन्दनीय कार्यों को छोड़कर।

चिट्ठइ=तिष्ठति—√स्था के स्थान पर चिट्ठ आदेश हुआ है और वर्तमानकाल प्रथम पुरुष एक वचन में इ प्रत्यय जोड़ने से चिट्ठइ रूप बना है।

सव्वाउ=सर्वाः—प्राकृत में विजातीय वर्ग के संयुक्त वर्णों में से पूर्ववर्ती का लोप होकर अवशेष को द्वित्व कर देते हैं। अतः रेफ का लोप कर व को द्वित्व करने पर 'सव्वा' बनता है। इसमें द्वितीया विभक्ति बहुवचन का उ प्रत्यय जोड़ने से सव्वाउ रूप बनता है।

२२ गुरुयणगुरुविणयपवन्नमाणसो=गुरु+जन+गुरुविनय+प्रपन्न +मानसः—गुरुजनों के प्रति मनमें अधिक विनय रखनेवाला।

सयलजणमणाणन्दो=सकल+जन+मनस्+आनन्द—सभी लोगों के मन को आनन्द देनेवाला।

बावत्तरि कलाओ=द्विसप्तति कलाः—बहत्तर कलाओं को।

थेवेण=स्तोकेन—थोड़े ही समय से—थोड़े ही समय में।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२३ कुमरवरो—राजकुमार अगडदत्त ।

नायकलो = ज्ञातकला—समस्त कलाओं का ज्ञाता—जानकार ।

परिसमं = परिश्रमं—परिश्रम को ।

कुणेमाण = कृ + शानच्—करता हुआ । प्राकृत में संस्कृत की √कृ के स्थान पर कुण आदेश होता है । वर्तमान कृत् प्रत्ययमाण जोड़ने से तथा प्रत्यय के पूर्ववर्ती अकार को एकार कर देने से कुणेमाण रूप वनता है ।

भवणुज्जाणे = भवन + उद्याने—भवन की वाटिका में ।

तप्परो = तत्परः—संलग्न । 'त्प' में से संयुक्त तकार का लोप और पकार को द्वित्व ।

धणियं—यह देशी शब्द है । इसका अर्थ अत्यन्त, गाढ़, अतिशय और निकट होता है ।

२४ पहाणसेट्ठिस्स = प्रधान + श्रेष्ठिन् + षष्ठि एक वचन—प्रधान सेठ का । प्र के स्थान पर प, ध के स्थान पर ह और न का णत्व होने से पहाण रूप वनता है । 'श्र' में से संयुक्त रेफ का लोप और श को स, ष्ठ के स्थान पर ट्ठ तथा षष्ठी विभक्ति के एक वचन में स्स प्रत्यय जोड़ा गया है ।

वायायणरमणीयं = वातायन + रमणीयं—सुन्दर खिड़की से युक्त ।

उत्तुंगमईव = उत्तुंगमतीव—वहुत अधिक ऊँचा ।

विित्थण्णं = विस्तीर्णम्—विस्तृत, विशाल । 'स्त' के स्थान पर प्राकृत में त्थ आदेश होता है और दीर्घ ईकार को ह्रस्व । संयुक्त रेफ का लोप होकर ण को द्वित्व हुआ है ।

२५ तत्थत्थि = तत्रास्ति—उसमें थी ।

धूया = दुहिता—लड़की ।

घरसिर = गृह + शिरम्—महल की छत पर ; आरुढा = आरुढा —चढ़कर—चढ़ ।

पेच्छए—√प्रेक्ष + वर्तमान—देखती है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२६ साणुराया = सानुरागा— उसके साथ प्रेम पूर्वक।

अणवरयपलोयणं = अनवरत + प्रलोकनं—निरन्तर देखती थी।

विक्खिवइ = विक्षिपति—फेंकती है। क्ष के स्थान पर प्राकृत में ख होता है। मध्यवर्ती क्ष के रहने पर क्ख संयुक्त हो जाता है। प के स्थान व और वर्तमानकाल एक वचन का 'इ' प्रत्यय जोड़ने से विक्खिवइ रूप वनता है।

कुसुमफलपत्तलेट्ठुए = कुसुम + फल + पत्र + लेष्टुकान्—पुष्प, फल, पत्ते, ढेला या रोड़ा आदि को।

किंपि = किमपि—कोई भी वस्तु, कुछ भी।

२७ हिययत्थं = हृदय + स्थं—हृदय स्थित।

पि = अपि—भी। वालं = वालां—कुकारी को। निरिक्खए = निरीक्षते—देखता है।

कलारसिओ = कला + रसिकः— कलारसिक—कला प्रेमी।

आशंकाए = आशङ्कया—आशंका से—भय से।

विज्जाए = विद्यायाः—विद्या के। गहणलोभेण = ग्रहण + लोभेन —ग्रहण के लोभ से।

२८ अन्नदिणम्मि = अन्यस्मिन् दिने— किसी दिन।

वम्महसरपसरविहुरियमणाए = मन्मथ + शर + प्रसर + विधुरित + मनसा—कामदेव के वाणों से विद्ध मन। मन्मथ के स्थान पर प्राकृत में वम्महो आदेश होता है। 'न्मो मः' न्म के स्थान पर म आदेश होता है और थ के स्थान पर ह तथा आदि म के स्थान पर व आदेश होता है।

पहओ = प्रहतः—मारा।

असोगगुच्छेणं = अशोक + गुच्छेन—अशोक के गुच्छे से।

२९ दियहे = दिवसे—दिन में। सविसेसं = सविशेषम्—विशेषता सहित—विशेषरूप से।

कंकेल्लिपल्लवन्तरियतणुलया = कंकेल्लि + पल्लव + अन्तरित +

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तनुलता—अशोकवृक्ष के पत्तों से अपने दुबले-पतले शरीर को छिपाकर।

संभमुब्भन्ता = संभ्रम + उद्भ्रान्त—उत्तेजना सहित।

३० अमरविलासिणी = अमर + विलासिनी—देवाङ्गना। नागकन्ना = नाग + कन्या - नागकुमारी। व्व = वा; कमला—लक्ष्मी। सरस्सई = सरस्वती, पच्चक्ख = प्रत्यक्ष। प्र के स्थान पर प, त्य के स्थान पर च्च और क्ष के स्थान पर क्ख।

३१ अहवा = अथवा। पुच्छामि = पृच्छामि—पूछता हूँ। पकारोत्तर आकार के स्थान पर उकार हुआ है। इय = इति—इस प्रकार। चिन्तिऊण = चिन्तित्वा —विचार कर। चिन्त + तूण (ऊण)—प्रत्यय के पूर्व इकार का आगम।

पयडं = प्रकटम्—स्पष्ट।

३२ वरवाले = वर + वाला—श्रेष्ठ नारी। सम्बोधन के एक वचन का रूप है। ईसिं = ईषत् —थोड़ा। अप्पाणं = आत्मन् + नाम् —अपने को। कीस = कस्मात्—क्यों, किस लिए।

विज्जागहणासत्तं = विद्यां + ग्रहण + आसक्तम् —विद्या ग्रहण करने में आसक्त—संलग्न। सयणु = सुतनु —सुन्दरी।

खोभेसि = क्षोभयसि—विघ्न करती है। √क्षुभ् के स्थान पर खोभ आदेश होता है और वर्तमानकाल मध्यपुरुष एक वचन में 'सि' प्रत्यय जोड़ने से खोभेसि रूप बना है।

३३ सुणिउं = श्रुत्वा—सुनकर। वियसियदिट्ठिए = विकसित + दृष्टया आँखें फाड़कर—गौर से। विहसियमुहीए = विहसित + मुखेन —प्रसन्न मुख से, हँसते हुए।

पयडंतदंतकिरणावलीए = प्रकटत् + दन्त + किरण + आवल्या—दाँतों की किरणों को प्रकट करते हुए—दाँत चमकाते हुए।

३४ नयरपहाणस्स = नगर प्रधानस्य—नगर के प्रधान सेठ की। विवाहिया = विवाहिता—विवाहिता—शादी की गई।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३५ जद्दिवसाओ = यत् + दिवसात्—जिसदिन से। कुसुमचाव-सारिच्छो = कुसुमचाव + सदृक्षः - कामदेव के समान। तद्दियहाओ = तत् + दिवसात्—उसी दिन से। असुहतरू = असुख + तरुः—दुःख का वृक्ष। वड्ढिओ = वर्धितः -- वढा है।

३६ निद्दा वि = निद्रापि—नींद भी, नट्ठा = नष्टा—नष्ट हो गई है।

लोयणाण—नेत्रों, देहम्मि = देहे—शरीर में; दाहो—जलन या सन्ताप। असणं = अशनं—भोजन भी। रुच्चइ = √रुच् + वर्तमानकाल प्रथम पुरुष एक वचन—अच्छा लगता है। गुरुविचना = गुरु वेदना—अत्यधिक पीडा, उत्तमङ्गम्मि = उत्तमाङ्गे—मस्तक में सिर में।

३७ तावच्चिय = तावत—तभी तक, सुहं सुखं—सुख, जाव = यावत्—जबतक।

कीरइ = क्रियते – कृ + ते—कृ के स्थान पर कर आदेश और कर्मणि प्रयोग होने से ककारोत्तर अकार को ईकार कर दिया तथा वर्तमानकाल प्रथम पुरुष एक वचन का प्रत्यय 'इ' जोड़ देने से कीरइ रूप वना है।

पियसङ्गो = प्रिय + सङ्गः—प्रिय व्यक्ति का संसर्ग। कओ = कृतः—किया। ककारोत्तर अकार के स्थान पर अ और तकार का लोप, अस्वर शेष तथा विसर्ग को ओत्व।

दुक्खाण = दुःखानाम्—दुःखों को। समप्पिओ = समर्पितः—समर्पित किया—दे दिया।

३८ पेरिज्जन्तो = √पेर—प्रेरय्—कर्मणि वर्तमान कृत् प्रत्यय न्त जोड़ने से पेरिज्जन्तो रूप वनता है। प्रेरणा से या आघात से।

पुराकएहि = पुराकृतैः—पूर्वकृत कर्मों से—भाग्योदय से। तृतीया विभक्ति वहुचन का रूप है।

वराओ = वराकः—दीन व्यक्ति—अभाग्यशाली।

दुल्लहजणाणुराए = दुर्लभ + जन + अनुरागे – दुर्लभ मनुष्य के प्रेम में —अप्राप्य व्यक्ति के प्रेम में। पडइ = पतति—पड़ता है।

३९ ता = तद्—इसलिए, अतएव। जइ = यदि—यकार के स्थान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर ज और दकार का लोप, इ स्वर शेष। समाणं=समानम्—साथ, से।

तरुणिमणहरणं=तरुणी+मनस्+हरणं—युवतियों के मन को हरण करनेवाले। होहं—होही=भविष्यति—होगा—भविष्यत्काल में प्रथम पुरुष एक वचन में √भू से यह रूप वनता है।

तियवज्झा=स्त्री+वध्या—स्त्री हत्या। फुडं=स्फुटम्—स्पष्ट। जीयं=जीवं—जीवन या जीवित रहना।

४० निसुणिऊण=नि+श्रुत्वा—सुनकर, जानकर। √श्रु के स्थान पर प्राकृत में सुण आदेश होता है और तूण कृत् प्रत्यय जोड़ने तथा प्रत्यय के पूर्ववर्ती इकार का आगम करने से निसुणिऊण रूप वनता है।

मयणमहाजलणदड्ढङ्गी=मदन+महा+ज्वलन+दग्ध+अङ्गी—कामग्नि से प्रज्वलित शरीरवाली।

४१ निसुणिज्जइ=नि+श्रु+ते—सुनी जाती हैं। √श्रु के स्थान में सुण आदेश तथा कर्मणि रूप होने से इज्ज प्रत्यय का संयोग; वर्तमान प्रथम पुरुष एक वचन में इ का संयोग होने से निसुणिज्जइ यह रूप वना है। पयडमिणं=प्रकटमिदं—यह सिद्ध है।

भारहरामायणेसु=भारत+रामायणेसु—महाभारत और रामायण में

सत्थेसु=शास्त्रेषु—शास्त्रों में।

कामावत्था=काम+अवस्था—काम की अवस्थाएँ। कामुयजणाणं=कामुकजनानाम्—कामी व्यक्तियों की।

४२ पढमा=प्रथमा—प्रथम। वीयाए=द्वितीयायां—दूसरी में।

महइ=√मह+इ—चाहता है, इच्छा करता है। √काङ्क्ष् के स्थान पर प्राकृत में मह आदेश होता है और वर्तमान प्रथम पुरुष एक वचन का इ प्रत्यय जोड़ने से महइ रूप वनता है। दीहुण्हा=दीर्घ+उष्णा—लम्वी और गर्म, नसासा=निश्वासः—सासें।

४३ जरयं=ज्वर+क+म्—बुखार को, ज्वर को।

डज्झए=√दह्—डह+ते—जलाता है—कर्मणि का रूप है।

कामिस्स=कामिनः—कामी व्यक्ति को।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४४ सत्तमियाए = सप्तम्यां—सातवीं में। मुच्छा = मूर्च्छा—बेहोशी। अट्ठमवत्थाए = अष्टमावस्थायां—आठवीं अवस्था में।

४५ काही = करिष्यति—√कृ से भविष्यत्काल प्रथम पुरुष एक वचन में ही प्रत्यय होता है और कृ के स्थान पर का होने से 'काही', रूप बनता है।

४६ परिभाविऊण = परि + भू + तूण—विचारकर, समझकर। भावकुसलेणं = भाव + कुशलेन—भावनाओं या हृदय के विचारों के जानकार ने। सिणेहसारं = स्नेह + सारम्—अत्यधिक प्रेम पूर्वक। महुरवयणेण = मधुरवचनेन—मधुर वचनों द्वारा।

४७ रन्नो = राज्ञः—राजा का, सुन्दर चरियं = सुन्दर + चरितम्—श्रेष्ठ आचरण। विसालकित्ति = विशाल + कीर्त्तिः—अत्यधिक यश। पठमसुयं = प्रथम + सुतम्—ज्येष्ठ पुत्र को। वियाणेहि = विजानाहि—समझो। आज्ञा के मध्यम पुरुष एक वचन का रूप है।

४८ कलयायरियसमीवं = कला-क + आचार्य + समीपम्—कला-शास्त्र के मर्मज्ञ आचार्य के पास। कलगहणत्थं=कलाग्रहणार्थम्—कलाएँ सीखने के लिए। पवसिस्सं = प्र + √वस् + भविष्यत् + उत्तम पुरुष एक वचन। रवाना होऊँगा या जाऊँगा। तएवि—तवापि—तुम्हें भी। घेत्तुं = ग्रहीत्वा—ग्रहण करके। √ग्रह् के स्थान पर घेत् आदेश हुआ है और तुं प्रत्यय जोड़ने से घेत्तुं रूप बना है।

४९ कहकहवि = कथं कथमपि—जिस किसी तरह से, बड़ी कठिनाई के साथ।

मयच्छी = मृगाक्षी—मृग या हरिण के समाव नेत्रवाली।

वम्महसरपसरसल्लियसरीरा = मन्मथ + शर + प्रसर + शल्यित + शरीरम्—कामदेव के वाणों से घायल शरीर। वहुपयारं = बहुप्रकारम्—अनेक तरह से। समासत्था = समाश्वस्ता—आश्वस्त की - आश्वासन दिया।

५० तत्तो=ततः—तब, इस पर ; गुणरूवरंजियमणो = गुण + रूप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

+रंजित+ममस्—गुण और रूप से प्रसन्न मन। नियनिलयं = निज-निलयम्—अपने आवास स्थान पर। संगमोवायं = संगक+उपायम्—संगम के उपाय को।

५१ अन्नम्मि = अन्यस्मिन्—अन्य किसी दिन में, रायनन्दणो = राजनन्दनः—राजकुमार ; वाहियाए=वीथिकायाः—वाजार के, मग्गेणं = मार्गेण—मार्ग से या अश्वाहन मार्ग से। तुरयारूढो = तुरंगारूढः—घोड़े पर सवार ; वच्चइ=व्रजति—जाता है ; ता = तदा—तब, कलयल =कलकल—कोलाहल, शोर।

५२ किं चलिय व्व समुद्दो = किं चलित इव समुद्रः—क्या समुद्र चंचल हो गया है—समुद्र में ज्वार-भाटा आ जाने के समान।

किं वा जलिओ हुयासणो घोरो = किं वा ज्वलित हुतासनः घोरः—अथवा क्या भयंकर अग्नि लग गई है? रिउसेन्नं = रिपु+सैन्यम्—शत्रु सेना ; तडिदण्डो = तडित्+दण्डः—विद्युत्पात—वज्रपात ; निवडियं = नियतितम्—गिरी है।

५३ एत्थन्तरम्मि = अत्रान्तरे—इसी बीच ; सहसा = सहसा—एकाएक, अकस्मात् ; विम्हियमणेण = विस्मित + मनसा—आश्चर्य चकित मन से।

मयवारणो = मद+वारणः—मतवाला हाथी ; मत्तो = मत्तः—उन्मत्त।

निवाडियालाणवरखम्भो = निपातित + आलान + वर + स्तम्भः—आलान—हाथी के बांधने—वर खम्भो—मजबूत खूंटे को उखाड़े हुए।

५४ मिण्ठेण वि- पीलवान से भी, परिचत्त = परित्यक्त—रहित ; मारन्तो = √मारम्—मार+न्तो—मारता हुआ ; सोण्डगोयरं = शुण्ड+गोचरं—सूंड़ द्वारा दिखलायी पड़ना—वहुत तेजी से भाग रहा था, केवल सूंड़ से पहचाना जाता था। सवडंमुहं—यह देशी शब्द है। सामने या सीधी दिशा में अर्थ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कालोव्व = काल इव — यमराज के समान ; अकारणं = अ + कारणे —बिना कारण ; क्रुद्धो = क्रुद्धः — क्रोधित ।

५५ तुट्टपयबंधरज्जु = त्रुटित + पद + बन्ध + रज्जु—पैर के बन्धन के टूटने । संचुण्णियभवणहट्टदेवउलो = संचूर्णित + भवन + हट्ट + देवकुलः — भवन, दुकान और देवालयों को चूर्ण करता हुआ । खणमेत्तेण = क्षण-मात्रेण — क्षणभर में । पचण्डो = प्रचण्डः — भयानक ।

५६ तारिसरूवधरं = तादृश + रूप + धृतम् - उस प्रकार के सुन्दर रूपवाले को ; नायरजणेहि = नागर + जनैः — नागरिकों ने— नागरिकों के द्वारा । गाहिरसरेणं = गम्भीर + स्वरेण—गम्भीर स्वर से—दुःखी आवाज से ओसर = अप + √सृ — हटजाओ, पीछे जाओ । करिपहाओ = करिन् + पथ — हाथी के रास्ते से ।

५७ नियतुरयं = निजतुरङ्गम् — अपने घोड़े को ; परिचइऊणं = परित्यक्त्वा परि + √त्यज् – चइ + तूण (ऊण)— छोड़कर ; सुदक्खगइ-गमणं = सुदक्ष + गति + गमनम् — चतुराई पूर्वक चला । हक्कारिओ = आ √कारय्—ललकारा । इन्दगयंदस्स = इन्द्रगजेन्द्रस्य इन्द्र के हाथी — ऐरावत के ; सारिच्छो = सदृक्षः — समान ।

५८ कुमारसद्दं = कुमारशब्दम्— कुमार की आवाज को ; दन्ती = हाथी,

पज्झरियमयजलपवाहो = प्रक्षरित + मद + जल + प्रवाहः — जिसके मदजल का प्रवाह निकल रहा है । पहाविओ = प्रधावितः - दौड़ा या झपटा ।

५९ पाउरणं = प्रावरणं - वस्त्र, चादर ; संवेल्लेऊण — संवेष्ट् + क्त्वा —संवल्ल + तूण— लपेटकर ; हिट्ठचित्तेंण = हृष्ट + चित्तेन - प्रसन्न मन से ; धावन्तवारणस्स = धावन्त + वारणस्य - दौड़ते हुए हाथी के ; सोण्डापुरओ = शुण्डा + पुरतः— सूड़ के सामने ; पक्खित्तं = प्रक्षिप्तम् —फेंका ।

६० कोवेण = कोपेन — क्रोध से, धमधमेन्तो = धमधमाय् + न्त—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धमधमकी आवाज करता हुआ ; दन्तच्छोभे—दाँत की ठोकर—छोभ या छोह् शब्द देशी है, इसका अर्थ आघात या ठोकर है। पिट्ठभाए= पृष्ठभागे—पीठ में ; पहणइ = प्र + √हन् + ति—पहण + इ—मारता है।

दढमुट्ठिपहरेणं = दृढ + मुष्टि + प्रहरेण—जबरदस्त घूंसे के प्रहार से।

६१ ओधावइ = अव + धाव + ति—ओ + धाव + इ—पीछे दौड़ता है ; धावइ = धावति - दौड़ता है। चलइ = चलति—चलता है ; खलइ = स्खलति—गिरता है ; परिणओ = परिणतः —नीचे झुकना ; चक्कभमणं = चक्रभ्रमणं—गोलाकार या चक्राकार परिभ्रमण।

६२ अइव = अतीव —अत्यधिक ; महन्त = महन्—ज्यादा ; वेलं = वेलां—समय ; खेल्लावेऊण = √खेल —खेल्लाव + तूण —खेलाकर —खेल कराकर ; नियवसे = निज-क + वशे —अपने वश में ; काऊणं = कृत्वा —करके। कृ—का + तूण—काऊण - काऊणं। ताव = तावत् —तब तक ; खन्धम्मि = स्कन्धे—पीठ पर।

६३ गइन्दखेड्डं = गजेन्द्र + खेलम्—हाथी के खेल को ; सयलनयरलोयस्स = सकल + नगर + लोकस्य—समस्त नागरिकों के लिए।

अन्तेउरसरिसेणं = अन्तःपुरसरिसेन—रनवास की रानियों सहित। सरिस शब्द देशी है, यह सहित के अर्थ में प्रयुक्त होता है। पलोइयं = प्रलोकितम्—देखा ; नरवरिन्देणं = नरवर + इन्द्रेण—प्रधान राजा ने।

६४ गयखंधसंठियं = गज + स्कन्ध + संस्थितम्—हाथी की पीठ पर सवार को।

सुरवइं व = सुरपतिमिव—इन्द्र के समान। नियभिच्चयणं = निज + भृत्यजनानाम्—अपने सेवकों को ; गुणनिहिं = गुण + निधिः—गुणों की खान।

६५ तेएणं = तेजसा—तेज से ; अहिमयरो = अ + हिमकरः—सूर्य ; सोमत्तणएण = सौम्यत्वेन—सुन्दरता या लावण्य में ; निसिनाहो = निशिनाथः—चन्द्रमा ; सव्वकलागमकुशलो = सर्व + कला + आगम + कुशलः—समस्त कला और शास्त्रों में कुशल ; चाई = त्यागी—निस्पृह ;

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वाई = वादी—वाद-विवाद करनेवाला, सुरूवो = स्वरूपः—सुन्दर, रूपवान् ।

६६ एक्केण = एकेन—एक ने ; मन्दिरे = मन्दिरे—भवन में ।

६७ कलयाचरिओ = कलाचार्य—हरिसिएणं = हृष्टेन—प्रसन्नता-पूर्वक ।

गयवरसिक्खाए = गज + वर + शिक्षायां—हस्ति संचालन की शिक्षा में ; अइकुसलो = अतिकुशलः—अत्यन्त प्रवीण ।

६८ अभयं = अभयं—अभय ; परिमग्गेउं = परि + √मार्ग् + त्व—माँगकर ; कुमरवुत्तन्तो = कुमारवृत्तान्तः—कुमार का समाचार ; सविसेसं = सविशेषं विशेषता सहित ; परिकहिओ = परिकथितः—कहा ; वहुजणजुयं = बहु + जन + युतम्—वहुत लोगों के सहित ।

६९ गरुयतोसं = गुरुक + तोषम्—अधिक सन्तोष को, आवन्नो = आपन्नः—प्राप्त ; संपेसइ = सं = √प्रेष् + ति—भेजता है ; पडिहारं = प्रतिहारम्—दरवान को ।

७० परिट्ठियो = परिस्थित-कः—बैठा हुआ ; दारवालेणं = द्वार-पालेन—द्वारपाल—दरवान ने ; हक्कारइ = आकारयति—बुलाता है, आगच्छसु = आ + √गम् + लोट् मध्यम पुरुष एक वचन—आओ ; रायउलॅ = राजकुलम्—राजसभा में ।

७१ रामाएसेण = राजा + आदेशेन—राजा की आज्ञा से ; आग-लेऊणं = आ + √कल् + क्त्वा — आगल + तूण—बाँधकर ; ससंकहि-यओ = सशंक + हृदयः—डरे हुए हृदय से—भयभीत या आतङ्कित ; नरनाहपासम्मि = नरनाथ + पार्श्वे—राजा के पास में ।

७२ जाणूकरूत्तमङ्गं = जानु + कर + उत्तमाङ्गम्—हाथ जोड़ मस्तक से लगाकर और घुटने जीमन में टेककर ; महीए—पृथ्वी पर ।

विणिहित्तु = वि + नि + धा—विणिहा + त्तु—स्थापन करके ।

गरुयविणएणं = गुरुक + विनयेन—अधिक विनय से । जाव न कुणइ पणामं—प्रणाम करने के पहले ही । अवगूढो = अवगूढः—आलिङ्गित—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आलिंगन किया।

७३ तम्बोलासणसंमाणदाणपूयाइ = ताम्बूल + आसन + सम्मान + दान + पूजा—पान, आसन, सम्मान, दान और पूजादि; पूइओ = पूजितः—सम्मान किया।

अहियं = अधिकम्—अधिक; पसन्नहियओ = प्रसन्न + हृदयः—प्रसन्न हृदय—चित्त से; उवविट्ठो = उपविष्टः—बैठा।

७४ पुरिसत्तणस्स = पुरुषत्वस्य - मनुष्यता की; सिरीए = श्रियः —लक्ष्मी या सम्पत्ति का; ववसाय = व्यवसाय—व्यापार; सुहाण = सुखानाम्—सुखों का।

७५ चित्तइ = चित्रयति—चित्रित करता है, रायहंसाणं = राज + हंसानाम्—राजहंसों को; कुलप्पसूयाणं = कुल + प्रसूतानाम्—उच्चकुल में जन्म लिए व्यक्तियों को—कुलीन व्यक्तियों को।

७६ साली = शाली—धान, भरेण = भर—बोझ से, तोएण = तोयेन —जल से, जलहरा = जलधरा, मेघाः—मेघ, फलभरेण—फलभार से, तरुसिहरा = तरुशिखरा—वृक्षों की चोटी—वृक्ष; विणएण—विनयेन—विनय से; सप्पुरिसा = सत्पुरुषाः—सज्जन व्यक्ति। कस्सवि = कस्यापि —किसी के भी, भएण = भयेन भय से।

७७ तो = ततः—इसलिए; विणयरंजिएणं = विनयरञ्जितेन—विनय से प्रसन्न होने से; कुसलपउत्ती = कुशल + प्रवृत्तिः—कुशल-समाचार; कलागहणंसविसेसं—कलाओं के ग्रहण करने के सम्बन्ध में विशेष रूप से पूछा।

७८ नियगुणगहणं = निज + गुण + ग्रहणं—अपने गुणों के ग्रहण को पयडेइ = √प्रकटय्—पयड + इ—प्रकट करते हैं। √पयड से वर्तमान काल प्रथम पुरुष एक वचन में पयडइ और पयडेइ दोनों रूप बनते हैं। निउणो = निपुणः - प्रवीण।

७९ नियगरुयपयावपसंसणेण = निज + गुरुक + प्रताप + प्रशंसनेन —अपने महान् प्रताप की प्रशंसा करने से; महासत्ता = महासत्वा—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

महान् व्यक्ति; लज्जंति = √लज्ज + अन्ति—लज्जित होते हैं। अलियपसं-सणेवि = अलीक + प्रशंसनेपि - झूठी प्रशंसा करने पर भी।

खित्तचित्तस्स = क्षिप्त + चित्तस्य —आश्चर्य चकित मन; ता = ततः —तब, पुरलोओ = पुरलोकः - नागरिक लोग, रायपासम्मि = राज + पार्श्वे - राजा के पास।

८१ वररयणअम्बराइं = वर + रत्न + अम्बराणि—श्रेष्ठ रत्न और वस्त्र आदि को; सुयन्धकुसुमाइं = सुगन्ध + कुसुमानि — सुगन्धित पुष्पों को; फलसणाहाइं = फलसनाथानि - फल सहित।

परिहवगय = परिभव + गत पराभव प्राप्त।

८२ पुरजणकोसल्लं = पुरजनकौशल्यम्— नागरिकों द्वारा दी गयी भेंट को; पणिवाया = प्रणिपाता—प्रणाम; विन्नत्तिं = विज्ञप्तिं - प्रार्थना को। काउं = कृत्वा, आरद्ध = आरब्ध—आरम्भ।

८३ कुबेरपुरविहव अहियधणनिवहं = कुबेर + पुर + विभव + अधिक + धन + निवहम् - कुबेर पुर के वैभव से भी अधिक धन से पूर्ण आपका नगर; कइवयदिणाण = कतिपय + दिनानाम् - कुछ दिनों के, मज्झे = मध्ये - बीच।

८४ मुट्ठं = मुष्टं या मुषितम्—चुराया या लूटा गया; तक्करो = तस्करः —चोर; खत्तचारनिउणेणं = खात + चार + निपुणेन—सेन्ध लगाने में चतुर; एण्हिं = इदानीम् — इस समय।

८५ कडुयवयणेहि = कटुकवचनैः—कडुवी बातों द्वारा—डाँट-डपट द्वारा; आरक्खिओ = आरक्षिकः—रक्षकों; पेच्छ = प्रेक्ष्—देखना।

८६ विन्नत्तं = विज्ञप्तम् — प्रार्थना की; कत्थइ = कुत्रापि — कहीं भी।

८७ एत्थन्तरम्मि = अत्रान्तरे - इसी समय या इसी बीच; ममा-एसं = ममादेशं—मुझे आज्ञा; लेहमि = √लभ् + लट् + उत्तम पु० ए० —प्राप्त करूँ, सिग्घं = शीघ्रम् - शीघ्र ही।

८८ सत्त = सप्तम् —सात; जइ = यदि, नाह = नाथ — राजा; जलियजलणजालावली = ज्वलित + ज्वलन + ज्वाला + आवली—जलती

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हुई अग्नि की लपट।

८९ सपइन्न =सप्रतिज्ञ—प्रतिज्ञा सहित ; अणुमन्न =अनुमन्—स्वीकार या स्वीकृति, समीहिय =समीहित—इच्छा।

९० गहियपइन्न =गृहीत+प्रतिज्ञ—प्रतिज्ञा ग्रहण कर ; पणमिउं = प्र+√नम्+तुम्—पणम+तुं—प्रणाम करने के लिए ; अणुव्विग्ग = अनुद्विग्न—शान्त ; परिभय =परि+भ्रम्—घूमना।

९१ वेसाण =वेश्यानाम्—वेश्याओं के ; पाणागारेसु = पान+आगारेषु—शरावख़ानों में ; जूयठाणेसु = द्यूतस्थानेषु—जुआरियों के स्थानों पर ; कुल्लूरियावणेसु = कुल्लूरिय+आपणेषु—हलवाइयों की दुकान पर। कुल्लूरिय शब्द देशी है, इसका अर्थ है मिठाई बनानेवाला या हलवाई। उज्जाणनिवाणसालासु = उद्यान+निपान+शालासु—उद्यान में कूप या तालाव के पास पशुओं के जल पीने के लिए बनाये हुए जलकुण्ड स्थान में।

९२ मढसुन्नदेउलेसुं = मठ+शून्य+देवकुलेषु—मठ संन्यासियों के आश्रम स्थान और खाली देवमन्दिरों में ; चच्चरचउहट्टहट्टसालासु = चत्वर+चतुर्हट्ट+हट्टशालासु—चौक, चौहट्टा-बाजार और बाजारों में ; तक्करगमं = तस्कर+गमं—चोर की क्रियाओं को ; नियन्तों = अवलोकयन्तो—देखता हुआ।

९३ वोलीणो =गतः—बीत गया। गहिओ = ग्रहीतः—पकड़ा, युक्त हुआ, ग्रहण किया गया। चिन्ताए = चिन्ताया—चिन्ता के द्वारा।

९४ वच्चामि =व्रजामि—जाता हूँ ; हरिऊण =√हृ+क्त्वा—हर+तूण—हरण कर, लेकर ; मयच्छीं =मृग+अक्षिन्+तम्—मृगनयनी को, हिरण के समान नेत्रवाली उस सुन्दरी को।

रण्णम्मि =अरण्ये—वन में। अरण्य शब्द में से अ का लोप "वालाव्वरण्येलुक्" १।६६ हे० सूत्र से हुआ है। ण्य में से संयुक्त य का लोप और ण को द्वित्व करने 'रण्ण' शब्द बना ; पश्चात् सप्तमी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विभक्ति एक वचन में 'म्मि' जोड़ने से रण्णम्मि रूप बनता है।

९५ निम्मलकुलसंभवाण = निर्मल + कुल + संभवेभ्यः—निर्मल-कुल में उत्पन्न हुए व्यक्तियों के लिए; नियजीहाए = निज + जिह्वाया—अपने जीभ से—अपने मुख से; पडिवन्नं = प्रतिपन्नं—की हुई प्रतिज्ञा को, अन्नहा = अन्यथा—अन्य रूप—झूठी; होइ = भवति—होती है।

९६ छिज्जउ = √छिद् + ते—कर्मणि प्रयोग है। अपभ्रंश की प्रवृत्ति के कारण उ हुआ है। कट जाय या काटा जाय; सीसं = शीर्षम्—सिर; वयउ = √व्रज् + ति—चली जाय, जाय, छोड़ दे; सव्वहा = सर्वथा—सभी रूप में; पडिवन्नपालणा = प्रतिपन्न + पालना—की हुई प्रतिज्ञा; जं होइ तं होउ—जो होना हो, कोई भी बात।

९७ नेयं = न + एयं—यह नहीं; महव्वयं = महाव्रतम—महाव्रत; नरट्ठिमुद्दाए = नर + अस्थि + मुद्राया—मनुष्याकृति अस्थि पञ्जरमात्र को धारण करने से—समुव्वहण = समुद्वहन—धारण करने; धीरपुरिसाणं = धीरपुरुषेभ्यः—धैर्यशालियों के लिए—अच्छे व्यक्तियों के लिए।

९८ बहुवियप्पे = बहुविकल्पान्—बहुत सी संभावनाओं को; नियमणे = निजमनसि—अपने मन में; भाविऊण = भावयित्वा—भाव + तूण—विचार कर; अवरण्हवेलाए = अपराह्न + वेलायां—अपराह्न-काल में; बाहिम्मि = बहिस् + सप्तमी एक वचन—बाहरी भाग में—बाहर में।

९९ पवरकिसलयसमूहगुविलस्स = प्रवर + किसलय + समूह + गुपिलस्य—पवर—प्रवर—अत्यधिक, किसलयसमूह—पत्तों के समूह से गुविल—सान्द्र, गहन—झाड़ी की; सीयछाय = शीत + छाय—शीतल छाया के; उत्तुंगवियडसाहाउलस्स = उत्तुंग + विकट + शाखा + आकुलस्य—ऊँची विकट शाखाओं से व्याप्त; सहयाररुक्खस्स = सहकारवृक्षस्य—आम्रवृक्ष के।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१०० हेट्ठयम्मि = अधस्तले—नीचे ; चिन्ताभरेण = चिन्ता + भरेण—चिन्ता के बोझ से ; सुढियङ्गो = शिथिलाङ्गः—शिथिल शरीर ; जोयन्तो—देखता हुआ ; दिसिचक्कं = दिश् + चक्रम् - दिग्मण्डल को —दिशाओं को ; विज्जाभट्ठ—विद्याभ्रष्ट - विद्या के चले जाने से ; खयरिन्द—खचर + इन्द्र विद्याधर राजा ; व्व—इव—समान ।

१०१ समणुप्पत्तो = समनुप्राप्तः—आया ; परिवायगो = परिव्राजकः—संन्यासी ; कयधाउवत्थवेसो = कृत + धातु + वस्त्र + वेशः—कषायले—गेरुआ वस्त्र धारण किये ; मुंडियसिरकुच्चसच्चूलो = मुण्डित + शिरस् + कूर्च + सच्चूलः—सिर और कूर्च—दाढ़ी मुड़ाये तथा सच्चूल—चोटी धारण किये ।

१०२ दण्डत्तियकुण्डीचमरसंगओ = दण्ड + त्रिक + कुण्डी + चमर + संगतः—त्रिदण्ड, कुण्डा—पात्रविशेष और चमर से युक्त । गणेत्तियाहत्थ = गणयत्रिका—अक्षमाला—रुद्राक्ष की माला, हत्थ—हाथ में लिये ; किं किं पि = किं किमपि—कुछ ; मुणमुणान्तो—मुनमुनाता—जाप करता हुआ, कुछ उच्चारण करता हुआ ।

१०३ करिसोण्डाभुयदण्ड = करिन् + शुण्डा + भुज + दण्ड - हाथी की सूँड के समान भुजदण्ड ; विसालवच्छत्थल = विशाल + वक्षस्थल —विशाल वक्षस्थल—चौड़ी छाती, फरुसकेस = परुष + केश - रूखेवाल —तेल रहित बाल ; रउद्द = रौद्र भयंकर, डरावना, रत्तच्छ = रक्ताक्ष —लालनेत्र ; दीहजंघ = दीर्घजंघ - लम्बी जांघ ।

१०४ निज्झाइऊण = नि + ध्यै + क्त्वा—निज्झा + तूण—देखकर, निरीक्षण करके ; मासंको = साशङ्कः - आशंका सहित ; एवंविहरूवेणं = एवंविधरूपेन - इस प्रकार के स्वरूप से ; फुडं = स्फुटम्—स्पष्ट—निश्चय ।

१०५ पिएहि = प्रियैः—प्रिय, वयणेहिं = वचनैः—वचनों से ।

१०६ बुद्धिनउणेणं = बुद्धिनिपुणेन—बुद्धि प्रवीण ने ; दालिद्देणक्कन्तो = दारिद्रेण + आक्रान्तः—दरिद्रता से पीड़ित ; सुन्नमण = शून्य + मनस्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शून्यचित्त, अनवस्थित।

१०७ सोच = शुच्—दुःख; अज्जं = अद्यं—आज ही; दे = √दा—दूँगा, समीहियदव्व = समीहित + द्रव्यम्—इच्छित धन।

१०८ संलत्तं = संलपितम्—कहा; पयसाय = पद + प्रसाद—चरणानुकम्पासे, नासइ = √नश् + ति—नष्ट होता है, मह = मह्यं—मेरा, दालिद्दं = दारिद्रयम्—दरिद्रता; संपज्जइ = सं + प√ द्—ति कर्मणि प्रयोग—प्राप्त हो, ईहियं = ईहितम्—इच्छित।

१०९ जम्पन्ताणं = जम्प + न्त + णं बात-चीत करनेवालों के; नयणपहं = नयनपथं—आखों से; अद्दंसणभावन्नो = अदर्शनम् + आपन्न—अस्त हो गया, छिप गया, दोसभएणं = दोषभयेन—पाप के भय से।

११० संझुज्जोयम्मि = सन्ध्या + उद्योते—सन्ध्याकालीन प्रकाश; गए = गते—समाप्त होने पर; पयडीभूय = प्रकटीभूत—प्रकट होने पर;

रयणितमनियरे = रजनि + तमस् + निकरे—रात्रि सम्बन्धी अन्धकार समूह में, कड्ढ = √कृष्—निकालना, कोसाओ = कोशात्—म्यान से। कोस शब्द से पञ्चमी के एक वचन में 'ओ' प्रत्यय जोड़ने और प्रत्यय के पूर्ववर्ती अकार को दीर्घ कर देने से 'कोसाओ' रूप बना है। दारुणायारं = दारुणाकारं—भयंकर आकार।

१११ तुरियगई = त्वरित + गतिः—शीघ्र गति; संचलियो = संचलितः—चला; एहि = आ + √इ + हि—आओ। आज्ञा में मध्यम पुरुष एक वचन में यह रूप बनता है। समीहियकज्जं = समीहित + कार्यं—इच्छित कार्य को।

११२ ताव = तावत्—तव तक—कुछ कार्य करने के पहले; मज्झधार—यह देशी शब्द है और इसका अर्थ मध्य है। थोव = स्तोकम्—थोड़ा; एगदेसम्मि = एक + देशे—एक स्थान। यह सप्तमी के एक वचन का है। एगदेस शब्द से 'म्मि' प्रत्यय जोड़ने से 'एगदेसम्मि' रूप बनता है।

११३ ईसरवणियस्स = ईश्वर + वणिज् + षष्ठी एक वचन। ईसर—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धनिक, वणिय—व्यापारी। सुहभेयभित्तिभाए =सुख + भेद + भित्ति + भागे—सुख पूर्वक—आसानी से, भेदे—तोड़े जानेवाले, भित्तिभागे—भीतं—दीवाल के भाग में—हिस्से में—स्थान में; खत्तं =खातम्—छेद गड्ढा, आलेहियं =आलेखितम्—चित्रित किया, बनाया, अंकित किया।

११४ जोएवि =√जोअ– योजय्+इवि बनाकर या व्यवस्था कर। अपभ्रंश में √जोअ से सम्बन्ध कृदन्त या पूर्वकालिक क्रिया का अर्थ प्रकट करने के लिए इवि प्रत्यय जोड़ा जाता है। अतः अ + इ = ए होने से 'जोएवि' अपभ्रंश में कृदन्त का रूप है।

सुतिक्खसत्थेणं =सुतीक्ष्ण + शस्त्रेण – तेज हथियार से; सिरीच्छसच्छहं =श्रीवत्स + सच्छहं—श्रीवत्स चिह्न के समान। तीर्थंकर के वक्षस्थल में एक चिह्न विशेष होता है, जो प्रायः कमल पुष्प के समान होता है। सच्छह यह देशी शब्द है और इसका अर्थ सदृश या समान होता है।

सुप्पवेसनिग्गमणमइगूढं =सु + प्रवेश + निर्गमन + अति + गूढम्—जिसमें से अच्छी तरह प्रवेश और निर्गमन किया जा सके और जो अइगूढम् – अत्यन्त छिपा हुआ था।

११५–११६ ठविउं =√स्थापयित्वा – स्थापित कर या रखकर; देवउलओ =देवकुलात्—देव मन्दिर से; गेण्हाविय =√गेण्ह – ग्रह्—कर्मणि कृदन्त रूप है – ग्रहण कराके।

निहुयपयं =निभृत + पदम् अच्छी तरह सावधानी से पैर रख; महग्घभण्डं =महार्घ + भाण्डम्—मूल्यवान् अथवा कीमती सामान को।

११७ आयड्ढिऊण =आ + √कृष् + क्त्वा —आयड्ढ + तूण (इऊण)—खींच कर या निकाल कर; पहणामि =प्र + √हन् + वर्तमान + उ० ए० मारूँ; अम्हं =अस्माकं – मुझे—मुझ जैसे; कुलपसूयाणं =कुलप्रसूतानां – कुल—श्रेष्ठ कुल में—उत्पन्न व्यक्तियों को – कुलीन व्यक्तियों को।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

११८ एयनिवासं =अस्य + निवासं—इसके निवास को, गन्तुं = —जाकर, दव्वं =द्रव्यं - धन को, केत्तिय =कियत्—कितना, कए =कृते —लिए ; अणावरयं =अनवरतम्—निरन्तर।

मुसइ =√मुष् + ति -चुराता है; नयरिजणनिवहं =नगरी + जन + निवहं—नागरिकों का समूह।

११९ गहिय =ग्रहीतः—लेकर, मोसया =√मुष्—मोष—कः— चुराये हुए धन को ; किलन्त =क्लान्त—थके हुए ; नयरुज्जाण =नयर + उज्जाणम्मि—नगर के वगीचे में।

१२० छलघायमारणनिमित्तं =छल + घात + मारण + निमित्तम्— छलघात से मारने के हेतु ; गुरुया =गुरु + का—वड़ी ; रयणी =रजनी —रात्रि ; अच्छामो =√आस्—वर्तमान काल उत्तम पुरुष वहुवचन— रहें, आराम करें।

१२१ तत्थुज्जाणम्मि =तत्रोद्याने—वहाँ पर वगीचे में ;

समासीणा =समासीना—बैठे हुए, रहते हुए ; सेव =√सेव्— उपभोग, सेवन।

१२२ खणमेत्तेणं =क्षण + मात्रेण—क्षणभर में ; दाहिणवामेसु = दक्षिण + वामेषु—दक्षिण और बायीं ओर में ; वच्छमूलस्स =वृक्ष + मूलस्य —वृक्ष की जड़ के ; अन्नोन्नघायनिरया =अन्योन्य + घात + निरताः— परस्पर में एक दूसरे की घात में रत—एक दूसरे को मारने के लिए अवसर की प्रतीक्षा में संलग्न : अलीयनिद्दा =अलीक + निद्रा—झूठी नींद, नींद का वहना ; सुत्त =सुप्त—सो गये।

१२३ वाहित्तपुरिसा =वाहक + पुरुषाः—सामान ढोनेवाले व्यक्ति; वीसत्थमाणसा =विश्वस्त + मानस—विश्वस्त मन—मन में विश्वास धारण कर ; सत्थराओ =स्रस्तरात्—विस्तर से ; उट्ठेत्ता =उत् + √स्था—उट्ठ + त्ता—प्रत्यय के पूर्ववर्ती अकार को एकार—उठकर। अवकन्त =अपक्रान्त—चला गया, निकल गया।

१२४-१२५ काउं करम्मि खग्गं—काउं—करके, करम्मि—हाथ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

में, खग्गं—तलवार को; अपमत्त =अ+प्रमत्त —सावधान, प्रमाद रहित; चरियं =चरितम्—कार्य या प्रवृत्तियों को।

मुणेऊणं =ज्ञात्वा—जानकर; विणिवाइया =विनिपातिता—मार दिया, सयणं =शयनम्—शय्या को, विस्तर को; अपेच्छन्न—नहीं देख, जोवइ =√दृश्+ति—जोव+इ—देखता है।

१२६ हक्किऊण—हक्क+तूण (ऊण) प्रत्यय के पूर्व इकार का आगम, ललकार कर। हक्क शब्द देशी है, इसका अर्थ बुलाना या ललकारना होता है। जँघासन्नं =जंघा+आसन्नम्—जाँघ के पास; भयरहिओ =भय+रहितः—निर्भय; भीमवलजुत्तो =भीम+वल+युक्तः —अत्यधिक वल सहित।

१२७ एगेण =एकेन—एक, पहारेण =प्रहारेण—प्रहार से; पडियं = पतितम्—गिर गया, गिरा—जुयलयं = जुगलकम्—दोनों को, चक्काहओ =चक्र+आहत—चक्र—तूफान या वायु के ववण्डर से, आहत—पीड़ित, प्रभावित, अक्रान्त, व्व =इव—समान, रुक्खो =वृक्षः वृक्ष; झत्ति =झटिति—शीघ्र, धरणीए =धरण्याम्—पृथ्वी पर।

१२८ असमत्थेण =असमर्थेन—असमर्थ—अशक्त, जीवियसेसेण = जीवित+शेषेन—जीवन का अन्त होने से—थोड़ा-सा जीवन अवशेष रहने; सुपसिद्धो =सुप्रसिद्धः—अच्छी तरह प्रसिद्ध।

१२९ मसाणे =श्मशाने—श्मशान में; भूमिए =भूमि+सप्तमी एक वचन—भूमि में; मज्झयारम्मि =मध्य भागे—मध्य में; भइणी = भगिनी; जुवई =युवती।

१३० वडपायवस्स =वट+पादपस्य—वट वृक्ष के; गन्तूण =गत्वा —गम+तूणं—जाकर, कुणसु =कुरु—आज्ञा में मध्यपुरुष एक वचन में सु प्रत्यय होने से कुणसु रूप वनता है।

वाहरणं =व्याहरणम्—बुलाना; भूमिघरस्स =भूमिगृहस्य—पृथ्वी के नीचे वना घर—तलघर का, दारं=द्वारम्—दरवाजे को, उग्घाडए= √उद्+घाटय्—उद्घाटयेत्—खोलना, खोल देगी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१३१ परिणिऊणं = परि + √नी + क्त्वा—तूण—विवाह कर ; होण्हसु = √ग्रह् + लोट + मध्य पुरुष एक वचन—ग्रहण करना ; दविणजायं = द्रविण + जातम्—धन समूह को, संचित समस्त धन को, वसिमम्मि = वसिम + म्मि—वास स्थान—निवास स्थान पर। वसिम देशी शब्द है, इसका अर्थ निवास स्थान है।

१३२–१३३ आसासिओ = आश्वासितः — आश्वासन दिया—सान्त्वना दी ; पेयभूमीए = प्रेतभूमौ—श्मशान भूमि में। सद्दो = शब्दः —आवाज।

१३४ निज्झाइऊण = नि + √ध्यै + क्त्वा—निज्झा + तूण—निझा-इऊण—देखकर, अवलोकन कर ; सुइरं = सुचिरम्—बहुत समय तक ; विम्हिओ = विस्मितः—आश्चर्य चकित हुआ ; नियहियएणं = निज + हृदयेन—अपने मन से, अपने हृदय में ; मयणस्स = मदनस्य—कामदेव की, सव्वस्स = सर्वस्व—सब कुछ, सार या साररूप।

१३५ पुट्ठो = पृष्टः—पूछा ; आयायो = आयातः—आये हो ; पउत्ती = प्रवृत्तिः—समाचार, हाल-चाल ; सोउं = श्रुत्वा—सुनने के लिए, दुमिया = दूना—पीड़ित, संतापित, दुःखी। हियए = हृदये—हृदय में, मन में।

१३६ महुरवयणं = मधुवचनं—मधुर वचन, पायालमन्दिरं = पाताल मन्दिरं—तलघर को ; गुरुगउरवेण = गुरु + गौरवेन—अत्यधिक सम्मान के साथ, दिन्नं = दत्तम् ; पवरासणं = प्रवर + आसनम्—श्रेष्ठ आसन को।

१३७ सप्पणयं = स + प्रणयम्—नम्रता पूर्वक, विनय सहित ; विउल-धणनिवहं = विपुल + धन + निवहं—विशाल धन समूह ; तुम्हायत्त = त्वदायत्त—तुम्हारे आधीन, तुम्हारे अधिकार में, विलस—आनन्द कीजिये, विलास कीजिये ; सुच्छन्दम् = स्व + छन्दम्—स्वतन्त्रता पूर्वक।

१३८ पयडेउं = प्रकटीकृत्य—दिखलाकर, प्रकट करके ; वासहरं = वासगृहम्—शयनगृह को—सोने के कमरे को ; वीसमसु = विश्रम—विश्राम करो ; सयणिज्जे = शयनीये—शय्या या विस्तर पर ; आणेमि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

=आ+√नी + मिप्—लाती हूँ, विलेवणं=विलेपनं—मल्हमादि सुगन्धित पदार्थ—प्राचीन समय में सुगन्धि पदार्थों का विलेपन तय्यार किया जाता था।

१३९ विणिग्गया=विनिर्गता—चली गयी ; नीइसत्थं=नीति+शास्त्रम्—नीति शास्त्र को ; अप्पणो=अप्प+ण—अपने।

१४० माया=माया—मायाचार, धोखा देना ; अलियं=अलीकं—असत्य वचन, मूढत्तं=मूढत्वम्—मूर्खता ; असोयत्तम्=अशौचत्व—अपवित्रता ; निस्संसया=नृशंसता—क्रूरता, दुष्टता, कठोरता ; सहावया=स्वभावजा—स्वभाव से उत्पन्न ; स्वाभाविक।

१४१ घेप्पइ=√ग्रह्+ति—कर्मणि में √ग्रह् के स्थान पर घेप्प आदेश होता है और वर्तमानकाल प्रथम पुरुष एक वचन में इ प्रत्यय जोड़ने से घेप्पइ रूप वनता है। सुसिणेहिं=सु+स्नेहैः—स्नेह पूर्वक ; विज्जा=विद्या—ज्ञान ; चाडुसयसहस्सहिं= चाटुशतसहस्रैः—सैकड़ों प्रकार की खुशामदों से।

१४२ खरकोमलवयण= खर+कोमल+वचन—खर-तेज कोमल वचन, वहवि=विभव—धन-सम्पत्ति ; दुगेज्झ=दुर्ग्राह्य—ग्रहण करना कठिन, दुर्ग्राह्य, आयरेण=आदरेण—आदर से। अओ=अतः—इसलिए।

१४३ जुवइवग्गे=युवति+वर्गे—युवतियों में ; सब्भावं=सद्भावं—सद्भाव को—स्वभाव को; मयणमोहिय=मदनमोहित—कामदेव से मोहित—मुग्ध, वासना से युक्त व्यक्ति, दुत्तरदुक्खसमुद्दे=दुस्तरदुःख-समुद्रे—दुस्तरदुःख समुद्र में ; निवडइ=निपतति—गिर जाता है।

१४४ सयणतलं=शयनतलम्—शैया, या विस्तर को, अन्नपए-से=अन्य प्रदेशे—अन्य स्थान में ; ठविऊण=स्थापयित्वा—√स्था—√ठव+तूण (ऊण)—रखकर ; पडिरूवं=प्रतिरूपं—अपनी आकृति को

१४५ उवरिं=उपरिं—ऊपर ; जंतप्पओगेण = यन्त्र+प्रयोगेन—यन्त्र प्रयोग द्वारा—मशीन से ; मुक्को=मुक्तः—छोड़ी, गिरायी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१४६ चुण्णियं = चूर्णितम्—चूर-चूर किया ; पहिट्ठ = प्रहृष्टः—प्रसन्न ; पहास = प्र√भाष्—बोलना ; पाव = पाप ; भाउय = भातृकः—भाई के ; वहन्तो = √वध् + शानच्—वह + न्त—वध करनेवाले—अत्तणो = अपन को।

१४७ पहाविय = प्रधावित दौड़ा या झपटा ; तयाहुत्तं = तद् + आहुत्तम्—उसकी ओर। आहुत्त देशी शब्द है—ओर।

केसकलावे = केश + कलापे—बालों के जूड़े को।

१४८ सक्कइ = शक्नोति—समर्थ है ; सुबुद्धिविहवेण = सुबुद्धि + विभवेन—बुद्धि के प्रभाव से ; जग्गइ = जागता है, परछट्ठिं—दूसरे की छुट्ठी के दिन—जन्म से छठवें दिन जब भाग्य विधाता भाग्य का निर्माण करता है, तब जो दूसरे के यहाँ जाग सकता है, वह व्यक्ति क्या अपने यहाँ—नियछट्ठीए—अपनी छट्ठी में—अपने घर में होनेवाली छट्ठी में, किं—क्या, सुवइ = सोयेगा।

१४९ वसुमइभवाउ = वसुमति भवनात्—वसुमति के भवन से ; रत्तोवि = अनुरक्त—आसक्त होने पर भी, अइविरत्तो = अतिविरक्तः—अत्यन्त विरक्त, तीए—उसके ; कूरचरियेहिं = क्रूर + चरितैः—क्रूर—निर्दय चरित से।

१५० साह = √कथ, हय = हत—मार दिया ; आणिया = आनीता—ले आया।

१५१ पायालहरं = पातालघरम्—तलघर को ; बीयदिणे = द्वितीय-दिने—दूसरे दिन में, रित्थं = रिक्थम्—धन को, समाप्पियं = समर्पितम्—समर्पित किया।

१५२ तुट्ठेणं = सन्तुष्टेन—सन्तुष्ट ; निययधूयं = निजदुहिताम्—अपनी कन्या को ; कमला इव—लक्ष्मी के समान ; सयलजणदइया = सकलजनदयिता—समस्त लोगों के लिए प्रिय।

१५३ वरगामाण = वरग्रामानाम्—श्रेष्ठ ग्रामों को, सहस्सं = सहस्रम् हजार ; सयं = शतम्—सौ, गइन्दाण = गजानां—हाथियों को ; विउल-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भंडारं = विपुलभाण्डारम्—विपुल—अधिक - भाण्डार—खजाना; पइक्काणं = पदातीनाम्—पदलों की, लक्खं = लक्षम्—लाख; तुरयाणं= तुरंगानाम्—घोड़ों को; दससहस्साइं = दसन् + सहस्राणि—हजार।

१५४ लद्धजसो = लब्ध + यशो—प्राप्त यश, यशस्वी; जणमणनयणाण = जन + मन + नयनाम्—लोगों के मन और नेत्रों को; पूण्णिमाचन्दो = पूर्णिमाचन्द्रः—पूर्णिमा का चन्द्रमा; जिस प्रकार पूर्णिमा का चन्द्रमा लोगों के मन और नेत्रों को आनन्दित करता है, उसी प्रकार आनन्दित करनेवाला।

चिरदिट्ठवालाए = चिर + दृष्ट + वालाया—बहुत पहले देखी हुई नारी से। जओ = यतः—क्योंकि; परलोयचिंतणे = परलोकचिन्तने—परलोक के विचार करने में; जा = यावत्—जब तक; विवेयजियहरा = विवेक + जीव + हरा—विवेक—विचारशीलता और प्राणों को हरण करनेवाली। मयणस्स = मदनस्य—कामदेव के, सर—वाण; पहुप्पन्ति = प्र + √भू + अन्ति—समर्थ होते हैं या पहुँचते हैं।

१५६ मयणायत्तो = मदन + आयत्तः—कामदेव के वशीभूत—कामाभिभूत; वरविलया = वर + वनिता—सुन्दर नारी।

१५७ दिन्नासणोवविट्ठा = दत्त + आसन + उपविष्टा—दिये हुए आसन पर बैठी, आगयासि = आगतासि = आयी हो; अहप्पियं= अभिप्रायम्—अभिप्राय को।

१५८ अवहियहियओ = अवहित + हृदयः—सावधन हृदय—सावधान मन होकर; पट्ठविया = प्रस्थापिता—भेजी हूँ, भेजी गयी हूँ।

१५९ गुरुविरहजलणतवियाए = गुरु + विरह + ज्वलन + तप्तताया = अत्यधिक विरहाग्नि से सन्तप्त ने; संगमजलेणं = संगम + जलेन—संयोगरूपी जलसे—संयोग के द्वारा।

१६० वहणं = वधनम्—मारना; दुट्ठत्थीपरिहरणं = दुष्टस्त्रीपरिहरणं—दुष्टस्त्री को वश कर लाने की वात को; नरवइपमुहेण = नरपति + प्रमुखेन—प्रमुख राजा आदि से।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१६१ साहुक्कारं=साधुचारम्—प्रशंसा साधुवाद को; अहियविम्हियमणा=अधिक+विस्मित+मनसा—अधिक आश्चर्य चकित मन से; आश्चर्य चकित हो; जीयं पि—जीवमपि—प्राणों को भी, दंसणसमुस्सुया =दर्शन+समुत्सुकया—दर्शन प्राप्त करने की उत्सुकता से; किच्छेण =कृच्छेण—कष्ट पूर्वक या कठिनाई से।

१६२ दाउं=दत्त्वा—देकर, हत्थट्ठियम्=हस्त+स्थितम्-हाथ में स्थित, तंबोलं=ताम्बूलम्—पान को; दूइत्थी=दूती+स्त्री—समाचार लानेवाली स्त्री, दूती स्त्री को; सिणेहसारेहि=स्नेहसारैः—स्नेह के सार रूप—प्रेमिल; वयणेहिं=वचनैः—वचनों से, वचनों के द्वारा।

१६३ कुसले=कुशले—चतुरा; पभणसु = प्र+√भण्+सु—कहो, कइ वि=कत्यपि—कुछ; पत्थावं-प्रस्तावं—अवसर या सौभाग्य को, लहिऊणं = √लह—लभ्—तूण लब्ध्वा—प्राप्त कर; सत्थं= स्वस्थं—ठीक या अच्छा।

१६४ करहारूढो=करभ+आरुढः—ऊँट पर सवार; समागया —समागता—आये; पविसमाणा=प्रविश्+माना—प्रविष्ट होते हुए, प्रवेश करते हुए; हिट्ठमणा=हृष्ट+मनस्—प्रसन्न चित्त।

१६५ आलिंगिउं=आलिङ्ग+क्त्वा—आलिङ्गन कर, सहरिसं =सहर्षम्—हर्ष सहित। प्रसन्नता पूर्वक; अम्मापियरस्स=अम्बा +पितुः—माता-पिता की; कुसलपउत्ति=कुशल+प्रतिपत्तिम्—कुशल समाचार को, कुशल-क्षेम को; ससिणेहं=सस्नेहम्-स्नेहपूर्वक; परिपुट्ठम् = परिपृष्टम्—पूछा, पमुक्कघणअंसुनिवहेण=प्रमुक्त+घन+ अश्रु+निवहेन—अत्यधिक आँसुओं को गिराते हुए; रोते हुए।

१६६ विरहमहागहेण=विरह+महा+ग्रहेन—विरहरूपी महा ग्रह से, विरह की पीड़ा से, गहियम्=गृहीतम्—गृहीत, ग्रस्त।

१६७ कइवयदिणाण = कतिपय + दिनानाम्—कुछ दिनों के, मज्झे=मध्ये—उपरान्त या मध्य में; निच्छएणं=निश्चयेन—निश्चय से; विमुक्कजीवाण=विमुक्त+जीवानाम्—प्राणों को छोड़कर; वच्चिहिसि=

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

√वज्—वच्च—भविष्यत्—चले जायेंगे।

१६८ निसामिऊण = नि + √शम् + ल्यप्—तूण निशम्य—सुनकर; सज्जावेऊण = √सज्जाव + तूण—सज्जावयित्वा—सजाकर; नियय खंधारं = निजक + स्कन्धावारम्—अपनी सेना को।

१६९ समीवाओ = समीपात्—निकट से; उस्सुय = उत्सुक—उत्सुक या उत्कण्ठित।

१७० तायपासम्मि = तातपार्श्वे—पिता के पास में; नियपरिवारसमेओ = निजपरिवारसमेतः—अपने परिवार सहित; नियत्तेसु = नि + √वृत्—वर्तमान + मध्यम पुरुष एक वचन—लौट आना।

१७१ संमाणेऊण = सम्मानयित्वा—सम्मान—आदर-सत्कार करके; नियधूयाए = निज + दुहितृ + षष्ठी एकवचन—अपनी कन्या के। प्राकृत में दुहितृ शब्द के स्थान पर धूया आदेश होता है और षष्ठी के एक वचन में यह रूप बना है।

१७२ संजत्ति—तैयारी। यह देशी शब्द है। दावावेउं = √दापय्—दापयित्वा—देने या देकर; पयाणयं = प्रयाण—कम्—प्रयाण या प्रस्थान को; सिविरं = शिविरम्—पड़ाव को, सेना का पड़ाव या छावनी। एगरहेणं = एकरथेन—एक रथ से।

१७३ जामिणी = यामिनी—रात्रि; दूई = दूती; जाणणट्ठाए = ज्ञापन + अर्थाय—जानने के निमित्त।

१७४ अम्हाण = अस्माकम्—हमारा, पविसियं = प्रविष्टम्—प्रविष्ट हो गया; एगागी = एकाकी—अकेला।

१७५ आणसु = आ + √नी + सु—ले आओ; लहु = लघु—शीघ्र; समीहियकज्जं = समीहितकार्यम्—इच्छित कार्य।

१७६ तुरियतुरियं = त्वरित त्वरितम्—बहुत शीघ्र; नियसामिणीय = निज + स्वामिनी + षष्ठी एक वचन—अपनी स्वामिनी को, साहइ = कथयति—कहती है।

१७७ रहससमुच्छलियबहलरोमञ्चा = रभस + समुच्छलित + बहल +

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रोमाञ्चाः—रहस—उत्कण्ठा से अत्यधिक रोमाञ्चित हुई। संचलिया = सं० + √चल् + शत्—चली। सुसहिसहाय = सु + सखी + सहाय—अपनी प्रिय सखी के साथ।

१७८ जाणे=याने—रथ पर, आरूहसु = सवार हो।

१७९ चोइऊण = चोअ + तूण—चोदयित्वा प्रेरणा करके, हाँक करके, चलाकर; रज्जुं—रस्सी को, वामहत्थेण=वामहस्तेन—बायें हाथ से, नीहरिउं = √नहीर—निःसृ—रवाना हो, निययकडयम्मि = निजक + कटके—अपनी सेना में।

१८० पयाणढक्का=प्रयाण + ढक्का—प्रयाण कालीन भेरी; दवाविया—दापिता—बजवायी, दिलवाया; पत्तमेत्तेण = प्राप्तमात्रेण—जितनी जल्दी आया, उतनी ही जल्दी—पहुँचते ही। सुसंजत्तिं—अच्छी तैयारी को। समत्थं=समस्तम्—सभी।

१८१ अणवरयपयाणेहि = अनवरतप्रयाणैः—निरन्तर प्रयाण द्वारा—निरन्तर चलने से; भुवणपालस्स = भुवन + पालस्य—राजा के, विसयं = विषयं—राजधानी या देश को; लंघेवि—लांघकर; महा-अरण्णे = महारण्णे—घने जंगल में; सावयतरुसंकुले = श्वापद + तरु + संकुले - जंगली हिंसक पशु और वृक्षों से व्याप्त; भीमे=भीमे—भयंकर, खतरनाक।

१८२ अइविसममहादुमसंकुलम्मि =अति + विषम + महा + द्रुम + संकुले—अत्यन्त विषम बड़े-बड़े वृक्षों से युक्त; सव्वजणाणन्दयरो = सर्वजनान्दकर - समस्त लोगों को आनन्दित करनेवाला; पाउसकालो = प्रावृट्काल—वर्षा ऋतु; समणुपत्तो=समनुप्राप्तः—आया।

१८३ मणहरकाले = मनोहरकाले—सुहावने समय में; भिल्लसामि—भिल्ल+स्वामिन्—भिल्लों का मुखिया; पडिओ = पतितः आप्त—झपटा।

१८४ वलदप्पिएण = वल + दर्पितेन वल के कारण अहंकार से—पवणेण = पवनेन – वायु से; घणवन्दं = घन + वृन्दम्—बादल समूह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिस प्रकार वायु से बादलों का समूह छिन्न-भिन्न हो जाता है, उसी प्रकार ; पक्खित्तं = प्रक्षिप्तम्—फेंक दी—तितर-वितर कर दी गई ; चउ = चतुर्—चारों, दिसासु = दिशासु—दिशाओं में ।

१८५ सन्दणेणं = स्यन्दनेन—रथ से, सहिओ = सहितः—सहित ; नियपणइणीए = निज + प्रणयिणी + षष्ठी एक वचन—अपनी पत्नी के ; रणमज्झे = रणमध्ये—युद्ध में ; थक्को = स्थितः—डटा रहा ; स्थित रहा, स्थित ; हरीव्व—सिंह के समान ; मायङ्गजूहस्स = मातंग + यूथस्य—हाथियों के समूह के ।

१८६ बाणावलिपहयं = बाण + आवलि + प्रहतम—बाणों के समूह से आहत । अन्नन्नदिसिपलाणं = अन्य + अन्य + दिश् + पलायितम्—अन्यान्य दिशाओं में भाग गये । गन्धगयस्सेव = गन्ध + गजस्य इव—गन्धवाले हाथी के समान ; करिजूहं = करियूथम्—हाथियों के समूह को । गन्धगज की यह विशेषता होती है कि उसकी गन्ध से अन्य हाथी भाग जाते हैं । बताया है—

यस्य गन्धं समाघ्राय न तिष्ठन्ति प्रतिद्विपाः ।
स वै गन्धगजो नाम नृपतेर्विजयावहः ॥

१८७ पलायमाणं = पलायमानम्—भागती हुई ; निट्ठुरं = निष्ठुरम्—क्रूररूप से, अक्कोसन्तो = आ + √क्रुश् + शतृ—चिलाता हुआ ; सवडंमुहो—सामने । यह देशी शब्द है, इसका अर्थ सम्मुख या सामने है ।

१८८ पक्खिवन्ति = प्रक्षिपन्ति—फेंकते हैं या चलाते हैं ; छलिज्जइ—छलता है, धोखा देता है, निउणत्तणओ = निपुणत्व + कः—चतुराई या निपुणता के कारण ; धणुव्वेए = धनुर्वेदे—धनुर्वेद में, धनुष चलाने की कला में ।

१८९ ता = तावत्—तबतक ; तओ = ततः—इस पर । पवञ्चेण = प्रपञ्चेन—प्रपञ्च से ; छलेण = छलेन—छल से ; मन्ततन्तजोएण = मन्त्र-तन्त्र + योगेन—मन्त्र-तन्त्र के प्रयोग द्वारा ; पडिवक्खो =

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रतिपक्षः—शत्रु ; नीईए =नीत्या—नीति से ; सक्केज्ज =√शक समर्थ होना चाहिए।

१६० धणुगुणसत्थेसु =धनुर्गुणशस्त्रेषु—धनुष तथा अन्य शस्त्रों के चलाने में ; लद्धमाहप्पो =लब्ध+माहात्म्य—प्राप्त माहात्म्य ; उवायं =उपायं—प्रयत्न को।

१६१ पिया = प्रिया ; कुणसु = करु—करो, सिंगारं = शृगारं—शृंगार को, उवविससु = उप+ √विश्+वर्तमान+मध्य पु०+एक व०—बैठो, बैठ जाओ ; रहस्स = रथस्य—रथ के ; तुण्डम्मि = तुण्डे—मस्तक पर, ऊपर के भाग पर।

१६२ रूवसंपन्नं = रूप+संपद्—रूपसम्पत्ति को, सुन्दरता को ; पवरं = प्रवरं—श्रेष्ठ, दिट्ठिं =दृष्टिं—दृष्टि को, निवेसइ = √निवेशम्+ति, लगता है, निविष्ट—करता है।

१६३ नीलुप्पणपत्तसरिच्छएण = नील+उत्पल + पत्र + सदृक्ष—नीलकमल के पत्तों के समान ; आरासुहेण =आरा+सुखेन—वाण की नौंक से, तेज नौंकवाले, वाणेणं =वाण से ; वच्छत्थलम्मि = वक्षस्थले—वक्षस्थल या छाती में।

१६४ मम्मपएसम्मि = मर्मप्रदेशे—मर्मस्थल में, मर्मस्थल के अंग में। ईसिं =ईषत्—थोड़ा सा ; वियसिय=विकसित—प्रसन्न, नयणो—नयनों से—प्रसन्न नेत्रों से।

१६५ कुसुमाउहस्स =कुसुमायुधस्य—कामदेव के; चोज्जम्—आश्चर्य—यह देशी शब्द है ; इसका अर्थ होता है आश्चर्य।

१६६ पयंपिऊण =प्रलापयित्वा - कहकर ; कालगओ = कालगतः—मृत्यु को प्राप्त हुआ ; पलोएइ = √पलोय—प्रलोक+ति—देखता है।

१६७ सेवयपुरिस=सेवक+पुरुषः—सेवक या नौकर, वरसुहड= वर+सुभट—श्रेष्ठ योद्धा ; आहुत्तं - सामने, सम्मुख। यह देशी शब्द है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१६८ गोउल=गोकुल ; कहकहवि=कथकथमपि—जिस किसी तरह से ; गावीनिवहेण=गो+निवह—गाय समूह से।

१६६ दो पुरिसा=द्वौ+पुरुषौ—दो व्यक्ति।

२०० वच्चिहिसि=√व्रज्—वच्च+भविष्य+म० ए०—जाओगे; कत्थ=कुत्र कहां।

२०१ जइ=यदि, सुपसाओ=सुप्रसादः—सुविधा या उचित ; सत्थेणं=सार्थेन—साथ द्वारा या साथ में।

२०२ पडिवज्जिऊण=प्रतिपद्य—स्वीकार कर ; जोएइ=योजयति—जोड़ता है, युक्त करता है ; रहे=रथे—रथ में ; तुरए=तुरगान्—घोड़ों को ; जा=यावत्—जब तक ; ता=तावत्+तव, तब तक ; सत्थिल्लयपुरिसा=सार्थिक+पुरुषाः—साथी ; साथवाले व्यक्ति।

२०३ एएणं=एतेन—इस ; मग्गेण=मार्गेण—मार्ग से ; अईव=अतीव—अधिक ; कन्तारं=कान्तारं—वन, चण्डो=चण्डः=भयानक, क्रोधी, प्रबल, उग्र।

२०४ मयमत्तो=मद+मत्तः—मदोन्मत्त ; गलगज्जि=गल+गर्जि—गले की गर्जना—गर्जना को ; अइविसम=अति+विषमः—बहुत खतरनाक ; दिट्ठीविसो=दृष्टि+विषः—जिसको दृष्टि—आँखों में ही विष हो अर्थात् जिसके देखने मात्र से ही विष का प्रभाव व्याप्त हो जाय। दृष्टि विष नाम का सर्प बहुत ही भयंकर होता है, इसका डँसना तो अलग रहा ; बल्कि देखने मात्र से ही व्यक्ति का प्राणान्त हो जाता है। सप्पो=सर्पः—साँप।

२०५ सावयगणा=श्वापद+गणा—जंगली हिंसक प्राणियों का समूह ; मंसासिय=मांस+आशिकः—मांसाहारी ; दुप्पेच्छ=दुष्प्रेक्ष्य—देखने में भयानक।

२०६ पयत्त=प्रवृत्त—प्रवृत्त हुए ; पहम्मि=पथि—मार्ग में।

२०७ निसम्मिऊणं=नि+√शम्+ल्यप्—सुनकर ; मुक्कभयपसरा=मुक्त+भय+प्रसराः—भय के प्रभाव से रहित ; संचलिया=

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संचलिता—चले ।

२०८ दीहजडामउडभूसियसरीरो=दीर्घ+जटा+मुकुट+भूषित+शरीरम्—लम्बी-लंम्बी जटाएँ और मुकुट से भूषित शरीर ; भसमुद्ध-लियगत्तो=शरीर पर भस्म लगाये हुए ; तिसूलचक्केण=त्रिशूल+चक्रेण—त्रिशूलचक्र से ; सनाहो=सनाथः—युक्त ।

२०९ पडिचारयपरिचरिओ=प्रतिचारक+प्ररिचरितः—अनुयायियों द्वारा सेवित—सेवा या परिचर्या किया जाता हुआ । पिच्छिय-लिंगेण=पिच्छिका+लिङ्गेन—पिच्छिका रूपी चिह्न से ; वावडकरग्गो=व्यापृत+कराग्रः—हाथ व्यस्त था ; तेयंसी=तेजस्विन्—तेजस्वी, सुपसत्थ=सुप्रशस्तः— प्रशंसनीय ; श्लाघनीय, श्रेष्ठ ; महवइओ=महाव्रतिकः—महाव्रती—साधु ; संन्यासी ।

२१० सुसत्थेण=सु+सार्थेन—सत्संगति से ; तित्थं=तीर्थम्—तीर्थ के ; दंसणनिमित्तं=दर्शन+निमित्तम्—दर्शन के लिए, दर्शनार्थ ।

२११ दीणारा=दीनाराः—सोने का सिक्का ; यह प्राचीन भारत में आज के पाँच रुपये के बराबर होता था । वलिपूयणत्थदिन्नं=बलि+पूजन+अर्थ+दत्तम्—वलि—नैवेद्य और पूजन आदि के सम्पादनार्थ दी गयी हैं । धम्मियनरेहिं=धार्मिक नरैः—धार्मिक—पवित्राचरण करनेवाले व्यक्तियों के द्वारा ।

२१२ महायस=महायशस्वी—लब्धप्रतिष्ठ ; निब्भय=निर्भय—भय-रहित ; दविणनिवहो=द्रविण+निवहः—धन समूह ।

२१३ ताहे=तदा—उस समय ; परितुट्ठो=परितुष्टः—सन्तुष्ट, प्रसन्न हो ; आसीसं=आशिस्—आशीर्वाद, कवडकयवेस=कपट+कृत+वेशः—कपट का वेष बनाकर ।

२१४ सरूवं=स्वरूपम्—स्वरूप को, समं=समम्—साथ, परिणामे=परिणामे—परिणाम, फल—अन्त में, सुन्दरं=सुन्दर—अच्छा ।

२१५ परिभाविऊण=परि+√भू+तूण—विचार या अनुभव कर ; पयट्ट=प्रवृत्त—चला ; गहणदेसम्मि=गहन+देशे—बन के घने प्रदेश में ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२१६ महव्वइएणं=महाव्रतिकेन—महाव्रती ने ; अज्ज=अद्य—आज ; पाहुणयं=प्राघुण्यकम्—अतिथिसत्कार ; सव्वहा=सर्वथा ।

२१७ गोउलमेगं=गोकुलमेकम्—एक गोकुल, पभूयधगनिवहं=प्रभूतधननिवहं—बहुत धन से परिपूर्ण ; वरिसालो=वर्षाकालः—वर्षाकाल—चातुर्मास ; आवन्तेणं=√आतादम+न्त+टा—इन्द्रियों का दमन करते हुए ।

२१८ मए=मया—मैंने ; गोउलिया = गोकुलिका — गोकुल निवासी, ग्वाले ; आवज्जिया=आवर्जिजता—जीते लिये ; वशीभूत ; नियगुणेहिं=निजगुणैः—अपने गुणों से ; भोज्जं=भोज्यम्—भोज ; पाहुण=प्राघूर्ण—अतिथि ।

२१९ निमन्तिऊणं=निर्मान्त्रित्वा – निमन्त्रण देकर ; पायसघयदहियाणं=पायस+घृत+दधिक+षष्ठी बहुवचन—दूध, घी और दही के ; भरिऊण=√भृ+तूण—भरकर ; भण्डए=भाण्डान्—वर्तनों को ।

२२० हियइच्छियनिव्वुइं=हृदय+इच्छित+निवृर्ति—अभीष्ट—हृदय इच्छित निवृर्ति को—इच्छा की पूर्त्ति को ; कुणसु=कुरु—करो ।

२२१ गुरुवियणा=गुरुवेदना—अधिक दर्द ; मज्झ—मेरे ; उत्तमङ्गम्मि=उत्तमाङ्गे—उत्तम शरीर—मस्तक में—सिर में ; वट्टइ=वर्तते हैं । अन्नं=अन्यं—दूसरी बात ; जईण=यतीनाम्—संन्यासियों के ; भोयणं=भोजनं—भोजन को, खाद्य पदार्थों को, कप्पए=कल्प्यते उचित होता है ; नेव=न+एव—नहीं ।

२२२ दिट्ठिसन्ना=दृष्टि+संज्ञा—आँख के इशारे से, भोत्तव्वं=भोक्तव्यम्—भोजन करना चाहिए ; समाणिय=समानीत—लाया गया ; भत्त=भक्त—भोजन, खाना ।

२२३ अवगण्ण=अव√गण्—तिरस्कार या अस्वीकार कर ; भुंजियमेत्त=भुक्त+मात्र—भोजन करते ही ; निच्चेयणा=निश्चेतना—निर्जीव, चेतना रहित, जाया=जाता—हो गये ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२२४ जममन्दिरं =यममन्दिरं—मृत्यु को, यमराज के घर को ; पवन्न =प्रपन्न—प्राप्त हुए, पहुँचे ; मेल्लन्तो =√मुच्+न्त—छोड़ते हुए ; सरनिवहं =बाण समूह को, पहाविओ =प्रधावितः—दौड़ा।

२२५ सकोवेणं =क्रोध सहित, वञ्चिऊण =वञ्चयित्वा — बचाकर, वेएण =वेगेन—शीघ्रता पूर्वक ; अद्धयन्देणं =अर्धचन्द्रेण—अर्धचन्द्राकार बाण से।

२२६ पयंपए =प्र+√जल्प+ते—कहता है, एयं =इदं—यह ; दुज्जओ =दुर्जन—कठिनाई से जीता जानेवाला।

२२७ तए =त्वया—तुमने या तुम्हारे द्वारा ; रंजियं =रंजितम्—प्रसन्न किया, महाभाग =महाभाग—महानुभाव, बड़े भाग्यवाले महाशय ; वाणघाएणं =बाणघातेन—बाण के आघात से ; जीवियसेसो =जीवितशेषः—मरणासन्न अवस्था।

२२८ आयण्णसु =आ+√कर्णय्+सु—सुनो ; गिरिस्स =गिरेः—पर्वत के, वामपासम्मि =वामपार्श्वे—बायीं ओर ; सरियाण = सरितानां—नदियों के ; देवउलं =देवकुलं—देवमन्दिर।

२२९ पच्छिमभाए =पश्चिमभागे—पश्चिम भाग में ; तलिणसिला =तलिन+शिला—एक छोटी चट्टान : सज्जिया =सज्जिता—बनायी, तैयार की गयी, व्यवस्थित की गयी ; सुजत्तेणं =सुप्रयत्नेन—अच्छे प्रयत्न से ; पेल्लिऊण =प्रेरय्+त्वा—पेल्ल+तूण—धक्का देकर, वामे =वामे—बायीं ओर, पविसेसु—प्रविष्ट होओ, प्रविष्ट होना।

२३० पवररूवगुणकलिया =प्रवररूपगुणकलिता—सुन्दर रूप और गुणों से युक्त ; नवजोव्वणा =नवयौवना—युवती, विणीया =विनीता विनीत, नम्रस्वभाववाली, सरला—सीधे स्वभाववाली।

२३१ रित्थं =रिक्थम्—धन ; अप्पायत्तम् =आत्म + आयात्त—अपने आधीन।

२३२ कट्ठाणि =काष्ठानि—लकड़ियों का चयन कर—चिता बना कर ; गयम्मि जीयम्मि =प्राण निकलने पर—मृत्यु हो जाने पर ; देसु

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

—अग्नि देना।

२३३ दाससमूहे=लकड़ियों के समूह, मेलिय—एकत्रकर, हुयवहो =हुतवहः अग्निः - अग्नि, आरुहिउं =चढ़कर ; पवररहं =प्रवररथम —श्रेष्ठ रथ पर।

२३४ जहाभणिओ =यथा + भणितः—कहे अनुसार। दोसरियाणं दो नदियों के मध्य ; उग्घाडिऊण—उघाड़ कर, खोलकर ; दारं = द्वारं—द्वार को।

२३५ सहसागन्तूण=सहसागत्य—सहसा आकर। दारदेसम्मि= द्वारदेशे—द्वार पर ; कोइलमहुरसरेणं=कोकिलमधुस्वरेण—कोयल के समान मधुर स्वर से।

२३६ पेच्छेवि=√दश—पेच्छ + एवि—देखकर। अपभ्रंश में सम्बन्धक कृत प्रत्यय एवि होता है। अतः इस प्रत्यय के जोड़ देने पर पेच्छेवि पूर्वकालिक क्रिया का रूप वनता है। अवहत्थेणं=अपहस्तेन —हाथ ऊँचा करके—ऊँचे हाथ से, हओ=हतः—मारा।

२३७ बंधुपियासहियाओ=वन्धु + पितृ + सख्यः—बन्धु-भाई, पिता और सखियों को ; चत्तं=व्यक्तं—घोड़ा, अलज्जिर=अलज्जनशीलः—निर्लज्ज, अन्न=अन्य ; प्रसत्त=प्रसक्त—संलग्न या आसक्त, असि—हो।

२३८ निसुणेवि=निश्रुत्य—सुनकर। अपभ्रंश के प्रभाव के कारण यहाँ √निसुण से एवि सम्बन्धक कृत् प्रत्यय जोड़ा गया है ; जिससे निसुणेवि रूप बना है। वज्जेवि=वर्जयित्वा—छोड़कर। इस प्रयोग पर अपभ्रंश का प्रभाव है। वणं=वनम्—यहाँ वन शब्द का प्रयोग जंगल के अर्थ में नहीं है, वल्कि लकड़ी और घास की बनी झोपड़ी अथवा जंगली घर के लिए आया है। अग्गओ=अग्रतः—आगे ; ताहे=तदा—उस समय।

२३९ केत्तियमेत्तं=कियन्मात्रम्—कुछ परिमाण ; सुहेणं=सुखेनं सुख पूर्वक ; नासन्तं=नश्यत्—विनाश करते हुए ; सवरसंघायं=

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शवरसंघातम्—भिल्ल के समूह को।

२४० भयतसिए = भयत्रस्त—भय से त्रस्त, आतंकित, वणयराण =वनचराणाम्—वनेचरों के, संघाए—समूह को ; मयकरिणा—मदोन्मत्त हाथी ; होयव्वं = भवितव्यम्—होना चाहिए।

२४१ तद्दिसाहुत्तं—उस दिशा की ओर। आहुत्तं—ओर—यह देशी शब्द है। ससिसंखकुंदधवलं = शशि + शंख + कुन्द + धवलम्—चन्द्रमा, शंख और कुन्द पुष्प के समान श्वेत—सफेद।

२४२ पज्झरियमयपवाहं = प्रक्षरितमदप्रवाहं—मदप्रवाह जिससे झर रहा है, ऐसा ; मोडन्तं = मोटयत्—तोड़ता हुआ, तरुवरे—वृक्षों को, महाकाये = महाकाय—बड़े, विशाल ; खणेणं = क्षणेन—क्षण भर में, उव्विग्गा = उद्विग्ना—उद्विग्न, व्याकुल, घवड़ायी।

२४३ मा वीहसु = मा भीः—डरो मत, मुद्धि—मुग्धे—भोली-भाली, रण्णकलहाओ = अरण्य + कलभात—जंगली हाथी से ; गरुयाण = गुरुकानाम्—बड़े या महान् व्यक्तियों को ही, संपया = संपद—वैभव, विभूति ; आवया = आपद् —विपत्ति, दुःख; कष्ट ; हयरपुरिसाणं = हतरपुरुषाणाम्—दुष्ट या नीच पुरुषों को।

२४४ अवयरिओ = अव + √तृ उतरा, नीचे आया ; रहवराउ =रथवरात्—श्रेष्ठ रथ से ; तुरियं = त्वरितम्—शीघ्र ही, गन्तूण = गत्वा—जाकर, उत्तरीयं = चादर को, पक्खित्तं = प्रक्षिप्तम्—फेंका, झत्ति =झटिति—शीघ्र ही।

२४५ मयंग = मातंग—हाथी ; छोहं = आघात—यह देशी शब्द है। उत्तरिज्जम्मि = उत्तरीये—चादर में ; सुदक्खो = सुदक्षः, झडत्ति =झटिति—शीघ्र ही, आरुहइ = आरोहति—चढ़ता है, खन्धम्मि = स्कन्धे—पीठ पर।

२४६ णेगवणयरकयन्तो = अनेक + वनचर + कृतान्तः—अनेक वनेचरों के लिए यमराज के समान ; सवसो = स्ववशः—अपने आधीन ; अहि व्व = अहि इव—सर्प के समान ; मणिमन्तजोएण = मणि-मत्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

+योगेन—मणि और मन्त्र के संयोग से।

२४७ अवइण्णा =अवतीर्णा—नीचे आया ; नियदइयाए =निज-दयितायाः—अपनी पत्नी को।

२४८ अद्धाणतड =अध्वत्+तट—सड़क के किनारे।

२४९ उद्धुसियकेसरसड =उद्धुषित+केशर+सढ — उसके बाल केसर के समान चमकदार ; अप्फालिय =आस्फलित, वसुहदीहलंगूलं =पृथ्वी तक लटकती हुई सूंघ ; समुहं =सम्मुखम्—सामने।

२५० सज्जेउं =सज्जयित्वा—सजाकर साधकर ; रोद्दकमं =रौद्र+क्रमं—क्रोधित पदों को—भयंकर आक्रमण को, वग्घो =व्याघ्रः—बाघ, जा =यावत्—जब तक, देइ =√दा+इ—देता है। नियकर-पहारं =निजकरप्रहारम्—अपने पंजे का प्रहार ; वेंटियवत्थो =वेष्टित-वस्त्र—कपड़ा लपटे हुए, हत्थो =हस्तः—हाथ, छूढो =क्षिप्तः—डाला।

२५१ दाहिण =दक्षिण—दाहिना, पहओ =प्रहतः—प्रहार किया ; असिघेणुयाए =असिधेनुकायाः—छुरे के, खन्धम्मि =स्कन्धे=कंधे पर ; गाढपहारेण =गढप्रहारेण—गंभीर प्रहार से ; धसत्ति—एकाएक, शीघ्र ही ; महिमण्डले =महिमण्डले—चोकोर भूमि पर—पृथ्वी मण्डल पर।

२५२ निज्जिऊण =निर्जित्य—जीतकर, वशकर, लंघेइ—पार किया, थोवयं =स्तोकम्—थोड़ा, पेच्छइ =√दृश्—पेच्छ+इ—देखता है ; अद्धाणे =अध्वाने—मार्ग में ; संठियं =संस्थितम्—बैठे हुए।

२५३ अलिउलकज्जलवण्णं =अलिकुल+कजल+वर्णम्—भौरों के समान काले वर्णवाले ; फणिमणिकिरणोहभासुरसरीरं =फण+मणि+किरण+ओघ+भासुर+शरीरम्—फण पर स्थित मणि के किरण समूह से उसका शरीर प्रकाशित था ; दोजीहं =द्विजिह्वं—दो जीभ ; रत्तच्छं =रक्ताक्षं—लाल आँखें, धमणी व =धमनीव—धमनी—भाथी के समान ; पमुक्कफुक्कार =प्रमुक्त+फूत्कार—सांस छोड़ते हुए।

२५४ सवडमुहं—देशी शब्द है—सीधा, सामने या ओर ; उवेन्तं =उप+√इ+शतृ—आते हुए, दट्ठूण =दृष्ट्वा—देखकर ; गुरुभय-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कम्पियदेहा = गुरु + भय + कम्पित + देहा—अधिक भय से कांपती हुई ; लग्गा = लग्ना—लगी या चिपटी ; कंठम्मि = कण्ठे—गले में।

२५५ उत्तिणो = उत्तीर्णः—उतरा, सन्दणाउ = स्यन्दनात्—रथ से, सुहडो = सुभटः—योद्धा ; आवन्तस्स = आ + √इ अथवा या + शतृ + षष्ठी एक वचन—आते हुए, फणिणो = फणिनः—सर्प के ; विहिओ = विहितः—किया, गईथम्भो = गतिस्तम्भः—गमन को रोका—चलने को रोका—अवरुद्ध किया।

२५६ मुहथम्भं = मुखस्तम्भम्—मुख को स्तम्भित—क्रियाशून्य कर ; खेल्लावेऊण = क्रीडापयित्वा—खेल कराके, छड्डिओ = छर्दितः—छोड़ दिया ; संजोइया = संयोजिता—जोड़ा, हांका, तय्यार किया।

२५७ किच्छेण = कृच्छेन—कष्ट से या कष्ट पूर्वक ; कहवि = कथमपि किसी तरह ; नरयसारिच्छं = नरक + सदृक्षम्—नरक के समान ; संतोसियनयरिजणनिवहो = संतोषितनगरिजनविवहः - नगरी की जनता को सन्तुष्ट किया।

२५८ वरविहियवत्थसोहाउलम्मि = वर + विहित + वस्त्र + शोभा + आकुल—सुन्दर वस्त्रों द्वारा सजावट की गयी, वस्त्रों द्वारा की जानेवाली सजावट में व्यस्त ; जणमणनयणानन्दो = जनमननयनानन्दः—लोगों के मन और नेत्रों को आनन्दित करता हुआ, दाणं = दानं—दान; दिन्तो = ददत्—देता हुआ ; पविट्ठो = प्रविष्टः—प्रविष्ट हुआ।

२५९ जणणीजणएण = जननी + जनकेन—माता पिता ने ; गरुयने—हेणं = गुरुकस्नेहेन—अत्यधिक स्नेह से ; आलिंगिओ = आलिङ्गितः आलिंगन किया, सहरिसं = सहर्षम्—हर्ष सहित, पणमिओ = प्रणमितः—प्रणाम किया ; ताहे = तदा—तब।

२६० भोयणावसाणे = भोजन + अवसाने—भोजन के अन्त में ; देसन्तराण = देशान्तराणाम्—देशान्तरों का, अन्य देशों का, वुत्तन्तं = वृत्तान्तम्—समाचार, घटना, जा = यावत्—जब, पत्तो = प्राप्तः—पहुँचा ; नियभवणम्मि = निजभवने—अपने घर में—भवन में।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२६१ सुहसंगमेण = सुखसंगमेन—सुखपूर्वक साथ से; संजाय-परमतोसाणं = संजात + परम + तोष + षष्ठी विभक्ति बहुवचन—परम संतोष उत्पन्न हुओं का—अत्यन्त सन्तुष्टों का; रज्जसुहं = राज्यसुखं—राज्यसुख को, भुञ्जमाणाणं—भोगते हुए।

२६२ कामुयलोयाण = कामुकजनानां—कामी व्यक्तियों के, विलासियों के; हिययआणंदे—हृदय को आनन्दित करनेवाला; बहुपउरपरियरजुओ = बहु + पौर + परिकर + युतः—बहुत पुरवासी और परिकर—सेवकों से युक्त; उवगओ = उपगतः—गया।

२६३ सुहिजणपरिवारिओ = सुहृदय + जन + परिवारितः—मित्रजनों से सहित, पुरनारिपलोइरूवसंपओ = पुर + नारी + प्रलोकित + रूप + संपद्—नगर की महिलाओं ने उसकी रूप सम्पत्ति देखी—नगर महिलाओं ने उसके सौन्दर्य को देखा।

२६४ बहुहासतोसवीणाविणोयवरनट्टगेयकव्वेहिं = बहु + हास + तोष + वीणा + विनोद + वर + नाट्य + गेय + काव्यैः—बहुत हंसी, सन्तोष, वीणा विनोद, श्रेष्ठ नाट्य, गीत और काव्य आदि के द्वारा; कीलइ = क्रीडति - क्रीड़ा करता है, पमुइयचित्तो = प्रमुदितचित्तः—प्रसन्नचित्त।

२६५ अवरण्हे = अपराह्णे—दोपहर के उपरान्त, अपराह्ण समय में; रमिऊणं = रन्त्वा—रमण कर, आनन्द कर; राया = राजा, वि = अपि—भी; सयलपरिवारसंजुओ = सकलपरिवारसंयुतः—समस्त परिवार सहित।

२६६ विसज्जिय = विसर्जित—छोड़ या रवानाकर, जाव = यावत् जब तक, रहवरं = रथवरं—श्रेष्ठ रथ के पास, डक्का = दष्टा—डंस लीं, उरगेण = उरगेन—सर्प ने, उग्गेण = उग्रेन—भयानक।

२६७ हाहारवं = हाहा + रवं—हाहाकार करता हुआ; रव—शब्द; विलवन्ती = √वलप् + न्ती—विलाप करती हुई; कम्पन्तसयलगत्ता—काँपते हुए समस्त शरीर से, पडिया = पतिता—गिर गई, गिरी; उच्छङ्गे = उत्सङ्गे—गोद में।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२६८ मा वीहेहि = मा विभेसि—मत डरो, भयभीत हो, कुवलय-दलच्छि = कुवलयदलाक्षि—कमलपत्र के समान नेत्रवाली ; विसहर = विषधर—सर्प के ; विसमप्पभवं = विषम् + अप्रभावम्—विष के प्रभाव से रहित, निर्विष, विष प्रभाव से रहित, निमेसमेत्तेण = निमिषमात्रेण—पलभर में, क्षणभर में ; काहामि = करिष्यमि—कर दूँगा।

२६९ मुहुत्तमेत्तेण = मुहूर्त्त + मात्रेण—मुहूर्त्त भर में ; विसमविस-पीडियंग = विषम + विष + पीडित + अंग—विषम—भयंकर, विषकी वेदना से व्यथित अंग—शरीर ; निच्चेयण = निश्चेतन—निर्जीव।

२७० जीवियमुक्क = जीवित + मुक्त—जीवन से रहित, प्राण रहित; मोहमावन्न = मोहम् + आपन्न—मोह को प्राप्त ; विलव = √विलप्—विलाप करना, करुणसर = करुण स्वर—करुणोत्पादक स्वर में ; हाहा-कारेविमुंच = हाहाकारान् विमुच्—हाहाकार को करते हुए।

२७१ संवर = सं + वृ—रोककर ; रय = √रच्—व्यवस्था ; चिता; उयरम्मि—उदरे—चिता के मध्य में, उसके मृतशरीर—लाश को रखा।

२७२ पज्जालिऊण = प्रज्वाल्य—जलाकर ; जलणं = अग्नि—अग्नि को ; अत्ताणं = आत्मानम्—अपने को ; गयणाओ = गगनात्—आकाश से : खयरजुयलं = खचर + युगलं—दो विद्याधर।

२७३ सुकोमल—अत्यन्त कोमल ; किमकारणेण—अकारण क्यों ; खिवसि = √क्षिप + सि—डालते हो। संपत्तमेत्तएण = संप्राप्तमात्रेण—आते ही।

२७४ खणमेत्तेण = क्षणमात्रेण—क्षणमात्र में ; सत्थसरीरं = स्वस्थ शरीरं—स्वस्थ शरीर—नीरोग, निर्विष ; पहया = प्रहृता—छींटे दिये ; अहिमन्तियजलेण = अभिमन्त्रितजलेन—मन्त्रित किये गये जल से।

२७५ निद्दाखए = निद्राक्षये—नींद टूटने के, व्व = इव—समान, बुद्धा—जाग्रत हो ; संवरेवि = संवृत्य—सँवर + एवि—सँवरण करके—संभाल कर ; अपभ्रंश का प्रभाव होने से एवि कृत् प्रत्यय जोड़ा गया है। पसयच्छी = पसय + अक्षि—पसय देशी शब्द है, इसका अर्थ हिरण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। पसयच्छी पद का अर्थ बड़ी आँखें भी है। इस अर्थ के लिए पसय= प्रसृत—बड़ी व्युत्पत्ति से सिद्ध है। उट्ठिया=उत्थिता-उठी।

२७६ उट्ठावेऊण =उत्थाप्य—उठाकर; उप्पइय =उत्पतित—उड़ गये; गयणमग्गम्मि=गगनमार्गे—आकाशमार्ग में।

२७७ अइतमन्धपउराए=अति+तमस्+अन्ध+प्रचुर+सप्तमी एक वचन—अन्धकार के अति घने और अधिक बढ़ने पर; पच्चासन्ने =प्रत्यासन्ने—निकटवाले, देवयउलम्मि=देवकुले—देवमन्दिर में।

२७८ दइया=दयिता—पत्नी को, पसन्नवयणेणं=प्रसन्नवदनेन— प्रसन्न मुख से।

२७९ नियत्तो=निवृत्त—लौटा; उज्जोय=उद्योत—दीप प्रज्वलित किया; मणचमक्कारं=मनस्+चमत्कारं—मन को आश्चर्यचकित करनेवाला।

२८० सासङ्कमाणसेणेवं=साशङ्कामनसा एवं—आशंकित मन से इस प्रकार।

२८१ हत्थट्ठियस्स=हस्तस्थितस्य-हाथ पर स्थित, जलणस्स= ज्वलनस्य—दीपक का; संकन्तो=संक्रान्तः-प्रतिबिम्बित।

२८२ महिनिहियजाणुजुयलो=महि+निहित+जानु+युगलः— पृथ्वी पर दोनों घुटनों को टेक कर; अहोमुहो=अधोमुखः—नीचे को मुखकर—अधोमुख, धमइ=धमति—आग को सुलगाता है।

२८३ हत्थाउ=हस्तात् हाथ से; कोसपरिहीणं=कोश+परिहीनम् —कोश—म्यान से रहित; अइगरुयनिहाएणं=अति+गुरुक+निघा- तेन—बहुत बड़े धक्के से, वडियं=पतितं—गिरी; देवउलसिलापट्टे= देवकुल+शिला+पट्टे—मन्दिर के शिलापट्ट पर।

२८४ संभन्तो=संभ्रान्तः—घबड़ाकर; सरलसब्भावो=सरल+ सद्भावः—सरल स्वभाव; कोसविप्पमुक्कं=कोशविप्रमुक्तम्—म्यान से रहित।

२८५ मणमोहो=मनस्+मोहः—मन की व्याकुलता से; उच्छ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लिय = उच्छलित — उछला, चंचल हुआ ; परव्वसाए = परवशात् — परवश होने से, करवालं = करवाल — तलवार ; नवरि — केवल, मात्र, इसी प्रकार।

२८६ जालेवि = √ज्वालय् — जाल + एवि — जलाकर ; वोलिऊण = गमयित्वा — √गम् + त्वा — वोल + तूण — विताकर। √गम् के स्थान पर प्राकृत वोल आदेश होता है। गोसम्मि = प्रातःकाल में — गोस शब्द देशी है, इसका अर्थ प्रातःकाल है। साणन्दहिययाइं = सानन्द + हृदयानि — प्रसन्नता पूर्वक।

२८७ बन्धवसुहिसयणाणं = वान्धव + सुहृद् + स्वजन - वन्धुवर्ग, मित्र और स्वपरिवार की ; पउत्ती = प्रवृत्तिः — घटना, समाचार ; निव्विसेस = निर्विशेष — समस्त, सारी, वास्तविक ; रहसवसुल्लसिय-हियएणं = रभस + वश + उल्लसित्त + हृदयेन — रहस — उत्कण्ठा, वश — आधीन-उल्लसिय — उल्लसित - प्रसन्न, हर्षित, रोमाञ्चित, हियएण — हृदय से।

२८८ हिययसमीहियविलाससत्ताणं = हृदय + समीहित + विलास + सक्तानाम् — हृदय से इच्छित — अभीष्ट, विलास — शृंगार चेष्टाओं में आसक्त उन दोनों का ; विसयसुहं = विषय + सुखं — विषय सुख, सेव-माणाणं — सेवन करते हुए।

२८९ अन्नया कयाई = अन्यदा कदाचित् — अन्य किसी समय या एक समय विवरीयसिक्खतुरयं = विपरीत + शिक्षा + तुरगम् — गलत चाल शिक्षित घोड़े को; परिवाहइ = परि + √वाहय् + ति — क्रीड़ा करता है, सवारी करता है, हाँकता है, चलाता है ; वाहियाली = वाह्याली · अश्व खेलने की जगह, घोड़ों को चाल सिखाने का मैदान।

२९० दुट्ठहरिणा = दुष्टहरिणा — दुष्ट घोड़े द्वारा, दुष्ट घोड़े ने, उव्वा-हरिऊण = उद् + वि + आ + हृ + ल्यप् — उव्वाहर + तूण — ले जाकर ; लोयपच्चक्खं = लोकप्रत्यक्षं — लोगों के सामने, अइविसमे = अतिविषमे — अत्यन्त भयंकर या खतरनाक; तावसनिवासे = तापसनिवासे —

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तपस्वियों के निवास स्थान पर।

२९१ परिभममाणेण—घूमने से या परिभ्रमण करने से; जिणहरं =जिनगृहम् - जिनमन्दिर या जिनालय; चरणसमणो = चरणश्रमणः — आकाश में चलने की शक्ति रखनेवाले मुनि; बहुमुणिगणाइण्णो = बहु + मुनिगण + आकीर्णः - बहुत से मुनियों के समूह से व्याप्त।

२९२ गहनक्खत्ताणं = ग्रह + नक्षत्राणाम्—ग्रह और नक्षत्रों के ससहरो = शशधर :—चन्द्रमा, व्व = इव— समान; रयणाण = रत्नानाम्—रत्नों के मध्य; कोत्थुहमणि व्व = कौस्तुभ मणि के समान; कप्पदुमो = कल्पद्रुमः —कल्पवृक्ष; तरूणं = तरुणाम्—वृक्षों के; देवाण = देवानाम्—देवों के; सहस्सनयणो व्व = सहस्र-नयन — इव —इन्द्र के समान। इन्द्र को एक हजार नेत्र होने से सहस्रनयन भी कहा जाता है।

२९३ सोमयाए = सोम्यताया - मनोहरता या दीप्ति में; खन्ती = क्षान्ति - क्षमा या सहनशीलता, दित्तिए = दीप्तौ - दीप्ति में - तेज में; मित्तो = मित्रः — सूर्य; वम्महो = कामदेवः—कामदेव; निम्मलचउनाण-संपन्नो = निर्मल + चतुर्ज्ञानसम्पन्नः — निर्मल चार ज्ञान से युक्त; मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनपर्ययःज्ञान और केवल ज्ञान ये पाँच ज्ञान होते हैं। इनमें से उस मुनिराज को चार ज्ञान थे।

२९४ विज्जावसदिट्ठविस्सववहारो = विद्यावश + दृष्ट + विश्व + व्यवहारः — अपने ज्ञान के बल से विश्व के समस्त कार्य व्यापारों को जानने-देखनेवाला; बोहेन्तो = √बोधय् + शतृ —बोधयन् - समझाता हुए, ज्ञान देता हुआ; भवियजणे = भव्यजनान्—भव्यजीवों को; निम्मलधम्मोवएसेणं = निर्मलधर्मोपदेशेन — निर्मलधर्मोपदेश द्वारा।

२९५ लद्धासीसो = लब्धाशिषः - आशीर्वाद प्राप्त कर; पासम्मि = पार्श्वे—पास में।

२९६ लहिऊण = लब्ध्वा—प्राप्त कर, अवसरं—अवसर या मौका; साहसु = कथय—कहिये। √कथ्—के स्थान पर साह आदेश हुआ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है और मध्यपुरुष एक वचन में सु प्रत्यय जोड़ने से 'साहसु' रूप बना है। सकोउओ = सकौतुकः—उत्सुकतावश, कौतूहल सहित, जिज्ञासावश।

२६७ पहु = प्रभु—स्वामी ; जोव्वणलायण्णरूवपडिहत्था = यौवन + लावण्य + रूप + पडिहत्था—यौवन, लावण्य और रूप से परिपूर्ण। 'दडिहत्थ' यह देशी शब्द है, इसका अर्थ पूर्ण, भरा हुआ या परिपूर्ण है। वेरग्गमग्गपडिया = वैराग्य + मार्ग + पतिता—वैराग्य मार्ग में पड़े हुए—विरक्त हुए ; वयगहणं = व्रतग्रहणं – व्रत ग्रहण करना।

२६८ नाणिणा = ज्ञानिना—ज्ञानी द्वारा या ज्ञानी ने। विसमपल्ली = विषम + पल्ली—विसम—अगम्य या भयंकर, पल्ली—गाँव, वस्ती ; भुंजइ = √भुज + ति—शासन करता है; वलवन्त = वलवन्तः – वलवान्।

२६९ अह = अथ—अनन्तर। हयगयरहजोहसुहडपरियरिओ = हय + गज + रथ + योध + सुभट + परिचरितः—घोड़े, हाथी, रथ, पैदल सेना से युक्त—चतुरंगिणी सेना सहित—घुड़सवार, गजसवार, रथसवार और पैदल सिपाहियों के सहित।

३०० हयविहय = हतविहत – नष्ट-भ्रष्ट, क्षत-विक्षत ; तक्खणेण = तत्क्षणेन—उसी समय, आढत्त = आरब्ध—आरम्भ हुआ ; वलवइणा = वलपतिना—सेनानायक से ; सरिसो = सदृशः—समान।

३०१ भिडिया—भिड देशी शब्द है, इसका अर्थ भिड़ना या मुठभेड़ करना है। महइं वेलं = महतीं वेलाम्—बहुत समय तक, लम्बे समय तक ; तीरए = √तीर—शक्—समर्थ हुए।

३०२ ता = तावात्—तब, तीए = तस्याः—उसके, उवरि = उपरि—ऊपर ; दिट्ठी—दृष्टि, वम्मह—कामदेव, हरिएण – हरण करने से—पेसिया = प्रेषित—डाली, लहिऊण = लब्ध्वा—प्राप्त कर ; छिद्दं = छिद्रं—कमजोरी को पाकर ; मम्मे = मर्मे – मर्मस्थान पर।

३०३ वहिऊण = घातमित्वा – वधकर, मारकर ; भिल्लनाहं = भिल्लनाथम्—भिल्लराज को ; पवसिओ = प्र + √वस्—प्रोषित—यात्रा के लिए रवाना हुआ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३०४ जीयविमुक्कं=जीवविमुक्तं—प्राणरहित, दट्ठुं = दृष्ट्वा—देखकर ; जेट्ठं = ज्येष्ठं—बड़े को ; रहमग्गेण—रथ के मार्ग से—रथ जिस रास्ते से गया था, उसी रास्ते से ; अमरिसवसफुरफुरंतोट्ठा = अमर्षवश-स्फुरन्तोष्ठाः—क्रोधवश फड़कते हुए होठ ; चलिया=चलिता—चले ।

३०५ जोयन्ता=√दृश्+शतृ—देखते हुए ; मारणे=मारने के लिए ; छिड्डुं=छिद्रं—कमजोरी को, कमी को ।

३०६ मुक्कसयलपरिवारो=मुक्तसकलपरिवारः—समस्त परिवार से रहित, एगागी=एकाकी—अकेला ।

३०७ वहणोवायं=वधनोपायं—मारने का उपाय ; किलिट्ठपरिणामा=क्लिष्टपरिणामा—संक्लेशपरिणाम, बुरे परिणाम ; दट्ठा=दष्टा—डंसी ।

३०८ गयजीयं=गतजीवं—प्राण रहित ; नाऊणं=ज्ञात्वा—जान कर ; सत्थीकया=स्वस्थीकृता—स्वस्थ कर दी ।

३०९ मोत्तूण=मुक्त्वा—छोड़ कर ; चइऊण=त्यक्त्वा—छोड़कर । जलणस्स=ज्वलनाय—अग्नि लाने के लिए ।

३१० लद्धछला=लब्धछला—छल प्राप्त कर ; गरुयत्तोसमावन्ना =गरुक+तोषम्+आपन्ना—अत्यधिक सन्तोष प्राप्त हुए - सन्तुष्ट हुए । वहणकरणुज्जयमणा=वधन+करण+उद्यत+मनसा—वध करने के प्रयास की इच्छा से ; पच्छन्ना=प्रच्छन्ना—छिपे हुए ; तत्थ=तत्र—वहाँ ।

३११ कणिट्ठेणं=कनिष्ठेन—छोटे भाई ने, छोटे भाई के द्वारा ; चिरगोवियदीवओ=चिर+गोपित+दीपकः—चिरकाल से छिपाये हुए दीपक ; समुग्गाओ=समुद्गात्—डिब्बे से ; पयडीकओ=प्रकटीकृतः—प्रकट किया—निकाला ; सुरमन्दिरमज्झयारम्मि=सुरमन्दिरमध्ये—देवमन्दिर में ।

३१२ दीवुज्जोएण=दीपकोद्योतेन—दीपक के प्रकाश से ; बालाइ =बालया—स्त्री के द्वारा—मदनमंजरी के द्वारा ; ताण=तेषाम्—उनका ; लहुभाया=लघुभ्राता—छोटा भाई ; अइनेहनिब्भराए=स्नेह-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निर्भरया—स्नेह से भरे हुए ; सोमदिट्ठीए = सौम्यदृष्ट्या—प्रेमिल दृष्टि से, प्रेम पूर्वक ; पलोइओ = प्रलोकितः—देखा ।

३१३ वुत्तो = उक्तः—कहा ; तीए = तया—उसने, उसके द्वारा ; सुयणु = सुतनु—सुन्दर शरीर, भत्तारो = भर्ता—पति ; जइ तं अन्नं झायसि—यदि तुम अन्य प्रकार सोचोगे ; ता = तावत्—तो ; से = तस्य, उसका ; नासेमि = नाशयामि — विनाश करूँगी—जीयं पि = जीवमपि—प्राणों को भी ।

३१४ इच्छामहं = इच्छामि + अहं—मैं भी चाहता हूँ, तुह = तव —तुम्हारा ; भत्ता = पति, जइ = यदि ; जाणइ = जानेगा, तो; णत्थि = नहीं है, मह —मेरा, जीयं = जीवम्—प्राण, जीवन । तओतीए भणियं— इसपर उसने कहा ।

३१५ सुहय = सुभग—सुन्दर ! नियदइयं = निजदयितम्—अपने पति को, वावाइस्सामि = व्यापादयिष्यामि—मार डालूँगी, मार दूँगी ; तुज्झ = तव—तुम्हारे ; पच्चक्खं = प्रत्यक्षं—सामने ; पजम्पिऊणं = प्र + √जल्प् - पजंप + तूण - कहकर ; पईवओ = प्रदीपकः—दीपक ; झंपिओ —ढक दिया । झँप देशी शब्द है, इसका अर्थ ढकना होता है ।

३१६ वण्हिं = वह्निं—अग्नि को ; छेत्तूण = ग्रहीत्वा—ग्रहण करके ; झत्ति = झटिति - शीघ्र ही, उज्जोओ = उद्योतः—प्रकाश ।

३१७ करगहियस्स = करग्रहीतस्य—हाथ में लिए हुए ; जलियजलणस्स = ज्वलितज्वलनस्य—प्रज्वलित या जलती हुई अग्नि का ; देवउले संकन्तो— देवमन्दिर में प्रतिबिम्वित ।

३१८ समप्पिऊणं = समर्प्य—हाथ में देकर ; दीवेइ = दीपयति— प्रज्वलित करता है, हुयवयं = हुतवयं—अग्नि को ; कड्ढिय √कड्ढ—कृष् (आ)—कृष्य ; गीवाए = ग्रीवायां—गर्दन पर ; मुञ्चए—छोड़ती है ; पहरं = प्रहारं—आघात को ।

३१९ एएण = एतेन—इस, करुणमइणा = करुण + मत्या— दयाबुद्धिवाले ने ; अवहत्थेऊण = अपहस्त्य—हाथ का धक्का देकर ;

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाडियं=पातितम्—गिरा दी। सहोयराणं=सहोदरान्—भाइयों को, सिट्ठं=शिष्टम्—कहा; इत्थीए = स्त्रियः—स्त्री का, सुविचित्तं= सुविचित्रं—अत्यन्त विचित्र—विलक्षण; चरियं=चरितं—चरित्र।

३२० तयं=तत्—उसे; विलसियम्=विलसितम्—कार्यों को; अइदारुणं=अति+दारुणं—अत्यन्त भयंकर; निरावेक्खं=निरपेक्षं—अपेक्षरहित—निरीहभाव से; वेरग्गसमावन्ना=वैराग्य+समापन्ना—वैराग्य भाव को प्राप्त; समागया=समागता—आये हैं।

३२१ आयण्णिय = आकर्ण्य—सुनकर; संभन्तो = संभ्रान्तः—घवड़ाया; पेच्छ—देखो।

सच्चमेयं=सत्यमेतत्—यह सत्य है।

३२२ गंगाए=गङ्गायाः—गंगा की; वालुयं=वालुका—वालू; हिमवओ = हिमवतः—हिमालय का; महिलाहिययं = महिलाहृदयं—महिलाओं के हृदय को।

३२३ खणदिट्ठनट्ठविहवे=क्षण+दृष्ट+नष्ट+विभवे—क्षणभर में नष्ट होनेवाला वैभव; खणपरियट्टन्तविविहसुहदुक्खे=क्षण+परिवर्तमान+विविध+सुहव+दुःखे—क्षण भर में परिवर्तन होनेवाला सुख-दुःख के रूप में; खणसंजोगविओगे=क्षय संयोगवियोगे—क्षणभर में संयोग वियोग के रूप में वदलनेवाले संसार में, कत्तो=कुतः—कहाँ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi